हदीस प्रभा

इस्लामी जीवन-शैली पर आधारित

(प्रामाणिक हदीसों का संग्रह)

मौलाना जलील अहसन नदवी (रह०)

अनुवाद

अब्दुल हक़ फ़लाही

नज़रसानी

नसीम ग़ाज़ी फ़लाही

विषय-सूची

विषय	पृष्ठ

विषय	पृष्ठ

विषय	पृष्ठ

विषय	पृष्ठ

विषय	पृष्ठ

विषय	पृष्ठ

विषय	पृष्ठ

विषय	पृष्ठ

विषय	पृष्ठ

विषय	पृष्ठ

विषय	पृष्ठ

विषय	पृष्ठ

सांकेतिक शब्दार्थ

संक्षिप्त रूप में इस्तेमाल कुछ ऐसे शब्द इस किताब में आएंगे, जिनकी मुकम्मल शक्ल और मतलब किताब के अध्ययन से पहले जान लेना ज़रूरी है, ताकि अध्ययन के दौरान कोई परेशानी न हो। वे शब्द निम्नलिखित हैं :

अलैहि०/अलै० : इसकी मुकम्मल शक्ल है, **अलैहिस्सलाम** यानी 'उन पर सलामती हो ! नबियों और फरिश्तों के नाम के साथ यह आदर और प्रेम सूचक शब्द बढ़ा देते है।,

रज़ि० : इसका पूर्ण रूप है, **रज़ियल्लाहु अन्हु** इसके मानी हैं, 'अल्लाह उनसे राज़ी हो ! **सहाबी** के नाम के साथ यह आदर और प्रेम सूचक दुआ बढ़ा देते हैं।

सहाबी उस ख़ुश क़िस्मत मुसलमान को कहते हैं, जिसे नबी (सल्ल०) से मुलाक़ात का मौक़ा मिला हो। **सहाबी** का बहुवचन **सहाबा** है और स्त्रीलिंग **सहाबियः** है।

रज़ि० अगर किसी **सहाबियः** के नाम के साथ इस्तेमाल हुआ हो तो **रज़ियल्लाहु अन्हा** पढ़ते हैं और अगर **सहाबा** के लिए आए तो **रज़ियल्लाहु अन्हुम** कहते हैं।

सल्ल० : इसका पूर्ण रूप है, **सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम** जिसका मतलब है, 'अल्लाह उन पर रहमत और सलामती की बारिश करे !' हज़रत मुहम्मद (सल्ल०) का नाम लिखते, लेते या सुनते हैं तो आदर और प्रेम के लिए दुआ के ये शब्द बढ़ा देते हैं।

बिसमिल्लाहिर्रहमानिर्रहीम

"अल्लाह के नाम से जो बड़ा मेहरबान, निहायत रहमवाला है।"

दो शब्द

इस्लाम को तफ़्सील से समझने और सही मायनों में उसकी पैरवी का हक़ अदा करने के लिए अल्लाह के आख़िरी रसूल हज़रत मुहम्मद (सल्ल०) के काम और उनकी बातें (कथन) जिन्हें 'हदीस' कहा जाता है, से वाक़िफ़ होना बहुत ज़रूरी है। इसके बिना ख़ुद क़ुरआन मजीद को भी सही ढंग से नहीं समझा जा सकता। क़ुरआन की तरह हदीस की मूल भाषा भी चूंकि अरबी है, और अरबी जानने वाले बहुत थोड़े लोग हैं, अत: बाक़ी सभी लोगों को इस बड़ी नेमत का बोध कराने के लिए इसके सिवा और कोई रास्ता नहीं कि दूसरी ज़बानों में इसका तर्जुमा कराया जाए।

यह किताब जो आप के हाथों में है, इसी प्रकार की एक मुबारक कोशिश का नतीजा है। इसमें सैकड़ों उनवानात (शीर्षकों) के तहत ऐसी चुनींदा हदीसों को मुनासिब ढंग से जमा कर दिया गया है जो इंसान और इंसानी समाज के लगभग सभी पहलुओं को अपने अंदर समेट लेती हैं।

हदीसों के इस मजमूए (संग्रह) का चयन करने, उनका संपादन करने और (उर्दू में) उनका अनुवाद करनेवाले भारत के मशहूर आलिमे-दीन (इस्लामी विद्वान) मौलाना जलील अहसन नदवी हैं। मरहूम एक ज़बरदस्त आलिमे-दीन की हैसियत से तो मशहूर थे ही, एक क़लमकार के रूप में भी वे मशहूर थे। वे अरबी भाषा के ऊँचे दर्जे के साहित्यकार थे और उर्दू भी बड़ी अच्छी लिखते थे। यह किताब उनकी क़ाबिलियतों का एक ज़िन्दा सुबूत है। हदीसों के तर्जुमे न केवल यह कि बिल्कुल सही और अर्थपूर्ण हैं बल्कि आसान और धारा-प्रवाह भी हैं। इस वजह से वे प्रभावी भी हैं और आसानी से समझ में आनेवाले हैं। तर्जुमे के साथ-साथ जहाँ ज़रूरत महसस हुई, संक्षिप्त व्याख्या भी कर दी गई है।

हदीस की इस किताब में हदीसों के अलावा कुछ जगहों पर नबी (सल्ल०) के प्यारे सहाबा (रज़ि०) के कथनों का भी उल्लेख हुआ है, जिन्हें परिभाषा में 'आसारे-सहाबा' कहते हैं। सहाबा (रज़ि०) चूँकि जो कुछ कहते थे, वे नबी (सल्ल०) की शिक्षाओं की रोशनी में ही कहते थे, इसलिए उन कथनों की भी बड़ी अहमियत है।

ज़रूरत है कि यह किताब हमारे तालीमी इदारों के निसाब में दाख़िल की जाए, मस्जिदों, दीनी इजतिमाओं और हमारे हर घर में इसे पढ़ा-पढ़ाया जाए।

हदीस की यह किताब उर्दू में 'सफ़ीना-ए-नजात' के नाम से प्रकाशित हुई है। इसी उर्दू किताब का यह हिन्दी तर्जुमा 'हदीस प्रभा' के नाम से पेश करते हुए हमें बेहद ख़ुशी हो रही है, इस पर हम ख़ुदा का शुक्र अदा करते हैं।

अल्लाह से दुआ है कि वह इस किताब को आम लोगों के लिए मुफ़ीद बनाए और इसका संकलन और प्रकाशन मौलाना मरहूम के लिए और उन सब लोगों के लिए आख़िरत का तोशा बनाए जिन्होंने इस किताब के प्रकाशन में योगदान दिया है।

—प्रकाशक

परिचय

मौलाना जलील अहसन नदवी

(1913-1981 ई०)

मौलाना जलील अहसन नदवी भारतीय उपमहाद्वीप के एक प्रतिष्ठित इस्लामी विद्वान, क़ुरआन-हदीस के मर्मज्ञ, अरबी भाषा एवं साहित्य में पारंगत, कुशल लेखक, आदर्श शिक्षक, बेहतरीन प्रशिक्षक, और अत्यन्त मृदु भाषी थे। लेखनशैली धाराप्रवाह की थी। वे आकर्षक एवं ओजस्वी व्यक्तित्व के मालिक थे। वे एक संयमी, ईशपरायण, मानव प्रेमी, ग़रीबनवाज़ और उदार व्यक्ति और इस्लाम के सच्चे प्रचारक एवं इस्लामी आंदोलन के सजग सदस्य थे।

उनका नाम 'जलील' था तो उनकी शख़्सियत भी जलील (महान) थी। आभा मंडल से तेज और जलाल टपकता था, मगर यह जलाल 'अहसन' (उम्दा) था, उसमें लेश-मात्र को भी दंभ या अंहकार न था। मतलब यह कि उनके व्यक्तित्व में जलाल और जमाल का सुंदर सामंजस्य था। शारीरिक रूप से विकलांग और मधुमेह से पीड़ित थे, मगर मानसिक रूप से अत्यंत स्वस्थ और हृष्ट-पुष्ट थे। पंद्रह महीने में उन्होंने पूरा क़ुरआन कंठस्थ कर लिया था।

सन् 1913 ई० में आज़मगढ़ ज़िले (उ० प्र०) के एक ग़रीब मगर सम्मानित एवं धार्मिक परिवार में उन्होंने आंखें खोलीं। बचपन ही में वे यतीम हो गए। इसी दौरान लक़वे ने उन्हें विकलांग बना दिया मगर ग़रीबी, यतीमी और शारीरिक अक्षमता उनके मार्ग में बाधा न बन सकी। अपने कठोर परिश्रम और कड़ी जिद्दोजुहद के बल पर वे निरंतर शैक्षिक सोपान चढ़ते चले गए। मक्तब, मिडल और फ़ारसी की शिक्षा से लेकर स्नातक (अरबी, इस्लामी शिक्षा) के लिए उन्होंने मदरसतुल-इस्लाह सरायमीर, नदवतुल-उलमा लखनऊ, दारुल उलूम देवबंद, जैसे इस्लामी शिक्षा के विश्व प्रसिद्ध केन्द्रों में अपने समय के नामी गिरामी विद्वानों से ज्ञान प्राप्त किया। तत्पश्चात वे आजीवन अध्ययन एवं अध्यापन के कार्य में व्यस्त रहे। मदरसा इशाअतुल उलूम और मदरसा मिस्बाहुल उलूम बरेली, मदरसतुल-इस्लाह सरायमीर, सानवी दर्सगाह रामपुर, जामिया काशिफ़ुल-उलूम चित्रपुर (हज़ारी बाग़), जामियतुर्रशाद आज़मगढ़, जामिया दारुल-हुदा हैदराबाद और जामियतुल फ़लाह आज़मगढ़ जैसे इस्लामी शिक्षा के उच्च संस्थान मौलाना मरहूम की कर्म भूमि रहे। उनके शिष्यों में विशेष रूप से वे लोग सम्मिलित हैं जो आज देश में इस्लामी आन्दोलन का नेतृत्व कर रहे हैं।

मौलाना जलील अहसन नदवी को जो सम्मान, आदर और प्रतिष्ठा प्राप्त हुई वह क़ाबिले-रश्क है। जमाअत इस्लामी की स्थापना के आरंभिक दिनों (1942) में ही वे उससे जुड़ गए थे तथा उसके अरबी विभाग (दारुल अरूबा) पठानकोट और फिर जालंधर में रहकर मौलाना मौदूदी की कुछ पुस्तकों का अरबी में अनुवाद किया। बरेली और आज़मगढ़ में उन्होंने जमाअत की निज़ामत की ज़िम्मेदारी भी संभाली। भारत-पाक की बहुचर्चित इस्लामी पत्र-पत्रिकाओं में उनके दीनी, दावती लेख छपते रहे। हदीस के उनके कई उर्दू संग्रह लोकप्रिय हुए। 'राहे-अमल', 'ज़ादे-राह' और 'सफ़ीना-ए-नजात' उर्दू के इस्लामी साहित्य में अपना विशेष स्थान रखते हैं। प्रस्तुत पुस्तक 'हदीस प्रभा' मौलाना की इसी अंतिम सर्वाधिक लोकप्रिय पुस्तक 'सफ़ीना-ए-नजात' का हिन्दी अनुवाद है। मौलाना के कुछेक उर्दू निबंधों का संकलन 'नुक़ूश व तास्सुरात' उनके क़ुरआन-ज्ञान एवं जमाअत के आरंभिक दौर की प्रमाणिक दस्तावेज़ है। 'तदब्बुरे-क़ुरआन पर एक नज़र' क़ुरआन पर मौलाना की गहरी पकड़ और पैनी नज़र का ज्वलंत प्रमाण है।

5 रमज़ानुल मुबारक 1401 हिजरी तदनुसार 8 जुलाई 1981 ई० को क़ुरआन ही पर विचार-मंथन करते हुए रोज़े की हालत में उन्होंने संसार से विदा ली।

—अब्दुल हक़ फ़लाही

नई दिल्ली

22 मुहर्रम 1429 हिजरी

21 फ़रवरी 2006 ई०

बिसमिल्लाहिर्रहमानिर्रहीम

'अल्लाह के नाम से जो बड़ा मेहरबान, निहायत रहमवाला है।'

पाक-साफ़ और दुरुस्त नीयत

अमल का दारोमदार नीयत पर है

(1) हज़रत उमर इब्ने ख़त्ताब (रज़ि) कहते हैं कि अल्लाह के रसूल (सल्ल०) ने फ़रमाया :

"बेशक अमल का दारोमदार नीयत पर है, और इनसान को वही कुछ मिलेगा जिसकी उसने नीयत की होगी। तो जिसने वाक़ई अल्लाह और रसूल के लिए हिजरत[1] की होगी उसकी हिजरत अल्लाह के नज़दीक क़ाबिले-क़बूल होगी। और जिसकी हिजरत दुनिया के फ़ायदे हासिल करने या किसी औरत से शादी करने की ख़ातिर होगी तो उसकी हिजरत दुनिया के फ़ायदों के लिए या औरत के लिए ही समझी जाएगी।" (हदीस : बुख़ारी, मुस्लिम)

व्याख्या : यह हदीस अपनी इस्लाह और तर्बियत के पहलू से बहुत अहम है। रसूल (सल्ल०) के कहने का मतलब यह है कि नेक आमाल पर इनाम और सवाब का दारोमदार अच्छी नीयत पर है। यदि नीयत ठीक है तो इनाम और सवाब मिलेगा वरना नहीं। कोई काम चाहे कितना ही अच्छा और बड़ा हो, यदि उसका मक़सद और प्रेरक (Motive) अल्लाह को खुश करने के बजाए कुछ और हो तो आख़िरत में उसकी कुछ भी अहमियत न होगी। वह वहाँ खोटा सिक्का क़रार दिया जाएगा। इसकी मिसाल रसूल (सल्ल०) ने हिजरत से देकर वाज़ेह किया और बताया कि देखो ! हिजरत, नेकी का कितना बड़ा काम है। लेकिन यदि उसके पीछे नीयत कुछ और रही हो, रब को राज़ी और खुश करने के बजाए कुछ

---

1. 'हिजरत' इस्लामी शब्दावली का महत्वपूर्ण पारिभाषिक शब्द है। इसका शाब्दिक अर्थ तो वतन छोड़ कर अन्य देश चले जाना है चाहे इसका कारण कुछ भी हो, मगर इस्लामी पृष्ठभूमि में इसका अर्थ यह है कि जब किसी देश में रहकर दीने इस्लाम के तक़ाज़ों पर अमल करना मुश्किल या असंभव हो जाए तो अपने तमाम सांसारिक स्वार्थों को तिलांजलि देकर व्यक्ति ऐसे स्थान पर चला जाए जहाँ उसके लिए अपने दीन व ईमान पर क़ायम रहना और उसके तक़ाज़ों पर अमल करना आसान और संभव हो। (अनुवादक)

और मक़सद हो तो ऐसी हालत में आख़िरत में वह न सिर्फ़ सवाब और इनाम से महरूम रहेगा बल्कि कुछ ताज्जुब नहीं, यदि उस पर जालसाज़ी और फ़रेब का मुक़दमा क़ायम हो जाए।

(2) हज़रत अबू हुरैरा (रज़ि०) का बयान है कि मैंने अल्लाह के रसूल (सल्ल०) को यह फ़रमाते हुए सुना :

"क़ियामत के दिन सबसे पहले एक ऐसे व्यक्ति के ख़िलाफ़ फ़ैसला सुनाया जाएगा जिसने जिहाद में अपनी जान दे दी होगी। उसे अल्लाह की अदालत में हाज़िर किया जाएगा। फिर अल्लाह उसे अपनी सब नेमतें याद दिलाएगा। वह उन्हें क़बूल करेगा। तब अल्लाह उससे पूछेगा कि मेरी नेमतें पाकर तूने क्या काम किया? वह कहेगा : मैंने तेरी ख़ुशी की चाह में तेरे दीन के दुश्मनों से जंग की यहाँ तक कि अपनी जान दे दी। अल्लाह उससे कहेगा : तूने हक़ीक़त के ख़िलाफ़ बात कही। तूने तो सिर्फ़ इसलिए जंग की और बहादुरी दिखाई कि लोग तुझे वीर-बहादुर कहें, सो तुझे दुनिया में इसका फल मिल गया। फिर हुक्म होगा कि बहादुरी दिखानेवाले इस 'शहीद' को मुँह के बल घसीटते हुए ले जाओ और जहन्नम में डाल दो। अतः उसे इसी हाल में ले जाकर जहन्नम में डाल दिया जाएगा।

फिर एक अन्य व्यक्ति अल्लाह की अदालत में हाज़िर किया जाएगा जो दीन का आलिम (विद्वान) और उसकी तालीम देनेवाला होगा, क़ुरआन का पढ़नेवाला होगा। अल्लाह उसे अपनी सभी नेमतें याद दिलाएगा और वह उन्हें क़बूल करेगा। तब अल्लाह उससे पूछेगा : इन नेमतों को पाकर तुमने कौन से काम किए? वह कहेगा : परवरदिगार! मैंने तेरी ख़ातिर तेरा दीन (इस्लाम) सीखा और दूसरों को सिखाया और क़ुरआन को गहराई से समझा। अल्लाह कहेगा : तूने झूठ कहा। तूने तो दीन-इस्लाम इसलिए सीखा और सिखाया और क़ुरआन का गहरा इल्म (ज्ञान) इसलिए हासिल किया कि लोग तुझे आलिम साहब और क़ुरआन का मुफ़स्सिर (भाष्यकार) कहें। तो तेरी नीयत का फल तुझे दुनिया में मिल चुका। फिर उसके बारे में हुक्म होगा कि इसे भी मुँह के बल घसीटते हुए जहन्नम में डाल दो। चुनांचे उसे उसी तरह घसीटते हुए जहन्नम में डाल दिया जाएगा।

अल्लाह की अदालत में हाज़िर किया जानेवाला तीसरा व्यक्ति वह होगा जिसे अल्लाह ने दुनिया में सुख-चैन और ख़ुशहाली दी थी

और उसे हर प्रकार का माल दिया था। उसे भी अदालत में पेश किया जाएगा और उसे भी सब नेमतें याद दिलाई जाएँगी और वह उन्हें क़बूल करेगा। फिर उससे पूछा जाएगा कि क्या करके आए हो? वह कहेगा : जिन-जिन मदों में तूने ख़र्च करने का हुक्म दिया था उन सभी मदों में मैंने तेरी ख़ुशी की चाह में ख़र्च किया।

अल्लाह उसे भी झूटा क़रार देगा और कहेगा :

तूने तो इसलिए ख़र्च किया था कि लोग तुझे दानी और दाता कहें। तो, तुझे यह ख़िताब मिल चुका। फिर अल्लाह के हुक्म से उसे भी मुँह के बल घसीटते हुए ले जाकर जहन्नम में डाल दिया जाएगा।

(हदीस : मुस्लिम)

व्याख्या : यह हदीस पहली हदीस की भरपूर व्याख्या करती है। हिजरत, जिहाद, इस्लाम का इल्म सीखना-सिखाना और नेक कामों में माल खर्च करना— ये सभी बड़े ऊँचे दर्जे के काम हैं, मगर नीयत की ख़राबी की वजह से आख़िरत में न सिर्फ़ यह कि उसका इनाम न मिला बल्कि आग में जलना पड़ा।

(3) हज़रत अबू उमामा (रज़ि०) कहते हैं कि एक व्यक्ति अल्लाह के रसूल (सल्ल०) के पास आया। उसने आप (सल्ल०) से पूछा : एक आदमी आख़िरत में अज्र (इनाम) हासिल करने के लिए और दुनिया में शोहरत पाने के लिए जिहाद करता है, तो क्या उसे सवाब मिलेगा? आप (सल्ल०) ने जवाब दिया : उसे आख़िरत में कुछ भी न मिलेगा। उस व्यक्ति ने अपना यह सवाल तीन बार दोहराया। आप (सल्ल०) ने हर बार यही जवाब दिया कि ऐसा व्यक्ति आख़िरत में किसी अज्र और सवाब का हक़दार नहीं होगा। आख़िर में आप (सल्ल०) ने कहा: अल्लाह वही अमल क़बूल करेगा जो सिर्फ़ उसके लिए किया गया होगा और सिर्फ़ उसी की ख़ुशनूदी उस अमल का मक़सद रही होगी।

(हदीस : अबू दाऊद, नसई)

(4) हज़रत अनस इब्ने मालिक (रज़ि०) कहते हैं कि 'तबूक'[1] की

---

1. 'तबूक' दमिश्क से हज के लिए मदीना आनेवाले मार्ग पर पड़नेवाला एक स्थान है जहाँ सीरिया की सीमा पर रोमन साम्राज्य की दो लाख सेनाओं का मुक़ाबला करने के लिए नबी (सल्ल०) 30 हज़ार सहाबा की फौज लेकर पहुँचे और आपके वहाँ पँहुचने से पहले ही दुश्मन मैदान छोड़कर जा चुका था। इस ऐतिहासिक घटना को 'तबूक की जंग' या 'ग़ज़वा-ए-तबूक' के नाम से जाना जाता है जो मदीना हिजरत के नौवें वर्ष घटी थी।

मुहिम से फ़ारिग़ होकर हम लोग नबी (सल्ल०) के साथ वापस हुए। सफ़र के दौरान आप (सल्ल०) ने फ़रमाया : "कुछ लोग हमारे पीछे मदीने में हैं लेकिन हक़ीक़त में वे इस सफ़र में हमारे साथ रहे हैं। हम लोग जिस घाटी में भी चले और जिस वादी को भी पार किया, हर जगह वे हमारे साथ रहे हैं; उनको मजबूरी ने रोक दिया था।

(हदीस : बुख़ारी)

व्याख्या : इस हदीस से पता चलता है कि यदि किसी ने किसी नेकी की नीयत की और किसी मजबूरी से वह उसे न कर सका तो अल्लाह के यहाँ उस अमल के इनाम और बदले से वह महरूम न रहेगा।

(5) हज़रत अबू दरदा (रज़ि०) से रिवायत है कि नबी (सल्ल०) ने फ़रमाया : जो व्यक्ति अपने बिस्तर पर इस नीयत और इरादे से लेटा कि वह तहज्जुद (रात के आख़िरी हिस्से में पढ़ी जानेवाली नमाज़) के लिए उठेगा, लेकिन उसे गहरी नींद आ गई और भोर हो जाने के बाद ही उठ सका तो ऐसे व्यक्ति के आमाल-नामे में उस रात की तहज्जुद की नमाज़ लिखी जाएगी और यह नींद उसके रब की ओर से उसे इनाम के रूप में मिली। (हदीस : नसई, इब्ने-माजा)

(6) हज़रत अब्दुल्लाह बिन मसऊद (रज़ि०) कहते हैं कि अल्लाह के रसूल (सल्ल०) ने फ़रमाया : वह व्यक्ति जो लोगों के सामने तो अच्छे तरीक़े से नमाज़ पढ़ता है (यानी पूरी लगन और दिल से नमाज़ पढ़ता है, रुकूअ और सजदे ठीक से करता है) और जब तंहाई में नमाज़ पढ़ता है तो ठीक से नहीं पढ़ता, तो ऐसा व्यक्ति अपने रब की बेइज़्ज़ती करता है। (हदीस : अल-मुंज़िरी)

(7) हज़रत मुआज़ इब्ने जबल (रज़ि०) कहते हैं कि नबी (सल्ल०) जिस वक़्त मुझे यमन का गर्वनर बनाकर भेज रहे थे, मैंने कहा : मुझे कुछ नसीहत कीजिए। नबी (सल्ल०) ने फ़रमाया : अपनी नीयत को हर खोट से पाक रखो। जो अमल करो, ख़ुदा ही को ख़ुश करने के लिए करो तो थोड़ा अमल भी नजात के लिए काफ़ी होगा।

(हदीस : मुस्तदरक, तरग़ीब व तरहीब)

ईमान

1. अल्लाह पर ईमान क्या है ?

(8) हज़रत अबू हुरैरा (रज़ि०) कहते हैं कि अल्लाह के रसूल (सल्ल०) ने लोगों से फ़रमाया : तुम लोग मुझसे दीन की बातें पूछो। लेकिन लोगों में आप (सल्ल०) के एहतिराम और इज़्ज़त की वजह से ऐसी हैबत (धाक) थी कि आमतौर से लोग आप (सल्ल०) से पूछते नहीं थे; (और हरेक यह चाहता था कि बाहर से कोई पूछनेवाला आए और पूछे ताकि वे भी आपकी नसीहतों से फ़ायदा उठा सकें।) चुनाँचे एक आदमी आया। वह नबी (सल्ल०) के बिलकुल क़रीब बैठ गया और उसने पूछा : ऐ अल्लाह के रसूल ! इस्लाम क्या है ? आप (सल्ल०) ने कहा: किसी को अल्लाह का साझी न बनाना, नमाज़ क़ायम करना, माल को अल्लाह के रास्ते में ख़र्च करना और रमज़ान के रोज़े रखना।

इसपर उसने कहा : आपने ठीक कहा। फिर उसने पूछा : ऐ अल्लाह के रसूल, ईमान क्या है? आप (सल्ल०) ने फ़रमाया : अल्लाह को मानना, फ़रिश्तों को मानना, उसकी किताबों को मानना, उसके रसूलों को मानना, मरने के बाद जी उठने को मानना, और इस बात को मानना कि जो कुछ इस दुनिया में होता है, अल्लाह के तय किए हुए क़ानून के तहत होता है।

उस आदमी ने कहा : आपने सच कहा। इसके बाद उसने आप (सल्ल०) से तीसरी बात पूछी : 'एहसान' क्या है ? आप (सल्ल०) ने कहा : 'एहसान' यह है कि तुम अल्लाह से इस तरह डरो मानो तुम उसे देख रहे हो। और यदि तुम उसे नहीं देख रहे हो तो वह तो तुम्हें देख रहा है। उसने कहा : आपने ठीक जवाब दिया। उसने फिर पूछा: क़ियामत कब आएगी ? आप (सल्ल०) ने कहा : मैं भी तुम्हारी तरह उसके आने का वक़्त नहीं जानता, हाँ, उसके आने के पहले ज़ाहिर होनेवाली कुछ निशानियाँ बता सकता हूँ।(और वे ये हैं :)

जब तुम देखो कि औरत अपने मालिक की माँ बन गई है तो समझ लो क़ियामत क़रीब है। जब तुम देखो कि नंगे पैर रहनेवाले,

नंगे बदन रहनेवाले, बहरे और गूँगे लोगों के हाथ में ज़मीन की सत्ता आ गई है तो यह भी क़ियामत की निशानियों में से है। जब तुम देखो कि मवेशियों के चरानेवाले ऊँची-ऊँची इमारतें बनाने में एक-दूसरे का मुक़ाबला कर रहे हैं तो समझ लो क़ियामत क़रीब है।

(हदीस : बुख़ारी, मुस्लिम)

व्याख्या : ईमान का असल मतलब है, किसी पर भरोसा करना, उसकी बात को सच मानकर क़बूल करना, उसे अपनाना। जब आदमी को किसी बात की सच्चाई पर यक़ीन होता है तभी उसे मानता और अपनाता है। ईमान की असल रूह यही भरोसा और यक़ीन है। आदमी के मोमिन होने के लिए ज़रूरी है कि उन सारी बातों को हक़ मानकर क़बूल करे जो अल्लाह की ओर से आई हैं।

इस हदीस में ईमान के बुनियादी अक़ीदों का ज़िक्र हुआ है, जिनकी अलग-अलग संक्षिप्त व्याख्या पेश की जा रही है—

1. अल्लाह पर ईमान

अल्लाह पर ईमान लाने का मतलब यह है कि अल्लाह को हमेशा से मौजूद माना जाए। उसको कायनात (सृष्टि) को पैदा करनेवाला और उसको अकेला इन्तिज़ाम चलानेवाला तस्लीम किया जाए। यह भी माना जाए कि हर प्रकार के ऐब (विकार, दोष) और हर प्रकार की कमी से वह पाक है। वह सारे अच्छे गुणों और सिफ़ात का मालिक और सारी ख़ूबियों का सरचश्मा है और यह भी माना जाए कि वही सच्चा माबूद, ज़िन्दगी का क़ानून देनेवाला हाकिम और बादशाह है।

इसी उनवान (शीर्षक) के तहत आगे कुछ हदीसें पेश की जा रही हैं जो अल्लाह पर ईमान रखने के भाव पर रोशनी डालती हैं।

(9) इब्ने अब्बास (रज़ि०) से रिवायत है कि नबी (सल्ल०) ने (क़बीला अब्दुल क़ैस के नुमाइन्दों से) फ़रमाया : क्या तुम जानते हो कि एक अल्लाह पर ईमान लाने का क्या मतलब है? उन्होंने कहा : अल्लाह और उसके रसूल ही बेहतर जानते हैं। आप (सल्ल०) ने कहा: ईमान यह है कि आदमी इस सच्चाई की गवाही दे (और एलान करे) कि अल्लाह के सिवा कोई इलाह (माबूद) नहीं है और मुहम्मद (सल्ल०) अल्लाह के रसूल (संदेष्टा) हैं, और नमाज़ ठीक से अदा करे, ज़कात दे और रमज़ान के रोज़े रखे। (हदीस : बुख़ारी, मुस्लिम)

(10) हज़रत अनस (रज़ि०) कहते हैं कि अल्लाह के रसूल (सल्ल०) ने जब भी ख़ुतबा (प्रवचन) दिया तो उसमें यह ज़रूर फ़रमाया : जिसमें

अमानत (ईमानदारी) नहीं उसमें ईमान नहीं और जिसको अपने अहद का लिहाज़ नहीं, उसके पास दीन नहीं।

(हदीस : मिश्कात, बैहक़ी से उद्धृत)

व्याख्या : हज़रत मुहम्मद (सल्ल०) के कहने का मतलब यह है कि जो आदमी अल्लाह और बंदों के हक़ अदा नहीं करता वह ईमान की पुख़्तगी से महरूम है, और जो व्यक्ति किसी बात को निभाने का वचन दे और अहद करे फिर उसे पूरा न करे वह दीनदारी (धर्मपरायणता) की नेमत से महरूम है। जिसके दिल में ईमान की जड़ें मज़बूती से जमी हुई होती है वह सारे हक़ों को पूरी ईमानदारी और अमानतदारी के साथ अदा करता हैं। वह किसी का हक़ अदा करने में ख़यानत नहीं करता। इसी प्रकार जिस आदमी में दीनदारी होगी वह अपने दिए गए वचन को मरते दम तक निभाएगा। याद रहे, सबसे बड़ा हक़ अल्लाह का है, उसके रसूल (सल्ल०) का है और उसकी भेजी हुई किताब (क़ुरआन मजीद) का है; और फिर बंदों के हक़ हैं। सबसे बड़ा वचन (अहद) वह है जो आदमी अपने ख़ुदा से, उसके भेजे हुए नबी (सल्ल०) से और नबी (सल्ल०) के लाए हुए दीन से करता है। क़ुरआन मजीद और हदीसों में 'अमानत' और अह्द (वचन) अपने व्यापक मायने में इस्तेमाल हुए हैं।

(11) हज़रत अम्र बिन अबसा (रज़ि०) कहते हैं : मैंने अल्लाह के रसूल (सल्ल०) से पूछा : ईमान क्या है ? आप (सल्ल०) ने कहा : ईमान नाम है, सब्र (धैर्य) और समाहत (सदाशयता) का। (हदीस : मुस्लिम)

व्याख्या : यानी 'ईमान' यह है कि आदमी ख़ुदा का रास्ता अपने लिए पसंद करे और इस रास्ते में जो मुसीबत पेश आए उसको हँसी-ख़ुशी सहन करे और ख़ुदा के सहारे आगे बढ़ता जाए। यह सब्र है; और 'समाहत' (सदाशयता) यह है कि आदमी अपनी कमाई अल्लाह के मुहताज और बेसहारा बंदों पर ख़र्च करे और ख़र्च करके ख़ुशी महसूस करे। साथ ही यह शब्द समाहत नर्मी, इज़्ज़त और कुशादादिली के लिए भी इस्तेमाल होता है।

(12) हज़रत अबू उमामा (रज़ि०) ने कहा कि अल्लाह के रसूल (सल्ल०) ने फ़रमाया : जिसने अल्लाह के लिए दोस्ती की और अल्लाह के लिए दुश्मनी की; अल्लाह के लिए दिया और अल्लाह के लिए रोका (मना किया), उसने अपने ईमान को पूरा कर लिया।

(हदीस : बुख़ारी)

व्याख्या : यानी आदमी जब अपनी तरबियत करते हुए इस हाल को पहुँच

जाए कि वह जिससे जुड़े और जिससे कटे—अल्लाह ही के लिए जुड़े और कटे। इसी तरह यदि किसी को दे और किसी को न दे, इसमें अल्लाह की ख़ुशनूदी के सिवा कोई और मक़सद न हो। अल्लाह का दीन (इस्लाम) ही उसकी मुहब्बत और नफ़रत की बुनियाद हो। व्यक्तिगत और दूसरे दुनयावी फ़ायदों से उसका मन पाक हो। जब आदमी इस हाल को पहुँच जाए तब जानो कि उसका ईमान मुकम्मल हुआ।

(13) हज़रत अब्बास (रज़ि०) से रिवायत है कि नबी (सल्ल०) ने फ़रमाया : ईमान का मज़ा चखा उस आदमी ने, जिसने अल्लाह को अपना रब मानकर, इस्लाम को अपना दीन (अक़ीदा और निज़ामे—ज़िन्दगी) समझकर और मुहम्मद (सल्ल०) को अपना रसूल तस्लीम करके संतुष्ट और मुतमइन हो गया।

(हदीस : बुख़ारी, मुस्लिम)

व्याख्या : यानी अपने आपको अल्लाह की बंदगी में देकर, इस्लाम को अपने निज़ामे—ज़िन्दगी के रूप में अपनाकर और अपने आपको हज़रत मुहम्मद (सल्ल०) की रहनुमाई में देकर पूरी तरह मुतमइन है। उसका कहना यह है कि मुझे किसी और की बंदगी नहीं करनी, हर हाल में इस्लाम के बताए हुए रास्ते पर चलना है और मुहम्मद (सल्ल०) को छोड़ किसी भी दूसरे आदमी की रहनुमाई (मार्गदर्शन) में ज़िंदगी नहीं गुज़ारनी है। जिस आदमी की यह हालत हो जाए तो समझ लो, उस खुशनसीब ईमानवाले ने ईमान की मिठास और उसका मज़ा चख लिया।

(14) हज़रत ज़ैद इब्ने अरक़म (रज़ि०) से रिवायत है कि अल्लाह के रसूल (सल्ल०) ने फ़रमाया : जो व्यक्ति इख़्लास के साथ (निष्ठापूर्वक) 'ला इलाह इल्लल्लाह' (अल्लाह के सिवा कोई माबूद नहीं) कहे वह जन्नत में जाएगा। लोगों ने पूछा : इख़्लास (निष्ठा) का मतलब क्या है? आप (सल्ल०) ने बताया : इख़्लास के साथ पाक कलमा (ला इलाह इल्लल्लाह) कहने का मतलब यह है कि कहनेवाला अल्लाह की मना की हुई सारी बातों से रुक जाए। हदीस की किताब 'मुस्नद-अहमद' में रिफ़ाआ जुहनी की जिस रिवायत का ज़िक्र हुआ है, उसका तर्जुमा यह है : जो बंदा सच्चे दिल से इस बात की गवाही दे कि अल्लाह के सिवा कोई माबूद (पूज्य प्रभु) नहीं है और इस बात की गवाही दे कि मैं (यानी मुहम्मद सल्ल०) अल्लाह का रसूल हूँ, फिर वह सीधे रास्ते पर चले (यानी ईमान की माँगों को पूरा करे, नेकियों पर

अमल करे और बुरे कामों से बचे) तो वह जन्नत में जाएगा। हदीस की एक दूसरी किताब 'तिरमिज़ी' में आई हुई हदीस का अनुवाद यह है : 'जो बंदा तौहीद का कलमा (यानी ला इलाह इल्लल्लाह) पढ़े और फिर बड़े गुनाहों से दूर रहे तो वह जन्नत में जाएगा।'

(हदीस : मुस्नद-अहमद)

व्याख्या : ऊपर बयान की गई तीनों हदीसों के तर्जुमे को ध्यान से पढ़िए। ये हमें बताती हैं कि केवल ईमान का कलमा पढ़ लेना जन्नत में जाने के लिए काफ़ी नहीं है बल्कि वह सब कुछ करना होगा जिनका पता इन हदीसों से चलता है।

2. फ़रिश्तों पर ईमान

फ़रिश्तों पर ईमान लाने का मतलब यह है कि उनके वुजूद को माना जाए और यक़ीन किया जाए कि फ़रिश्ते अल्लाह की नूरानी पाक मख़लूक़ हैं, वे ख़ुदा की नाफ़रमानी नहीं करते, वे हर समय अल्लाह की बन्दगी में लगे रहते हैं। वफ़ादार ग़ुलाम की भाँति मालिक का हर हुक्म पूरा करने के लिए उसके सामने हाथ बाँधे खड़े रहते हैं।

3. रसूलों पर ईमान

रसूलों पर ईमान लाने का मतलब यह है कि जितने भी रसूल ख़ुदा की ओर से आए, सभी सच्चे हैं। इन सभी रसूलों ने बिना किसी कमी-बेशी के ख़ुदा की बातें लोगों तक पहुँचाईं। इस सिलसिले की आख़िरी कड़ी हज़रत मुहम्मद (सल्ल०) हैं। अब इनसानों की नजात (मुक्ति) केवल आप (सल्ल०) की पैरवी में है।

इस बारे में कुछ हदीसें पेश की जा रही हैं जिनसे मालूम होगा कि रसूल (सल्ल०) पर ईमान लाने का क्या मतलब है।

(15) हज़रत अनस (रज़ि०) कहते हैं कि मुझसे अल्लाह के रसूल (सल्ल०) ने फ़रमाया : ऐ मेरे प्यारे बेटे ! यदि तू इस तरह ज़िन्दगी बसर कर सके कि तेरे मन में किसी के लिए बुरे जज़बात न हों तो ऐसी ही ज़िन्दगी बसर कर। फिर फ़रमाया : ऐ मेरे प्यारे बेटे ! यही मेरा तरीक़ा है कि मेरे मन में किसी के लिए खोट नहीं। और जिसने मेरी सुन्नत (तरीक़ा) से प्रेम किया, बेशक उसने मुझसे प्रेम किया, और जिसने मुझसे प्रेम किया वह मेरे साथ जन्नत में रहेगा।

(हदीस : मुस्लिम)

(16) हज़रत अनस (रज़ि०) कहते हैं कि तीन व्यक्ति नबी (सल्ल०)

की इबादत का हाल जानने के मक़सद से आप (सल्ल०) की बीवियों के पास गए। जब उन्हें बताया गया, तो उन्होंने आप (सल्ल०) की इबादत को कम आंका और कहने लगे: नबी (सल्ल०) से हमारी क्या तुलना ! उनसे न तो पहले गुनाह हुए, न बाद में होंगे। (और हम लोग मासूम नहीं हैं, इसलिए हमें अधिक से अधिक इबादत करनी चाहिए)। अतः उनमें से एक ने अपने लिए यह तय किया कि वह हमेशा पूरी रात नफ़्ल इबादत में गुज़ारेगा। दूसरे ने कहा : मैं हमेशा नफ़्ल रोज़े रखूँगा। तीसरे व्यक्ति ने कहा : मैं ज़िन्दगी भर औरतों से अलग-थलग रहूँगा; कभी शादी न करूँगा। (जब नबी (सल्ल०) को इन लोगों के जोगियाना विचारों का पता चला तो) आप (सल्ल०) उनके पास गए और कहा : क्या तुम्हीं लोग हो जिन्होंने इस प्रकार का संकल्प किया है ? देखो ! मैं तुम लोगों में सबसे अधिक अल्लाह से डरनेवाला और उसकी नाफ़रमानी से बचनेवाला हूँ, लेकिन देखो ! मैं रोज़े भी रखता हूँ और नहीं भी रखता। नफ़्ल नमाज़ें भी पढ़ता हूँ और सोता भी हूँ। यह भी देखो कि मैं बीवियाँ भी रखता हूँ। इसलिए तुम्हारे लिए भलाई मेरे तरीक़े की पैरवी में है। जिसकी नज़र में मेरी सुन्नत (तरीक़ा) की अहमियत नहीं, जो मेरी सुन्नत को नज़रअन्दाज़ करे वह मेरे लोगों में से नहीं, उसका मुझसे कोई ताल्लुक़ नहीं।

(हदीस : मुस्लिम)

(17) हज़रत आइशा (रज़ि०) फ़रमाती हैं कि नबी (सल्ल०) ने एक काम किया और लोगों को रुख़सत का पहलू (गुंजाइश) अपनाने की नसीहत की। लेकिन कुछ लोगों ने रुख़सत का पहलू अपनाने में झिझक महसूस की। जब आप (सल्ल०) को उन लोगों की इस बात का पता चला तो आप (सल्ल०) ने तक़रीर की। अल्लाह की हम्दो-सना (गुणगान करने) के बाद फ़रमाया : क्यों कुछ लोग उस काम को करने से हिचक रहे हैं जिसको मैं करता हूँ ? ख़ुदा की क़सम ! मैं इन सबसे अधिक ख़ुदा के बारे में जानकारी रखता हूँ (कि उसकी मर्ज़ी क्या है और क्या नहीं है) तथा मैं इन सबसे अधिक अल्लाह से डरनेवाला हूँ। (हदीस : बुख़ारी, मुस्लिम)

(18) हज़रत जाबिर (रज़ि०) फ़रमाते हैं कि नबी (सल्ल०) के पास हज़रत उमर (रज़ि०) आए और बोले : हमें यहूदियों की कुछ बातें

भली जान पड़ती हैं, तो आपकी क्या राय है? क्या उनमें से कुछ लिख लें? आप (सल्ल०) ने फ़रमाया : क्या तुम लोग भी गुमराही के खड्ड में गिरना चाहते हो जैसे यहूदी और ईसाई (अपनी दीनी किताब छोड़कर) खड्ड में गिरे? मैं तुम्हारे पास वह शरीयत (धर्मशास्त्र) लाया हूँ जो सूरज की तरह रौशन और आईने की तरह साफ़ है; और यदि आज मूसा (अलैहि०) ज़िन्दा होते तो उन्हें भी मेरी पैरवी करनी पड़ती। (हदीस : मुस्लिम)

व्याख्या : यहूदियों और ईसाइयों ने अपनी किताबों में हेरफेर करके उन्हें बिगाड़ डाला था। लेकिन उनमें केवल बिगाड़ ही बिगाड़ न था, ख़ुदा की कुछ सच्ची बातें भी थीं जिन्हें मुसलमान सुनते और पसंद करते थे। यदि नबी (सल्ल०) इजाज़त दे देते तो इस्लाम में बड़ी ख़राबी पैदा हो जाती। कौन-सा धर्म है जिसमें कुछ सच्ची और अच्छी बातें नहीं पाई जातीं। हज़रत मुहम्मद (सल्ल०) ने जो जवाब हज़रत उमर (रज़ि०) को दिया उससे यह बात वाज़ेह हो जाती है कि जिसके अपने घर में साफ़ मीठे पानी का चश्मा बह रहा हो उसे दूसरे गन्दे पानी की ओर नहीं देखना चाहिए।

(19) हज़रत अब्दुल्लाह इब्ने अम्र (रज़ि०) कहते हैं कि अल्लाह के रसूल (सल्ल०) ने फ़रमाया : कोई व्यक्ति मोमिन नहीं हो सकता जब तक उसका इरादा और उसके नफ़्स का रुझान मेरी लाई हुई शरीअत के मुताबिक़ नहीं हो जाता। (हदीस : मिशकात)

व्याख्या : यानी रसूल (सल्ल०) पर ईमान लाने की माँग यह है कि इनसान अपनी ख़्वाहिशें, इरादे अपनी पसंद-नापसंद और दिली रुझान को अल्लाह के रसूल के लाए हुए दीन और शरीअत के मातहत कर दे। अपनी ख़्वाहिशों, तमन्नाओं और अरमानों की बागडोर क़ुरआन व सुन्नत के हाथ में सौंप दे। यदि कोई यह माँग पूरी न कर सके तो उसे सोचना चाहिए कि अल्लाह की नज़र में उसके ईमान की क्या अहमियत हो सकती है।

(20) हज़रत अनस (रज़ि०) कहते हैं कि अल्लाह के रसूल (सल्ल०) ने फ़रमाया : तुममें कोई मोमिन नहीं हो सकता, जब तक मैं उसके लिए उसके माँ-बाप, उसकी औलाद और सारे इनसानों से अधिक प्रिय न हो जाऊँ। (हदीस : बुख़ारी, मुस्लिम)

व्याख्या : नबी (सल्ल०) के इस कहने का मतलब यह है कि आदमी पक्का मोमिन उसी समय बनता है जब अल्लाह के रसूल (सल्ल०) की मुहब्बत सभी मुहब्बतों पर छा जाए। माँ-बाप, औलाद या समाज में रहनेवाले अन्य लोग किसी

रास्ते पर चलाना चाहें और अल्लाह के रसूल (सल्ल०) किसी दूसरे रास्ते पर चलने का आदेश दें तो ऐसे हालात में मोमिन की ज़िम्मेदारी है कि सबकी माँगों को ठुकराकर अपने प्यारे पैग़म्बर की आवाज़ पर दौड़ पड़े।

(21) हज़रत अब्दुल्लाह इब्ने मुग़फ़्फ़ल (रज़ि०) कहते हैं कि एक आदमी नबी (सल्ल०) के पास आया। उसने आप (सल्ल०) से कहा : मैं आपसे मुहब्बत करता हूँ। आप (सल्ल०) ने कहा : सोच लो, क्या कह रहे हो! उसने तीन बार ख़ुदा की क़सम खाकर कहा कि "मैं आपसे मुहब्बत करता हूँ।" आप (सल्ल०) ने कहा : यदि तुम अपने दावे में सच्चे हो तो ग़रीबी और कंगाली का सामना करने के लिए तैयार हो जाओ क्योंकि मुझसे मुहब्बत करनेवालों की ओर ग़रीबी उससे अधिक तेज़ी से बढ़ती है जितनी तेज़ रफ़्तार से बाढ़ का पानी ढलान की ओर बहता है। (हदीस : तिरमिज़ी)

व्याख्या : नबी (सल्ल०) को महबूब बनाने का मतलब यह है कि आप (सल्ल०) के एक-एक नक़्शेक़दम का पता किया जाए; और उसपर चला जाए। आप (सल्ल०) ने जिस रास्ते में चोटें खाई हैं, उस रास्ते में चोटें खाने का हौसला पैदा किया जाए और जो व्यक्ति अपने महबूब नबी (सल्ल०) के मार्ग पर चलने का हौसला करे उसे जान लेना चाहिए कि ग़रीबी और मोहताजी के तेज़ रफ़्तार से बढ़ते सैलाब का सामना ख़ुदा पर भरोसा और उससे प्रेम ही के बल पर किया जा सकता है। वह अपने मन में यह बात भली-भाँति बिठा ले कि अल्लाह मेरा वकील है, मैं बेसहारा नहीं हूँ। यह बात भी उसके दिलो—दिमाग़ में बैठी हुई हो कि मैं ग़ुलाम हूँ; मेरा काम अपने मालिक की मर्ज़ी पूरी करना है। मैं जिसके काम पर लगा हुआ हूँ, वह इनसाफ़ पसंद और मेहरबान है; मेरी मेहनत मारी नहीं जाएगी। वह हर समय याद रखे कि मैंने किस हस्ती को अपना महबूब बनाया है।

4. तक़दीर पर ईमान

तक़दीर (भाग्य) पर ईमान लाने का मतलब यह है कि इस बात को स्वीकार किया जाए कि दुनिया में जो कुछ हो रहा है, सब ख़ुदा की ओर से हो रहा है; यहाँ केवल उसी का हुक्म चलता है। ऐसा नहीं है कि वह तो कुछ और चाहता हो और दुनिया का कारख़ाना किसी और ढब से चल रहा हो। हर भलाई-बुराई और हिदायत व गुमराही का एक नियम है जिसको उसने पहले से बना रखा है। अल्लाह का शुक्र अदा करनेवाले बंदों पर जो मुसीबत आती है, जिन कठिनाइयों

से वे दो-चार होते हैं और जो आज़माइशें उनपर आती हैं—ये सारे हालात उनके रब के हुक्म और पहले से तय किए हुए नियमों और क़ानूनों के तहत आते हैं।

अब कुछ हदीसें दी जा रही हैं जो तक़दीर (भाग्य) के मसले पर रोशनी डालती हैं।

(22) हज़रत अली (रज़ि०) से रिवायत है कि अल्लाह के रसूल (सल्ल०) ने फ़रमाया कि तुममें से प्रत्येक व्यक्ति के जन्नत और दोज़ख का फ़ैसला हो चुका है। लोगों ने कहा : ऐ अल्लाह के रसूल ! (यदि ऐसा है) तो फिर हम क्यों न अपने बारे में हुए फ़ैसले का सहारा लें और अमल करना छोड़ दें ? आप (सल्ल०) ने कहा : नहीं, अमल करो, क्योंकि प्रत्येक व्यक्ति को उसी की तौफ़ीक़ मिलती है जिसके लिए उसे पैदा किया गया है। जो ख़ुशक़िस्मत है उसे जन्नत में ले जानेवाले कामों की तौफ़ीक़ मिलती है; और जो बदक़िस्मत है उसे जहन्नम में ले जानेवाले कामों की तौफ़ीक़ मिलती है।

इसके बाद नबी (सल्ल०) ने क़ुरआन की सूरा 'अल-लैल' की दो आयतें पढ़ीं (जिनका ज़िक्र ऊपर हदीस में आया है, जिनका तर्जुमा यह है :) जिसने अल्लाह के रास्ते में धन दिया और परहेज़गारी का रास्ता अपनाया और भलाई को सत्य माना तो हम उसको अच्छी ज़िन्दगी (यानी जन्नत) की तौफ़ीक़ देंगे। और जिसने अल्लाह के रास्ते में ख़र्च करने में कंजूसी से काम लिया और अल्लाह से बेपरवाह रहा और अच्छी ज़िन्दगी को झुठलाया, तो हम उसको दुख पहुँचाने वाली ज़िन्दगी (जहन्नम) की तौफ़ीक़ देंगे। (यानी उसके लिए जहन्नुम के रास्ते पर चलना आसान होगा। और ख़राब काम के सबब जहन्नम में जाएगा।)
(हदीस : बुख़ारी, मुस्लिम)

व्याख्या : अल्लाह के यहाँ यह बात तय है कि इंसान किन-किन कामों की वजह से जहन्नम में जाएगा और किन-किन कामों की वजह से वह जन्नती होगा। तक़दीर के बारे में क़ुरआन मजीद और हदीसों में तफ़सील से बयान कर दिया गया है। अब यह आदमी का अपना काम है कि वह जहन्नम के रास्ते पर चलना पसंद करता है या जन्नत के रास्ते पर ! इन दोनों में से किसी एक रास्ते को इख़्तियार करने की आज़ादी उसे हासिल है। और वह इसलिए कि अल्लाह ने उसे इरादे और चुनाव की आज़ादी दी है। और यही आज़ादी उसे सज़ा दिलवाएगी और यही आज़ादी उसे जन्नत दिलाएगी जहाँ उसे आराम हासिल

होगा मगर बहुत-से नादान लोग अपनी ज़िम्मेदारी को ख़ुदा के सिर डालते हैं और अपने को "मजबूर" कहते हैं।

(23) अबू ख़िज़ामा अपने वालिद से रिवायत करते हैं कि मेरे वालिद ने नबी (सल्ल०) से पूछा कि यह दुआ-तावीज़ जिसे हम बीमारियाँ दूर करने के लिए इस्तेमाल करते हैं, ये दवाएँ जो हम अपनी बीमारियों को दूर करने के लिए इस्तेमाल करते हैं और अपने बचाव के लिए जो एहतियाती उपाय करते हैं—क्या ये अल्लाह की (लिखी हुई) तक़दीर को टाल सकते हैं? आप (सल्ल०) का जवाब था : यह सब चीज़ें भी तो अल्लाह की तक़दीर में से हैं। (हदीस : तिरमिज़ी)

व्याख्या : नबी (सल्ल०) के जवाब का मतलब यह है कि जिस ख़ुदा ने हमारे लिए बीमारी लिखी, उसी ख़ुदा ने यह भी तय किया कि यह फ़्लाँ दवा और फ़्लाँ उपाय से दूर की जा सकती है। ख़ुदा बीमारी का भी पैदा करनेवाला है और दवा का भी—सब कुछ उसी के तय किए हुए नियमों और कानूनों के तहत है।

(24) हज़रत अब्दुल्लाह इब्ने अब्बास (रज़ि०) कहते हैं कि एक दिन जबकि मैं नबी (सल्ल०) के पीछे सवारी पर बैठा था, आप (सल्ल०) ने फ़रमाया : ऐ लड़के! मैं तुझे कुछ बातें बताता हूँ (ध्यान से सुन!) तू ख़ुदा को याद रख, तो ख़ुदा तुझे याद रखेगा। तू ख़ुदा को याद रख, तो ख़ुदा को तू अपने सामने पाएगा। जब तू माँगे तो ख़ुदा से माँग। जब तू किसी मुश्किल में मदद चाहता हो तो ख़ुदा से मदद माँग—और यक़ीन कर कि यदि सारे लोग मिलकर तुझे कोई फ़ायदा पहुँचाना चाहें तो वे तुझे फ़ायदा नहीं पहुँचा सकते, सिवाय उसके जो अल्लाह ने तेरे लिए लिख दिया है। (यानी किसी के पास देने को कुछ है ही नहीं कि देगा। सब कुछ तो ख़ुदा का है, वह किसी के हक़ में जितना देने का फ़ैसला करता है, उतना ही उसे मिलता है।) और यदि सब लोग मिलकर तुझे नुक़सान पहुँचाना चाहें तो वे कुछ भी नुक़सान नहीं पहुँचा सकते सिवाय उसके जो अल्लाह ने तेरे लिए लिख दिया है। (हदीस : मिशकात)

(25) हज़रत अबू हुरैरा (रज़ि०) कहते हैं कि अल्लाह के रसूल (सल्ल०) ने फ़रमाया : ताक़तवर मोमिन कमज़ोर मोमिन के मुक़ाबले में बेहतर है और अल्लाह को ज़्यादा प्रिय है; मगर अच्छे तो दोनों ही हैं। और तू (आख़िरत में) फ़ायदा पहुँचानेवाली चीज़ की इच्छा रख; और

तुझपर कठिन समय आए तो अल्लाह से मदद माँग और हिम्मत न हार। यदि तुझपर कोई मुसीबत आ जाए तो इस तरह न सोच कि यदि मैंने फ़लाँ उपाय अपनाया होता तो यह मुसीबत न आती। बल्कि इस तरह सोच कि अल्लाह ने ये बात लिख दी थी। जो उसकी मरज़ी होती है वह होकर रहता है क्योंकि "अगर" ऐसा हुआ होता तो... वाली सोच शैतानी काम का दरवाज़ा खोलती है। (हदीस : मिशकात)

व्याख्या : इस हदीस के शुरू के जुमलों का मतलब यह है कि एक मोमिन वह है जो जिस्मानी और फ़िक्री क़ुव्वत और हिम्मत व हौसले में बढ़ा हुआ है जबकि दूसरा मोमिन उसके मुक़ाबले में कमज़ोर है, तो अल्लाह की नज़र में पहला मोमिन अधिक प्रिय है क्योंकि उस व्यक्ति के मुक़ाबले में इस्लाम का काम उसके ज़रिए ज़्यादा अंजाम पाएगा जो कमज़ोर है। जिसकी सेहत ख़राब है तथा जिसकी सोच और इरादे में कमज़ोरी है, ज़ाहिर है, उतना काम यह नहीं कर सकता। हाँ, यह ज़रूर है कि दोनों एक ही रास्ते के मुसाफ़िर हैं इसलिए इस कमज़ोर मोमिन को भी इनआम से महरूम न किया जाएगा। वास्तव में इस हदीस में ताक़तवर मोमिन को ज़्यादा से ज़्यादा अच्छे काम पर उभारा गया है।

हदीस के आख़िरी हिस्से का मतलब यह है कि मोमिन अपनी सूझ—बूझ शारीरिक-शक्ति और अपने उपायों और योग्यताओं पर कभी नहीं इतराता। यदि उसपर कोई मुसीबत आती है तो उसके सोचने का अंदाज ऐसा नहीं होता कि यदि मैंने फ़लाँ तदबीर अपना ली होती तो इस मुसीबत से बच जाता बल्कि उसकी सोच यह होती है कि यह मेरे रब की लिखी हुई बातें हैं और उसका यह फ़ैसला मेरे लिए बेहतर होगा; उसने मेरे ऊपर यह मुसीबत मेरी भलाई और मेरे निखार के लिए भेजी है।

5. अल्लाह की किताब पर ईमान

किताबों पर ईमान लाने का मतलब यह है कि अल्लाह ने अपने रसूलों के ज़रिए समय—समय पर इनसानों की हिदायत और उनके मार्गदर्शन के लिए जो किताबें भेजीं, उन सबको सच्चा मानें। पिछली उम्मतों ने अपने रसूलों के ज़रिए लाई हुई किताबों में फेर-बदल कर डाला तब अन्त में अल्लाह ने हज़रत मुहम्मद (सल्ल०) के ज़रिए आख़िरी किताब क़ुरआन भेजी जो साफ़ और स्पष्ट है। यह हर प्रकार की ग़लती से पाक और हर क़िस्म के बिगाड़ से महफ़ूज़ है—न केवल मुसलमानों की नज़र में बल्कि सभी ग़ैर—मुस्लिम आलिमों और रिसर्च करनेवालों

के अनुसार भी। लिहाज़ा अब इस किताब को छोड़कर संसार में कोई दूसरी किताब नहीं जिसके ज़रिए ख़ुदा तक पहुँचा जा सकता हो।

इस उनवान (शीर्षक) के तहत कुछ हदीसें पेश की जा रही हैं जिनसे मालूम होगा कि क़ुरआन मजीद पर ईमान लाने का क्या मतलब है और उसके तक़ाज़े क्या हैं?

(26) हज़रत इब्ने अब्बास (रज़ि०) ने फ़रमाया : जो व्यक्ति अल्लाह की किताब (क़ुरआन मजीद) की पैरवी करेगा वह न तो दुनिया में रास्ता से भटकेगा और न आख़िरत में नाकाम व नामुराद होगा। फिर उन्होंने क़ुरआन की यह आयत पढ़ी (सूरा 20 ताहा : 123, जिसका तर्जुमा है) :

"तो जो कोई मेरे इस मार्गदर्शन की पैरवी करेगा, वह न तो दुनिया में भटकेगा और न आख़िरत में नाकाम और नामुराद होगा।"

(हदीस : मिशकात)

(27) हज़रत अबू हुरैरा (रज़ि०) कहते हैं कि अल्लाह के रसूल (सल्ल०) ने फ़रमाया : क़ुरआन में पाँच चीज़ें बयान हुई हैं :

(1) हलाल, (2) हराम, (3) मुहकम (4) मुतशाबेह, (5) अम्साल। तो हलाल को हलाल समझो और हराम को हराम जानो। मुहकम (क़ुरआन का वह भाग जिसमें क़ानून बयान किए गए है) पर अमल करो और मुतशाबह (यानी क़ुरआन का वह भाग जिसमें आख़िरत की बातें बयान हुई हैं जैसे : जन्नत, जहन्नम, अर्श, कुर्सी (राजसिंहासन) आदि पर ईमान रखो (और उसकी कुरेद में न पड़ो;) तथा 'अम्साल' (क़ुरआन का वह भाग जिसमें क़ौमों की तबाही के सबक़आमोज़ क़िस्से बयान हुए है) से नसीहत क़बूल करो। (हदीस : मिशकात)

(28) हज़रत जाबिर (रज़ि०) कहते हैं कि अल्लाह के रसूल (सल्ल०) ने फ़रमाया : अल्लाह ने कुछ बातें फ़र्ज़ (अनिवार्य) की हैं तो उन फ़र्ज़ बातों को अदा करना, उन्हें बरबाद न करना; और कुछ चीज़ों को हराम ठहराया है तो उनको न करना, तथा कुछ हदें मुक़र्रर की हैं तो उनको न फलाँगना एवं कुछ बातों की ओर से बिना किसी भूल के ख़ामोशी इख़्तियार की है तो उनकी कुरेद में न पड़ना। (हदीस : मिशकात)

(29) ज़ियाद इब्ने लबीद (रजि०) कहते हैं कि नबी (सल्ल०) ने एक बात कही (शायद उम्मत पर आनेवाली आज़माइशों की चर्चा की) और

फ़रमाया : ऐसा उस समय होगा जब 'इल्म' उठ जाएगा।

इसपर मैंने कहा : ऐ अल्लाह के रसूल ! इल्म कैसे उठ जाएगा जबकि हम लोग क़ुरआन पढ़ रहे हैं और अपनी औलाद को पढ़ा रहे हैं और हमारी औलाद अपनी औलाद को पढ़ाती रहेगी ?

नबी (सल्ल०) ने फ़रमाया : ज़ियाद ! तुमने क्या बात कही है ! मैं तो तुम्हें मदीने के गिने-चुने लोगों में समझता था जो इस्लाम की गहरी समझ रखते हैं। देखते नहीं हो कि यहूदी और ईसाई तौरात और इंजील की केवल तिलावत (पाठ) करते हैं और उनकी शिक्षाओं (तालीमात) पर कुछ भी अमल नहीं करते। (हदीस : इब्ने-माजा)

व्याख्या : इल्म से मुराद वह इल्म है जो नबियों के द्वारा आता है। यह हदीस बताती है कि सहाबा-किराम (रज़ि०) अपने बच्चों को नबियों वाला इल्म सिखाने-पढ़ाने का बंदोबस्त करते थे।

(30) अबू शुरैह ख़ुज़ाई (रज़ि०) ने फ़रमाया : एक दिन नबी (सल्ल०) अपने कमरे से निकलकर हम लोगों के पास आए और फ़रमाया: क्या तुम लोग इस बात की गवाही नहीं देते कि अल्लाह के सिवा कोई 'इलाह' (उपास्य, प्रभु, शासक) नहीं है और क्या तुम गवाही नहीं देते हो कि मैं अल्लाह का रसूल हूँ? लोगों ने कहा : हाँ, हम इन दोनों बातों की गवाही देते हैं। इसके बाद आप (सल्ल०) ने फ़रमाया : देखो, अल्लाह की किताब—क़ुरआन—का एक सिरा तो अल्लाह के हाथ में है और दूसरा सिरा तुम्हारे हाथ में है। अत: क़ुरआन को मज़बूती से थामे रहना, तो न कभी तुम गुमराह होगे और न तबाह होगे।

(हदीस : तरग़ीब, तरहीब)

व्याख्या : यह हदीस—क़ुरआन मजीद की आयत (अल्लाह की रस्सी को मज़बूती से पकड़ो) की बेहतरीन व्याख्या करती है। क़ुरआन मजीद दरअसल एक ऐसी रस्सी है जिसका एक सिरा अल्लाह के हाथ में है और दूसरा सिरा ईमानवालों के हाथ में है। जब तक मुसलमान इस रस्सी को मज़बूती से थामे रहेंगे, उन्हें ख़ुदा की मदद मिलती रहेगी। दुनिया में भी उन्हें इज़्ज़त और सरबुलन्दी मिलेगी और आख़िरत में भी हमेशा का आराम व सुकून उन्हें हासिल होगा।

क़ुरआन की इस आयत 'वातसेमू बिहबिल्लाहि जमीआ' में 'हब्ल' के मायने 'समझौता' के भी हैं, और यह बात सभी जानते हैं कि समझौता एकतरफ़ा नहीं होता। तो नबी (सल्ल०) के कहने का मक़सद यह है कि क़ुरआन दरअसल एक

इक़रारनामा की दस्तावेज़ है जो मुसलमानों और जगत् के पालनहार के बीच तय पाया है। इस दस्तावेज़ में दो बुनियादी दफ़ा (धाराएं) हैं। पहली दफ़ा तो मुसलमानों के बारे है और दूसरी दफ़ा का संबंध अल्लाह से है। मुसलमानों के बारे में जो दफ़ा है उसमें यह तहरीर है कि ऐ अल्लाह! हम तेरी किताब की रहनुमाई के मुताबिक़ ज़िन्दगी गुज़ारेंगे, तेरे सभी हुक्मों को मानेंगे, तेरे बंदे बनकर जिएँगे और तेरी बंदगी की हालत में मरेंगे। अल्लाह से संबंधित दफ़ा में यह लिखा है कि ऐ मुसलमानो! जब तक तुम अपने क़रार पर क़ायम रहोगे तब तक मैं दुनिया में तुम्हारा हिमायती और मददगार रहूँगा; दुश्मन के मुक़ाबले में तुमको विजयी बनाऊँगा। मगर यदि तुमने अपने क़रार में हेर-फेर किया तो उसी के अनुपात में मेरी हिमायत और मदद से महरूम हो जाओगे और यदि क़रार तोड़ दिया तो मेरी मदद और ताईद से एकदम ही महरूम हो जाओगे। इस क़रार का वर्णन कुरआन में सूरा माइदा, आयत 7-13 में आया है।

6. आख़िरत पर ईमान

आख़िरत पर ईमान लाने का मतलब यह है कि इंसान इस हक़ीक़त को माने कि एक ऐसा दिन आनेवाला है जब उसके जीवन के पूरे रिकार्ड की जाँच होगी। जिनके काम अच्छे होंगे उन्हें इनाम मिलेगा और जिनके काम बुरे होंगे वे सज़ा पाएँगे। सज़ा भी असीमित और इनाम भी असीमित होगा और दुख भी हमेशा का और सुख भी हमेशा का! आख़िरत (पारलौकिक जीवन) के बारे में यहाँ कुछ हदीसें पेश की जा रही हैं जो आख़िरत की ज़िन्दगी के मामलों पर रोशनी डालती हैं।

(31) अब्दुल्लाह इब्ने उमर (रज़ि०) कहते हैं कि अल्लाह के रसूल (सल्ल०) ने फ़रमाया : यदि कोई व्यक्ति इस दुनिया में रहते हुए क़ियामत के दिन को अपनी आँखों से देखना चाहे तो (क़ुरआन की) ये तीन सूरतें पढ़ ले : (1) इज़श्शम्सु कुव्विरत (सूरा 81 अत—तकवीर), (2) इज़स्समाउन्फ़तरत् (सूरा 82, इन्फ़ितार), (3) इज़स्समाउनशक़्क़त (सूरा 84, इंशिक़ाक़)। (इन तीनों सूरतों में बड़े प्रभावी ढंग से क़ियामत का नक़्शा खींचा गया है।) (हदीस : तिरमिज़ी)

(32) हज़रत अबू हुरैरा (रज़ि०) कहते हैं कि अल्लाह के रसूल (सल्ल०) ने (क़ुरआन की यह) आयत "योमइज़िन" (सूरा—99 ज़िलज़ाल आयत—4) अन्त तक पढ़ी, (जिसका तर्जुमा यह है : उस दिन धरती अपने हालात बयान करेगी) और फिर पूछा कि जानते हो,

इसका मतलब क्या है ? लोगों ने कहा : अल्लाह और उसके रसूल ही इसे अच्छी तरह जानते हैं। आप (सल्ल०) ने फ़रमाया : धरती क़ियामत के दिन गवाही देगी कि फ़लाँ बन्दे और फ़लाँ बन्दी ने फ़लाँ दिन और फ़लाँ वक़्त मेरी पीठ पर अच्छा या बुरा काम किया।

(हदीस : तिरमिज़ी)

मुनाफ़िक़ का बुरा अंजाम

(33) हज़रत अबू हुरैरा (रज़ि०) कहते हैं कि अल्लाह के रसूल (सल्ल०) ने फ़रमाया : . . . (क़ियामत के दिन) एक बंदा अल्लाह के सामने आएगा। अल्लाह उससे कहेगा : ऐ फ़लाँ ! क्या मैंने तुझे इज़्ज़त नहीं दी थी ? क्या मैंने तुझे सरदार नहीं बनाया था ? क्या मैंने तुझे बीवी नहीं दी थी ? क्या तेरे क़ब्ज़े में घोड़े और ऊँट नहीं दिए थे ? क्या हमने तुझे मौक़ा नहीं दिया था कि तू अपना शासन चलाता था और लोगों से कर वसूल करता था ? वह इन नेमतों को स्वीकार करेगा। फिर अल्लाह उससे पूछेगा : क्या तू इस बात में यक़ीन रखता था कि तू एक दिन हमारे सामने पेश होगा ? वह कहेगा : नहीं, इस दिन पर मेरा यक़ीन नहीं था। अल्लाह उससे कहेगा : जैसे तूने मुझे दुनिया में भुलाए रखा वैसे ही आज मैं भी तुझे भुला दूँगा (नज़रअंदाज़ कर दूँगा और अपनी रहमत से महरूम कर दूँगा)।

फिर ऐसा ही (आख़िरत का इंकारी) एक दूसरा व्यक्ति ख़ुदा के सामने पेश होगा और उससे भी इसी प्रकार सवाल-जवाब होगा। फिर एक तीसरे व्यक्ति की पेशी होगी और उससे भी वही बातें पूछी जाएँगी जो पहले दो व्यक्तियों से पूछी गई थीं। तो यह (तीसरा व्यक्ति) जवाब देगा : ऐ मेरे रब ! मैं तुझपर ईमान लाया था, मैं नमाज़ पढ़ता था, रोज़े रखता था और तेरी राह में अपनी कमाई हुई दौलत ख़र्च करता था। इसी प्रकार तेज़-तर्रार ज़ुबान से वह अपने बहुत-से दीनी काम गिनाएगा। तब अल्लाह उससे कहेगा : बस, रुक जाओ, यहीं खड़े रहो; हम अभी तेरे बारे में दूसरे गवाही देनेवालों को बुलाते हैं। तो वह अपने मन में कहेगा: भला वह कौन है जो मेरे बारे में गवाही देगा ? अतः उसके झूठ बोलनेवाले मुँह को बंद कर दिया जाएगा और उसकी जांघ, माँस और हड्डियों से पूछा जाएगा तो वे सब उस व्यक्ति के मक्कारी भरे दिखावे के एक-एक अमल को ठीक-ठीक

बयान कर देंगे तथा इस प्रकार बातें बनाने का दरवाज़ा बंद कर दिया जाएगा।

नबी (सल्ल०) ने फ़रमाया : यह वह व्यक्ति है जिसने दुनिया में निफ़ाक़ (कपटाचार) का रवैया अपनाया; यह वह व्यक्ति है जिसपर ख़ुदा का ग़ुस्सा भड़का। (हदीस : मुस्लिम)

(34) हज़रत आइशा (रज़ि०) फ़रमाती हैं कि मैंने अल्लाह के रसूल (सल्ल०) को कभी–कभार नमाज़ों में यह दुआ पढ़ते हुए सुना (जिसका तर्जुमा यह है :) "ऐ अल्लाह! मुझसे आसान हिसाब लीजियो।" मैंने पूछा : ऐ अल्लाह के नबी! आसान हिसाब का क्या मतलब है? आप (सल्ल०) ने फ़रमाया : आसान हिसाब का मतलब यह है कि अल्लाह बंदे का आमालनामा (कर्म-पत्री) देखेगा और उसकी बुराइयों को माफ़ कर देगा। फिर फ़रमाया : ऐ आइशा! हिसाब लेते समय जिससे एक-एक अमल पर जिरह की गई वह तबाह हुआ। (हदीस : मुस्नद अहमद)

व्याख्या : क़ुरआन मजीद और बहुत-सी हदीसों में यह ख़ुशख़बरी दी गई है कि जो लोग अल्लाह के मार्ग पर चलेंगे तथा जिन बातों के करने का हुक्म दिया गया है, उन्हें पूरा कर दिखाएँगे तथा जिन बातों से मना किया गया है उनके क़रीब न फटकेंगे तो अल्लाह हिसाब के दिन उनपर अपनी दया करेगा, छोटी-छोटी ग़लतियों से दरगुज़र करेगा और उन्हें जन्नत में आबाद करेगा। इसके बरख़िलाफ़ जो लोग फ़र्ज़ और वाजिब हुक्मों को जानते-बूझते तोड़ेंगे और जिन गुनाहों से मना किया गया है उन्हें गुनाह जानते हुए करेंगे तो ऐसे लोगों से हिसाब लेते वक़्त कड़ाई से मामला होगा। एक-एक ग़लती पर जिरह की जाएगी। स्पष्ट है, ऐसा व्यक्ति बुरे अंजाम से कैसे बच सकता है?

(35) हज़रत अबू सईद ख़ुदरी (रज़ि०) कहते हैं कि मैं नबी (सल्ल०) के पास आया और पूछा कि हज़रत! वह दिन जिसके बारे में (क़ुरआन मजीद) की अयात "यौ-म यक़ूमुन्नासु लिरब्बिल आलमीन" (सूरा 83, तर्जुमा : उस दिन जबकि सब लोग दुनिया के रब के सामने खड़े होंगे) नाज़िल हुई, भला उस दिन कौन अल्लाह के सामने खड़ा रह सकेगा (जबकि वह एक दिन हज़ार साल के बराबर होगा) तो आप (सल्ल०) ने फ़रमाया : वह दिन मोमिन के लिए हलका और मुख़्तसर होगा, फ़र्ज़ नमाज़ की तरह। (हदीस : मिशकात)

व्याख्या : हज़रत अबू सईद ख़ुदरी (रज़ि०) को आख़िरत की कितनी फ़िक्र थी—यह हदीस इसपर रोशनी डालती है। उन्हें नबी (सल्ल०) ने बताया कि उस दिन की सख़्ती तो अपराधियों और बाग़ियों के लिए है; उन्हें वह एक दिन हज़ार साल का लगेगा। मुसीबत में गिरफ़्तार आदमी का दिन लम्बा होता है, काटे नहीं कटता। हाँ, बाअमल मुसलमानों के लिए वह दिन हल्का-फुल्का होगा, चैन का दिन होगा। इसी दिन के सुख के लिए तो उन्होंने दुनिया में हर प्रकार के दुख उठाए थे।

(36) हज़रत अनस (रज़ि०) से रिवायत है कि नबी (सल्ल०) ने फ़रमाया : क़ियामत के दिन दुनिया के सबसे ज़्यादा ख़ुशहाल, जहन्नम के हक़दार आदमी को लाया जाएगा और उसे जहन्नम में डाल दिया जाएगा। जब जहन्नम की आग उसके बदन पर अपना पूरा असर दिखाएगी तो उससे पूछा जाएगा :

"ऐ आदम के बेटे! तूने कभी ख़ुशहाली का दौर देखा है? कभी ऐशो- आराम के दिन देखे हैं?"

वह कहेगा : "नहीं, तेरी क़सम, ऐ मेरे रब! कभी नहीं!"

फिरः दुनिया में सबसे तंग ज़िन्दगी गुज़ारनेवाले व्यक्ति—जो जन्नत में जाने का हक़दार होगा—को लाया जाएगा और उसे जन्नत में रखा जाएगा। जब उसपर जन्नत की नेमतों का रंग खूब चढ़ जाएगा तब उससे पूछा जाएगा :

"ऐ आदम के बेटे! दुनिया में कभी तूने तंगी देखी है? कभी तुझपर तकलीफ़ों का दौर आया है?"

वह कहेगा : "नहीं, ऐ मेरे रब! मैं कभी तंगदस्ती और मोहताजी में गिरफ़्तार नहीं हुआ, मुझपर तकलीफ़ों का कोई दौर कभी नहीं आया।"

(हदीस : मुस्लिम)

ये कुछ हदीसें आख़िरत के शीर्षक, के तहत पेश की गईं। इंशाअल्लाह आगे इस किताब में आख़िरत के बारे में बहुत-सी चीज़ें आएँगी जिनमें तालीम के लिए बहुत कुछ सामान है तथा साथ ही वे आख़िरत के तक़ाज़ों पर भी रोशनी डालती हैं।

इबादतें

नमाज़ और उससे संबंधित बातें

मिस्वाक (दातुन) और अल्लाह की ख़ुशनूदी

(37) हज़रत आइशा (रज़ि०) की रिवायत है कि नबी (सल्ल०) ने फ़रमाया : दातुन (मिस्वाक) करने से मुँह की सफ़ाई होती है (कीड़े मर जाते हैं), अल्लाह की ख़ुशनूदी हासिल होती है और (जैसा कि एक अन्य रिवायत में है) इससे आँख की रोशनी बढ़ती है।

(हदीस : अल-मुंज़िरी)

वुज़ू : मुस्लिम की पहचान

(38) अब्दुल्लाह इब्ने उमर (रज़ि०) नबी (सल्ल०) से रिवायत करते हैं कि जिबरील (अलै०) ने आप (सल्ल०) से पूछा कि 'इस्लाम क्या है ?' आप (सल्ल०) ने जवाब दिया : इस्लाम यह है कि तुम अल्लाह की तौहीद (यानी ख़ुदा के एक होने) और मुहम्मद (सल्ल०) के अल्लाह के पैगम्बर होने की गवाही दो, नमाज़ क़ायम करो, ज़कात दो, हज और उमरा करो, नहाने की ज़रूरत पड़ जाए तो नहाओ, ठीक ढंग से वुज़ू करो और रमज़ान के रोज़े रखो।

जिबरील (अलै०) ने कहा : यदि मैं ये सब कर लूँ तो 'मुस्लिम' हो जाऊँगा ? आप (सल्ल०) ने फ़रमाया : हाँ। (हदीस : अल-मुंज़िरी)

व्याख्या : यह लम्बी हदीस का एक भाग है जिसे 'हदीसे-जिबरील' के नाम से जाना जाता है। यहाँ इस भाग को पेश करने का मक़सद यह है कि आदमी अच्छी तरह वुज़ू करे यानी सुन्नत के मुताबिक़ वुज़ू करे। अच्छी तरह वुज़ू करने का फ़ायदा यह है कि नमाज़ में दिल लगेगा। विनम्रता और आजिज़ी में इज़ाफ़ा होगा और शैतान का हमला कम से कम होगा और यह बहुत बड़ा फ़ायदा है।

कामिल नमाज़ से मग़फ़िरत होती है

(39) हज़रत उबादा इब्ने सामित (रज़ि०) कहते हैं कि अल्लाह के रसूल (सल्ल०) ने फ़रमाया : ये पाँच नमाज़ें हैं जिन्हें अल्लाह ने अपने

बंदों पर 'फ़र्ज़' किया है। तो जिसने अच्छे तरीक़े से वुज़ू किया और समय पर नमाज़ पढ़ी और रुकूअ और सजदे ठीक से किए और उसका दिल अल्लाह के सामने नमाज़ में झुका रहा, तो अल्लाह का उससे मग़फ़िरत का वादा है। और जिसने यह सब न किया तो उससे अल्लाह का वादा नहीं—वह चाहेगा तो बख़्श देगा, चाहेगा अज़ाब देगा। (मग़फ़िरत और अज़ाब में से जिसका वह अधिकारी होगा, वही मिलेगा। इल्म रखनेवाला और सब कुछ जाननेवाला ख़ुदा है। इसलिए वह हक़ और सलाहियत की बुनियाद पर मामला करेगा)

(हदीस : अबू दाऊद)

नमाज़ की अहमियत

(40) हज़रत अब्दुल्लाह इब्ने क़ुर्त (रज़ि०) का बयान है कि अल्लाह के रसूल (सल्ल०) ने फ़रमाया : क़ियामत के दिन सबसे पहले नमाज़ का हिसाब लिया जाएगा। यदि बंदा उसमें पूरा उतरा तो दूसरे आमाल में भी सफल होगा और यदि नमाज़ में पूरा न उतरा तो दूसरे सभी आमाल ख़राब हो जाएँगे। (हदीस : तबरानी)

व्याख्या : नमाज़ तौहीद के अक़ीदे की अमली शक्ल है और दीन की बुनियाद है। यदि बुनियाद मज़बूत हो तो इमारत मज़बूत होगी, और बुनियाद कमज़ोर हो तो इमारत कमज़ोर होगी।

गुनाहों की आग बुझाने का समय

(41) हज़रत अनस इब्ने मालिक (रज़ि०) कहते हैं कि अल्लाह के रसूल (सल्ल०) ने फ़रमाया : हर नमाज़ के वक़्त अल्लाह का एक फ़रिश्ता आवाज़ लगाता है। कहता है : ऐ आदम के बेटो ! गुनाह की जो आग तुमने भड़काई है उसे बुझाने के लिए उठो। (अल-मुंज़िरी, तबरानी)

व्याख्या : इसका मतलब यह है कि दो नमाज़ों के बीच के समय में छोटी-बड़ी बहुत-सी ग़लतियाँ हो जाती हैं। यही ग़लतियाँ उस दूसरी दुनिया (आख़िरत) में आग की शक्ल इख़्तियार कर लेंगी जिसके बुझाने का तरीक़ा अल्लाह का फ़रिश्ता यह बताता है कि "अपनी भड़काई हुई आग बुझाने के लिए मस्जिद में आओ, नमाज़ पढ़ो, अल्लाह से माफ़ी माँगो। नमाज़ और तौबा ही से यह आग बुझती है।" सही बुख़ारी की हदीस के अलफ़ाज़ का तर्जुमा यह है :

"पाँच वक़्त की नमाज़ों के ज़रिए अल्लाह ख़ताएँ माफ़ करता है।"

नमाज़ यदि सच्ची नमाज़ हो तो वह इंसान की ज़िन्दगी को बुराइयों से पाक कर देती है।

मुनाफ़िक़ों की नमाज़

(42) हज़रत अनस (रज़ि०) कहते हैं कि अल्लाह के रसूल (सल्ल०) ने फ़रमाया : यह मुनाफ़िक़ की नमाज़ है, वह बैठा सूरज ढलने का इंतिज़ार करता रहता है यहाँ तक कि उसकी किरणें पीली पड़ जाती हैं और मुशरिकों (बहुदेववादियों) के सूर्य-पूजा का समय आ जाता है। तब वह उठता है और जल्दी-जल्दी चार रक्अतें निपटा लेता है। ऐसा व्यक्ति अपनी नमाज़ में अल्लाह को तनिक भी याद नहीं करता।

(हदीस : मुस्लिम)

नमाज़ की चोरी

(43) हज़रत अबू क़तादा (रज़ि०) कहते हैं कि अल्लाह के रसूल (सल्ल०) ने फ़रमाया : सबसे घटिया चोर वह है जो अपनी नमाज़ में चोरी करे। लोगों ने पूछा : ऐ अल्लाह के रसूल ! नमाज़ में चोरी का क्या मतलब है ? आप (सल्ल०) ने बताया : नमाज़ में चोरी यह है कि वह 'रुकूअ' और 'सजदा' ठीक से न करे। (हदीस : अल-मुंज़िरी)

नमाज़ से ग़ाफ़िल होने से ज़िम्मेदारी का एहसास ख़त्म हो जाता है

(44) हज़रत उमर (रज़ि०) ने इस्लामी राज्य के गवर्नरों को यह लिखित आदेश भेजा :

तुम्हारी तमाम ज़िम्मेदारियों में सबसे ज़्यादा अहमियत मेरे नज़दीक नमाज़ की है। तो जो व्यक्ति अपनी नमाज़ों की अच्छी तरह देखभाल करेगा (यानी ठीक तरीक़े से नमाज़ पढ़ेगा) और देखभाल के साथ उसकी पाबंदी करेगा तो वह पूरे दीन की हिफ़ाज़त करेगा। और जिसने अपनी नमाज़ बर्बाद की वह अन्य मामलों और ज़िम्मेदारियों को तो और भी ज़्यादा बर्बाद करनेवाला साबित होगा।

(हदीस : मिशकात)

मस्जिद से लगाव ईमान की निशानी है

(45) हज़रत अबू सईद ख़ुदरी (रज़ि०) नबी (सल्ल०) से रिवायत

करते हैं कि आप (सल्ल०) ने फ़रमाया : जब तुम किसी व्यक्ति को मस्जिदों का आदी पाओ (यानी पाबंदी से उसे मस्जिद में जमाअत के साथ नमाज़ पढ़ते देखो) तो उसके मोमिन होने की गवाही दो।

(हदीस : तिरमिज़ी, इब्ने-माजा)

जमाअत के साथ नमाज़ अदा करना अकेले नमाज़ पढ़ने से ज़्यादा अफ़ज़ल है

(46) अब्दुल्लाह इब्ने उमर (रज़ि०) कहते हैं कि अल्लाह के रसूल (सल्ल०) ने फ़रमाया : अकेले नमाज़ पढ़नेवाले के मुक़ाबले में जमाअत के साथ अदा की जानेवाली नमाज़ सत्ताईस गुना अधिक फ़ज़ीलत रखती है। (हदीस : बुख़ारी, मुस्लिम)

जमाअत से नमाज़ अदा करने का एहतिमाम

(47) अब्दुल्लाह इब्ने मसऊद (रज़ि०) फ़रमाते हैं कि नबी (सल्ल०) के ज़माने में हमारा हाल यह था कि हममें से कोई व्यक्ति जमाअत से नमाज़ अदा करने में पीछे नहीं रहता था; सिवाय खुले हुए मुनाफ़िक़ के, जिसे सब जानते थे और मरीज़ के। बल्कि उस ज़माने में लोगों का यह हाल था कि बीमार होते हुए भी दो आदमियों के सहारे मस्जिद में पहुँचते और जमाअत में शरीक होते।

अब्दुल्लाह बिन मसऊद (रज़ि०) ने यह भी कहा कि अल्लाह के रसूल (सल्ल०) ने हमको 'सुन्नते-हुदा' सिखाई। (सुन्नते-हुदा' उन सुन्नतों को कहते हैं जिनको क़ानूनी हैसियत हासिल है और जिनपर अमल करने की मुसलमानों को हिदायत दी गई) जमाअत से नमाज़ अदा करना भी 'सुन्नते-हुदा' का एक अंग है जो कि उस मस्जिद में पढ़ी जाएगी जिसमें अज़ान होती है।

एक दूसरी रिवायत में यह है कि अब्दुल्लाह बिन मसऊद (रज़ि०) ने फ़रमाया : जिस व्यक्ति को यह बात पसंद हो कि वह कल क़ियामत के दिन एक फ़रमाँबरदार बंदे की हैसियत से अल्लाह से मिले तो उसे चाहिए कि पाँचों वक़्तों की नमाज़ पाबंदी से मस्जिद में पढ़े। क्योंकि अल्लाह तआला ने तुम्हारे नबी (सल्ल०) को क़ानूनी सुन्नतों (तौर-तरीक़ों) की तालीम दी है और नमाज़े जमाअत से अदा करना क़ानूनी सुन्नतों में से हैं। यदि तुम अपने घरों में (फ़र्ज़) नमाज़

पढ़ोगे जैसा कि ये मुनाफ़िक़ लोग पढ़ते हैं तो तुम अपने नबी (सल्ल०) के तरीक़े को छोड़ दोगे; और यदि नबी (सल्ल०) का तरीक़ा छोड़ दोगे तो गुमराह हो जाओगे। (हदीस : मुस्लिम)

जमाअत से नमाज़ न पढ़ने का नुक़सान

(48) हज़रत अबू दरदा (रज़ि०) का बयान है कि अल्लाह के रसूल (सल्ल०) ने फ़रमाया : जिस किसी बस्ती या गाँव में तीन मुसलमान हों और वहाँ जमाअत से नमाज़ न पढ़ी जाती हो तो शैतान का उनपर ग़लबा (प्रभुत्व) हो जाता है। तो ऐ लोगो! नमाज़ जमाअत के साथ पाबंदी से अदा करो, क्योंकि भेड़िया उस बकरी को खा जाता है जो अपने रेवड़ से दूर और चरवाहे की हिफ़ाज़त से महरूम हो जाती है।

(हदीस : अबू दाऊद)

मजबूरी के बिना जमाअत छोड़ देने का नतीजा

(49) हज़रत अब्दुल्लाह इब्ने अब्बास (रज़ि०) से रिवायत है कि नबी (सल्ल०) ने फ़रमाया : जिस व्यक्ति ने ख़ुदा की ओर बुलानेवाले 'मुअज़्ज़िन' (अज़ान देनेवाले) की अज़ान सुनी और उसे कोई मजबूरी भी नहीं है, फिर भी उसने अकेले अपने घर में नमाज़ पढ़ ली तो उसकी यह नमाज़ क़ियामत के दिन क़बूल न होगी। लोगों ने पूछा : मजबूरी (उज़्र) का मलतब क्या है? आप (सल्ल०) ने फ़रमाया : डर या बीमारी। (हदीस : अबू दाऊद)

व्याख्या : डर से मुराद ज़ान जाने का डर है। रास्ते में कोई फाड़ खानेवाला जानवर या अजगर आदि है, तथा बीमारी से मुराद वह हालत है जिसकी वजह से आदमी मस्जिद जाने में दिक़्क़त महसूस करे—यह बात मरीज़ ही समझ सकता है और मामला अल्लाह और उसके बीच है। तो अपने नफ़्स (मन) को असीमित एलाउंस देना ख़तरनाक है। ग़ैरमामूली सर्दी, आँधी और तूफ़ानी बारिश भी 'उज़्र' में शामिल है। इसी प्रकार ठीक नमाज़ के वक़्त पाख़ाने-पेशाब की ज़रूरत पड़ जाए तो यह भी शरई मजबूरी है।

फ़ज्र और अस्र की नमाज़ों की अहमियत

(50) हज़रत अबू हुरैरा (रज़ि०) कहते हैं कि अल्लाह के रसूल (सल्ल०) ने फ़रमाया : कुछ फ़रिश्ते हैं जिनकी ड्यूटी रात के समय होती है और कुछ की दिन में। ये बारी-बारी तुम्हारे बीच आते हैं और

फ़ज्र और अस्र की नमाज़ों में जमा होते हैं। फ़ज्र की नमाज़ से फ़ारिग़ होकर रात की ड्यूटी वाले फ़रिश्ते चले जाते हैं। इसी तरह अस्र की नमाज़ तुम्हारे साथ अदा करने के बाद दिन की ड्यूटी वाले फ़रिश्ते वापस चले जाते हैं और रात वाले रह जाते हैं। जब ये अपने रब के सामने हाज़िर होते हैं तो वह पूछता है : तुमने मेरे बंदों को किस हाल में छोड़ा? तो वे कहते हैं : ऐ रब! हमने उन्हें नमाज़ पढ़ते हुए छोड़ा और जब उनके पास अपनी ड्यूटी पर पहुँचे तो भी उन्हें नमाज़ पढ़ते हुए पाया। (हदीस : बुख़ारी, मुस्लिम)

व्याख्या : यह हदीस अस्र और फ़ज्र की नमाज़ की अहमियत को अच्छी तरह बताती है। हम गुनहगार नमाज़ियों के लिए इससे अधिक ख़ुशक़िस्मती की बात और क्या होगी कि अस्र और फ़ज्र के समय फ़रिश्तों के साथ नमाज़ पढ़ना नसीब हो जाए। फ़ज्र का वक़्त बड़ी मीठी नींद का वक़्त होता है जबकि अस्र का समय बड़ी भागदौड़ और व्यस्तता का होता है। मगर अल्लाह के बंदे अपनी मीठी नींद को ख़ुदा की पुकार पर क़ुरबान करते और सारी कारोबारी व्यस्तताओं को छोड़कर फ़ज्र और अस्र की जमाअत में शरीक होते हैं। ऐसे ही बंदों की तारीफ़ क़ुरआन में की गई है। कहा गया : ये ऐसे लोग हैं जिन्हें व्यापार और ख़रीद-फ़रोख़्त अल्लाह की याद और जमाअत से नमाज़ अदा करने से ग़ाफ़िल नहीं करती। (सूरा-24 नूर, आयत 37) उन्हें ग़ाफ़िल कर देनेवाली चीज़ें नमाज़ से उनका ध्यान क्यों नहीं हटा पातीं? यह बात आगे बताई गई : "उन्हें हर समय धड़का लगा रहता है हिसाब-किताब के दिन का" कि यदि अल्लाह की याद से लापरवाही बरती तो उसे क्या मुँह दिखाएँगे? यही धड़का उन्हें हर पल बेचैन किए रहता है, ग़ाफ़िल नहीं होने देता।

नमाज़ इस्लाम की आख़िरी कड़ी है

(51) हज़रत अबू उमामा (रज़ि०) कहते हैं कि अल्लाह के रसूल (सल्ल०) ने फ़रमाया : एक ऐसा समय आएगा जब इस्लाम की कड़ियाँ एक-एक करके बिखरना शुरू होंगी। जब भी कोई कड़ी टूटेगी, लोग उसे ठीक करने के बजाए बाक़ी बातों पर संतोष कर लेंगे। चुनाँचे सबसे पहले ख़िलाफ़ते-राशिदा का क्रम टूटना शुरू होगा और आख़िर में नमाज़ का शीराज़ा भी बिखर जाएगा।

(हदीस : तरग़ीब, सही इब्ने हिब्बान के हवाले से)

व्याख्या : यानी दीन की बुनियादें एक-एक करके धीरे-धीरे ख़त्म होती चली

जाएँगी। सबसे पहले मुस्लिम समाज का मुहाफ़िज़ इदारा ख़िलाफ़ते-इलाहिया—(इस्लाम की राजनीतिक न्याय-व्यवस्था) ख़त्म होगी, फिर तेज़ी से पतन होता जाएगा। यहाँ तक कि इस ज़ंजीर की अंतिम कड़ी भी टूट जाएगी।

मुस्लिम उम्मत के ज़्यादातर लोग नमाज़ छोड़ बैठेंगे और यह मुस्लिम उम्मत के पतन का आख़िरी बिंदु होगा। आज मुस्लिम उम्मत अपने नबी (सल्ल०) की इस हदीस की रोशनी में अपनी तस्वीर देख सकती है और अपनी बिगड़ी हुई तस्वीर को ठीक कर सकती है। मुसलमान अपनी इस्लाह की शुरुआत नमाज़ से करे और अपने जिद्दोजुहद का मक़सद अल्लाह के आदेशों पर आधारित शासन-व्यवस्था को क़ायम करना बना ले ।

नफ़्ल नमाज़ें घर में पढ़नी अफ़ज़ल हैं

(52) हज़रत अब्दुल्लाह इब्ने मसऊद (रज़ि०) कहते हैं कि मैंने अल्लाह के रसूल (सल्ल०) से पूछा : (नफ़्ल) नमाज़ अपने घर में पढ़नी अफ़ज़ल है या मस्जिद में ? आप (सल्ल०) ने फ़रमाया : क्या तुम नहीं देखते कि मेरा घर मस्जिद से कितना नज़दीक है (परन्तु मैं नफ़्ल नमाज़ें अपने कमरे में ही पढ़ता हूँ) मेरे नज़दीक (नफ़्ल) नमाज़ मस्जिद में पढ़ने के मुक़ाबले में घर में पढ़ना ज़्यादा पसंदीदा है। हाँ, फ़र्ज़ नमाज़ मस्जिद में ही (जमाअत से) पढ़ी जाएगी।

(हदीस : मुस्नद अहमद, इब्ने-माजा)

इमाम की ज़िम्मेदारी

(53) अब्दुल्लाह इब्ने उमर (रज़ि०) से रिवायत है कि अल्लाह के रसूल (सल्ल०) ने फ़रमाया : जो व्यक्ति लोगों की इमामत करे (नमाज़ पढ़ाए), उसे तक़वा का मार्ग अपनाना ज़रूरी है यानी नेक काम करे और गुनाहों के कामों से बचे। उसे मालूम होना चाहिए कि वह लोगों की नमाज़ों का ज़िम्मेदार है और उसके बारे में क़ियामत के दिन उससे पूछ-गच्छ होगी। यदि उसने सही ढंग से इमामत की तो उसके पीछे नमाज़ पढ़नेवालों (मुक़्तदियों) के बराबर उसे बदला मिलेगा और इससे उसके पीछे नमाज़ पढ़नेवालों को मिलनेवाले बदले में कोई कमी न होगी। और उससे जो भी ग़लतियाँ होंगी उसका बवाल भी उसी पर पड़ेगा (मुक़्तदियों पर उसका कोई असर नहीं पड़ेगा)।

(अल-मुंज़िरी, तबरानी के हवाले से)

मुक़्तदियों का ख़याल

(54) हज़रत अबू हुरैरा (रज़ि०) कहते हैं कि नबी (सल्ल०) ने फ़रमाया: जब तुममें से कोई इमामत करे तो (हालात का अंदाज़ा करके और नमाज़ियों का लिहाज़ करते हुए) हल्की (मुख़्तसर) नमाज़ पढ़ाए। इसलिए कि पीछे कमज़ोर भी होंगे, बीमार भी होंगे और बूढ़े भी। हाँ, जब कोई अपनी निजी (अकेले) नमाज़ पढ़े तो जितनी लम्बी नमाज़ पढ़ना चाहे, पढ़े। (हदीस : बुख़ारी)

(55) हज़रत अब्दुल्लाह बिन मसऊद (रज़ि०) कहते हैं कि एक व्यक्ति अल्लाह के रसूल (सल्ल०) के पास आया और कहा : फ़लाँ इमाम साहब फ़ज्र की नमाज़ लम्बी पढ़ाते हैं, इस वजह से मैं फ़ज्र की नमाज़ उनके पीछे नहीं पढ़ पाता। (अब्दुल्ल्लाह बिन मसऊद (रज़ि०) कहते हैं कि) मैंने किसी तक़रीर और नसीहत में नबी (सल्ल०) को इतना गुस्से में नहीं देखा जितना उस दिन गुस्से में देखा। आप (सल्ल०) ने कहा : ऐ लोगो, तुम्हारे कुछ लोग (अपनी लम्बी नमाज़ों के ज़रिए) अल्लाह के बन्दों को अल्लाह की इबादत से बिदकाते और उससे दूर भगाते हैं। (ख़बरदार !) तुम्हारे बीच जो व्यक्ति भी (नमाज की) इमामत करे मुख़्तसर (हलकी) नमाज़ पढ़ाए, क्योंकि उसके पीछे बूढ़े भी होंगे और बच्चे भी और कामकाज पर निकलनेवाले ज़रूरतमंद भी। (हदीस : बुख़ारी, मुस्लिम)

व्याख्या : हलकी या मुख़्तसर नमाज़ का मतलब यह है कि रुकूअ और सजदा ठीक से अदा किया जाए। लम्बी-लम्बी सूरतें न पढ़ी जाएँ, और लम्बे लम्बे रुकूअ और सजदे न किए जाएँ। रुकूअ और सजदों में तीन-तीन बार तस्बीह पढ़ें इस प्रकार कि हर बार सांस तोड़ दें, बस यह काफ़ी है। ख़ासतौर से देहातों में और व्यापारी वर्ग की मस्जिदों में और गर्मी के दिनों में।

यह हदीस बताती है कि नबी-ए-करीम (सल्ल०) के ज़माने में छोटी उम्र के बच्चे भी जमाअत के साथ मस्जिद में नमाज़ पढ़ते थे।

मुख़्तसर क़िरअत

(56) हज़रत जाबिर (रज़ि०) कहते हैं कि मुआज़ इब्ने जबल (रज़ि०), नबी (सल्ल०) की इमामत में नमाज़ पढ़ते फिर जाकर अपने मुहल्ले के लोगों को नमाज़ पढ़ाते। एक रात इशा की नमाज़ उन्होंने नबी

(सल्ल०) के साथ पढ़ी और फिर जाकर (मुहल्ले के लोगों को) नमाज़ पढ़ाई और नमाज़ में (क़ुरआन मजीद की सबसे लम्बी सूरत) सूरा बक़रा शुरू कर दी तो एक आदमी ने सलाम फेर दिया और अलग अपनी नमाज़ पढ़कर घर चला गया। दूसरे नमाज़ियों ने नमाज़ पढ़ने के बाद जाकर उससे कहा : क्या तुम मुनाफ़िक़ हो गए? उसने कहा : नहीं, मैं मुनाफ़िक़ नहीं हूँ। ख़ुदा की क़सम! मैं अल्लाह के रसूल (सल्ल०) के पास जाऊँगा और मुआज़ की लम्बी नमाज़ की बात बताऊँगा। चुनाँचे वह आदमी नबी (सल्ल०) के पास गया और कहा : ऐ अल्लाह के रसूल! हम सिंचाई के ऊँट रखते हैं। दिन भर उजरत पर लोगों के बाग़ों और खेतों की सिंचाई का काम करते हैं जबकि मुआज़ का हाल यह है कि इशा की नमाज़ आपके साथ पढ़कर गए और हमारी मस्जिद में सूरा बक़रा शुरू कर दी। (हम दिन भर के थके-मांदे इतनी देर तक कैसे खड़े रह सकते हैं?) यह सुनकर नबी (सल्ल०) ने मुआज़ (रज़ि०) की ओर देखा और कहा : क्या तुम, लोगों को आज़माइश में डालोगे? 'वश्शम्से व ज़ुहाहा', 'वल्लैलि इज़ा यग़शा' और 'सब्बिहिस्मि रब्बिकल-आला' (जैसी छोटी सूरतें) पढ़ा करो। (हदीस : बुख़ारी, मुस्लिम)

ज़कात

आर्थिक संतुलन बनाने में मददगार

(57) हज़रत इब्ने अब्बास (रज़ि०) से रिवायत है कि अल्लाह के रसूल (सल्ल०) ने फ़रमाया : बेशक अल्लाह ने मुस्लिम समाज के लिए ज़कात फ़र्ज़ की है जो उसके मालदारों से वुसूल की जाएगी और उसके ज़रूरतमंदों को लौटाई जाएगी। (हदीस : बुख़ारी, मुस्लिम)

व्याख्या : हदीस में अरबी मूल शब्द 'सदक़ा' इस्तेमाल हुआ है। यह शब्द क़ानूनी ज़कात के लिए भी इस्तेमाल होता है। इसका यहाँ यही अर्थ मुराद है। इसके साथ ही 'सदक़ा' उस माल को भी कहते हैं जिसे इंसान अपनी ख़ुशी से अल्लाह के रास्ते में देता है।

'लौटाई जाएगी' का शब्द साफ़ बताता है कि ज़कात असल में मुस्लिम समाज के ग़रीबों का हक़ है जो उन्हें दिलवाया जाएगा।

ज़कात न देने का अन्जाम

(58) हज़रत अबू हुरैरा (रज़ि०) से रिवायत है कि नबी (सल्ल०) ने फ़रमाया : जिस व्यक्ति को अल्लाह ने (उसकी ज़रूरत से अधिक) माल दिया मगर उसने उसकी ज़कात अदा न की तो उसका माल क़ियामत के दिन निहायत ज़हरीले साँप की शक्ल इख़्तियार करेगा, जिसके सिर पर दो काले बिन्दु होंगे (जो अत्यन्त ज़हरीले साँप की पहचान है) और वह उसके गले का तौक़ बन जाएगा। फिर उसके दोनों जबड़ों को पकड़ेगा और कहेगा : मैं तेरा (प्यारा) माल हूँ, मैं तेरा ख़ज़ाना हूँ (जिसे तूने जमा कर रखा था और ज़कात नहीं निकाली थी) फिर आप (सल्ल०) ने क़ुरआन मजीद की यह आयत पढ़ी : वला यह्सबन्न. . . (जिसका तर्जुमा यह है कि "वे लोग जो अपना माल ख़र्च करने में कंजूसी करते हैं, वे हरगिज़ यह न समझें कि उनका यह माल उनके लिए बेहतर साबित होगा। नहीं, बल्कि यह तो उनके गले का तौक़ बनेगा (यानी बड़ी तबाही का सबब होगा।) (हदीस : बुख़ारी)

ज़कात न देना माल की तबाही का सबब

(59) हज़रत आइशा (रज़ि०) कहती हैं कि मैंने अल्लाह के रसूल (सल्ल०) को यह कहते हुए सुना : जिस माल की ज़कात न निकाली जाए और उसी में वह मिली-जुली रहे तो वह उस माल को तबाह करके छोड़ती है। (हदीस : मिशकात)

ज़कात की अहमियत

(60) हज़रत अब्दुल्लाह इब्ने-मसऊद (रज़ि०) कहते हैं कि हमको नमाज़ क़ायम करने और ज़कात देने का हुक्म दिया गया है और जो व्यक्ति नमाज़ पढ़े मगर ज़कात न दे तो उसकी नमाज़ अल्लाह के यहाँ क़बूल न होगी। एक दूसरी हदीस में आया है : ऐसा व्यक्ति मुस्लिम नहीं है। उसको उसका अमल क़ियामत में कुछ फ़ायदा न पहुँचाएगा।

(तर्ग़ीब, तबरानी से उद्धृत)

ज़कात, ख़ुदा का हक़ है

(61) हज़रत अबू हुरैरा (रज़ि०) कहते हैं कि नबी (सल्ल०) ने फ़रमाया: जब तुमने अपने माल की (फ़र्ज़) ज़कात अदा कर दी तो तुम अल्लाह के हक़ से बरी हो गए। हाँ, जिसने हराम माल जमा किया और उसे अल्लाह की राह में ख़र्च किया तो उसपर उसे कोई बदला नहीं मिलेगा, बल्कि उलटे गुनाह होगा।

('सहीह इब्ने-ख़ुज़ैमा' व 'सहीह इब्ने-हिब्बान')

ईदुल-फ़ित्र की ज़कात

(62) अल्लाह के रसूल (सल्ल०) ने फ़ित्र की ज़कात (फ़ितरा) देनी अपनी उम्मत पर वाजिब की ताकि रोज़े की हालत में रोज़ेदार से जो फ़िज़ूल और बेहयाई की बातें हो जाया करती हैं, कफ़्फ़ारा (प्रायश्चित) बनें और दूसरी ओर ग़रीबों और मिस्कीनों के खाने-पीने का इन्तिज़ाम भी हो जाए। (हदीस : अबू दाऊद)

व्याख्या : यानी 'फ़ितरा' निकालने की दो मस्लहतें हैं : एक यह कि रोज़े की हालत में भरसक कोशिश के बावजूद जो कोताहियाँ और भूल-चूक हो जाती हैं, उनका निदान हो जाए। दूसरी यह कि उस (ईदुल-फित्र के) दिन समाज के ग़रीब

लोगों के घर फ़ाक़ा (उपवास) न हो। शायद इसी लिए घर के छोटे-बड़े सभी लोगों की ओर से सदका-ए-फ़ित्र अदा करना वाजिब ठहराया गया और ईद की नमाज़ से पहले उसे अदा कर देने पर बल दिया गया।

अनाज की ज़कात

(63) हज़रत अब्दुल्लाह इब्ने उमर (रज़ि०) का बयान है कि नबी (सल्ल०) ने फ़रमाया : जो ज़मीनें बारिश के पानी से या बहते चश्मे (स्रोत) से सैराब होती हैं या नदी से क़रीब होने की वजह से पानी देने की ज़रूरत न पड़ती हो, उनकी पैदावार का दसवाँ हिस्सा ज़कात की मद में निकाला जाएगा, तथा जिन ज़मीनों को सींचने की ज़रूरत पड़ती हो, उनकी पैदावार का बीसवाँ हिस्सा निकाला जाएगा।

(हदीस : सहीह बुख़ारी)

रोज़ा

रोज़ा, जिस्म की ज़कात है

(64) हज़रत अबू हुरैरा (रज़ि०) कहते हैं कि नबी (सल्ल०) ने फ़रमाया: हर गंदगी को दूर करने के लिए अल्लाह ने कोई न कोई चीज़ बनाई है, और जिस्म को (रूहानी गन्दगियों और बीमारियों से) पाक करनेवाली चीज़ रोज़ा है, और रोज़ा आधा सब्र (संयम) है।

(हदीस : इब्ने-माजा)

व्याख्या : आधुनिक चिकित्सा शोधों से मुसलमान और ग़ैर मुस्लिम, सभी डॉक्टर इस बात पर एकमत हैं कि इस्लामी तरीक़े से रोज़ा रखने से दिल की ख़तरनाक बीमारियों से नजात मिल जाती है। जर्मनी तथा अमेरिका में ऐसे अस्पताल भी हैं जिनमें ख़तरनाक बीमारियों का इलाज सिर्फ़ रोज़े से किया जाता है।

रोज़े के 'आधा सब्र' होने का मतलब यह है कि रोज़ा एक ऐसी इबादत है जो दूसरी इबादतों के मुक़ाबले ज़्यादा ख़ालिस और दिखावे से पाक है। अत: इसके द्वारा इंद्रियों और नफ़्स पर क़ाबू पाने की जो ताक़त हासिल होती है, वह अन्य सभी इबादतों से हासिल होनेवाली ताक़त के आधे के बराबर होगी। इसका असल भेद तो हक़ीक़त में अल्लाह ही जानता है।

रोज़ा और तरावीह का बदला

(65) अल्लाह के रसूल (सल्ल०) ने फ़रमाया : जिस व्यक्ति ने ईमान के साथ आख़िरत (पारलौकिक जीवन) में उसका बदला पाने की नीयत से रमज़ान के रोज़े रखे तो अल्लाह उसके उन गुनाहों को माफ़ कर देगा जो उससे पहले हो चुके हैं। और जिस व्यक्ति ने ईमान के साथ आख़िरत में बदला पाने की नीयत से रमज़ान में तरावीह (की नमाज़) पढ़ी तो अल्लाह इससे पहले के गुनाहों को माफ़ कर देगा।

(हदीस : बुख़ारी, मुस्लिम)

व्याख्या : यह हदीस बताती है कि गुनाहों की माफ़ी (या दूसरे शब्दों में) नजात के लिए दो शर्तें हैं। पहली यह कि वह मोमिन हो। इसका मतलब यह है कि ईमान लाए बिना ही यदि कोई रमज़ान के रोज़े रखेगा तो उसका रोज़ा अल्लाह

के यहाँ क़बूल न किया जाएगा। दूसरी शर्त यह है कि रोज़ा रखने के पीछे केवल ख़ुदा को ख़ुश करने की भावना और आख़िरत में उसका बदला पाने की नीयत हो। यदि नीयत कुछ और हो तो ऐसे मुसलमान के रोज़ों की अल्लाह के यहाँ कोई क़ीमत नहीं। इस बारे में पहले शुरू की हदीसों को दोबारा देख लेना चाहिए जिसमें नीयत सही रखने की हिदायत की गई है।

जिन गुनाहों की माफ़ी का वायदा इस हदीस में किया गया है, वे ऐसे गुनाह हैं जिनका संबंध ख़ुदा से है। रहे वे गुनाह जिनका संबंध अल्लाह के बन्दों (आम इंसानों) से है, उनकी माफ़ी की केवल एक ही सूरत है और वह यह है कि आदमी हक़दार को उसका हक़ वापस कर दे या फिर हक़दार इसी दुनिया में उसे माफ़ कर दे। आगे आनेवाली अन्य हदीसों में इसकी कुछ और व्याख्या आएगी।

रोज़े को ख़राब करनेवाली चीज़ें

(66) नबी (सल्ल०) ने फ़रमाया : रोज़ा (शैतान और शैतानी कामों से बचानेवाली) ढाल है। और जब तुममें से कोई व्यक्ति रोज़े से हो तो ज़बान से कोई अश्लील और गन्दी बात न कहे, न शोर-हंगामा करे, और यदि कोई उससे गाली-गलौच करे या लड़ाई-झगड़े पर उतारू हो तो रोज़ेदार यह सोचे कि मैं तो रोज़े से हूँ (मेरे लिए यह ठीक नहीं कि गाली और लड़ाई का जवाब दूँ)। (हदीस : बुख़ारी, मुस्लिम)

रोज़े की रूह (स्प्रिट)

(67) हज़रत अबू हुरैरा (रज़ि०) कहते हैं कि अल्लाह के रसूल (सल्ल०) ने फ़रमाया : जिस व्यक्ति ने (रोज़ा रखकर भी) झूठ बोलना और उसपर अमल करना न छोड़ा तो अल्लाह को उसके भूखा और प्यासा रहने से कोई दिलचस्पी और सरोकार नहीं।

(हदीस : बुख़ारी, मुस्लिम)

व्याख्या : यानी रोज़ा रखवाने का मक़सद इंसान को नेक बनाना है। यदि वह नेक न बना, नेकी और तक़वा (संयम) पर अपनी ज़िन्दगी की इमारत न उठाई, रमज़ान में रोज़ा रखकर भी बेबुनियाद और नाहक़ बात कहता और करता रहा तो ऐसे व्यक्ति को सोचना चाहिए कि वह आख़िर सुबह से शाम तक क्यों भूखा और प्यासा रहा!

रोज़े में दिखावे से परहेज़

(68) हज़रत अबू हुरैरा (रज़ि०) से आप (सल्ल०) ने फ़रमाया : जब कोई रोज़े से हो, तो उसे चाहिए कि (बालों में) तेल लगाए ताकि उसपर रोज़े के आसार ज़ाहिर न हों।

(अल-अदबुल-मुफ़रद : इमाम बुख़ारी)

व्याख्या : यानी रोज़े की नुमाइश से बचे, नहा-धोकर तेल लगा ले ताकि रोज़े की वजह से पैदा होनेवाली सुस्ती और गिरावट दूर हो जाए क्योंकि रोज़े की नुमाइश , रोज़े को बरबाद करके रख देती है।

सफ़र में छूट

(69) हज़रत अनस (रज़ि०) कहते हैं कि हम (रमज़ान में) नबी (सल्ल०) के साथ जिहाद के सफ़र पर होते। (कुछ लोग रोज़ा रखते और कुछ न रखते) मगर हालत यह थी कि रोज़ा न रखनेवालों पर रोज़ा रखनेवाले एतिराज़ (आपत्ति) न करते और न ग़ैर-रोज़ेदार रोज़ेदारों पर एतिराज़ करते। (हदीस : बुख़ारी)

व्याख्या : मुसाफ़िर को रमज़ान के दिनों में रोज़ा न रखने की छूट दी गई है। हाँ, जो व्यक्ति आसानी के साथ सफ़र में रोज़ा रख सके तो उसके लिए सफ़र में रोज़ा रखना अफ़ज़ल (श्रेयस्कर) है; और जिसे तकलीफ़ होती हो तो उसके लिए रोज़ा न रखना ही अफ़ज़ल है। किसी को किसी पर एतिराज़ करना ठीक नहीं। नबी (सल्ल०) के साथियों (सहाबियों) की यही राय है; और इसी पर वे अमल करते थे।

सेहरी खाने की ताकीद

(70) नबी (सल्ल०) ने फ़रमाया : 'सेहरी' खाओ, क्योंकि इसमें बरकत है।

(हदीस : बुख़ारी)

व्याख्या : इसका मतलब यह है कि सेहरी खाकर रोज़ा रखोगे तो दिन आसानी से कटेगा, अल्लाह की इबादत तथा दूसरे कामों में कमज़ोरी और सुस्ती न आएगी। सेहरी न खाओगे तो सुस्ती और कमज़ोरी आएगी। इबादत में दिल न लगेगा और यह बड़ी बेबरकती की बात होगी। इसी सिलसिले में नबी (सल्ल०) का एक और कथन है जिसका तर्जुमा यह है :

'रोज़ा रखने में सेहरी से मदद लो'

इसी सिलसिले की एक हदीस इमाम नसई ने रिवायत की है जिसका तर्जुमा यह है :

"सेहरी खाने से बरकत (बढ़ोत्तरी) होती है। यह बरकत अल्लाह ने सिर्फ़ तुम्हें दी है। तो तुम सेहरी खाना मत छोड़ना।"

यहूदी लोग (रोज़ा रखने के लिए) सेहरी नहीं खाते थे और आज भी वे सेहरी नहीं खाते हैं। यह एक ऐसी बिदअत (बुरी रीति) है जो उनके धर्म-गुरुओं (आलिमों) ने निकाली थी। अल्लाह ने अपने नबी (सल्ल०) के द्वारा इन बिदअतों और नामुनासिब पाबंदियों से उम्मते-मुस्लिमा को आज़ाद किया। बहुत-सी आसानियाँ दीं। इन्हीं में से एक सेहरी खाना भी है। रहमतवाले नबी (सल्ल०) पर दरूदो-सलाम !

इफ़्तार में देरी न करो !

(71) हज़रत सह्ल इब्ने साद (रज़ि०) ने कहा कि नबी (सल्ल०) ने बताया कि लोग (यानी मुसलमान) जब तक इफ़्तार करने में जल्दी करेंगे, अच्छी हालत में रहेंगे। (हदीस : बुख़ारी)

व्याख्या : यहूदी लोगों में एक बिदअत यह थी कि वे रोज़ा इफ़्तार करने में बहुत देर करते थे। जब तारे निकल आते तो वे रोज़ा खोलते। नबी (सल्ल०) ने मुसलमानों को यहूदियों की बिदअत के असर से बचाने के लिए उन्हें यह हिदायत दी।

रोज़ा सिफ़ारिश करेगा

(72) हज़रत अब्दुल्लाह इब्ने उमर (रज़ि०) कहते हैं कि नबी (सल्ल०) ने फ़रमाया : रोज़ा और क़ुरआन मोमिन के लिए सिफ़ारिश करेंगे। रोज़ा कहेगा : ऐ मेरे रब, मैंने इस व्यक्ति को खाने तथा दूसरी लज़्ज़तों से रोका तो यह रुका रहा, तो ऐ मेरे रब ! इसके लिए मेरी सिफ़ारिश क़बूल कर ले। और क़ुरआन कहेगा : ऐ रब ! मैंने इसको रात में सोने से रोका (तो यह अपनी मीठी नींद छोड़कर तरावीह की नमाज़ में क़ुरआन पढ़ता रहा।) ऐ रब ! इस व्यक्ति के लिए मेरी सिफ़ारिश क़बूल कर ले। चुनाँचे दोनों की सिफ़ारिशें अल्लाह क़बूल कर लेगा।

(हदीस : मिशकात)

रोज़ा न रखनेवालों का अंजाम

(73) हज़रत अबू उमामा बाहिली (रज़ि०) कहते हैं कि मैंने अल्लाह के रसूल (सल्ल०) को यह कहते सुना है कि :

मैं सो रहा था कि दो व्यक्ति मेरे पास आए। वे मेरा कंधा पकड़कर एक दुर्गम पहाड़ के पास ले गए और उसपर चढ़ने को कहा। मैंने कहा : इसपर चढ़ना मेरी ताक़त से परे है। उन्होंने कहा : चढ़ो, हम सहारा देते हैं। अतः मैं चढ़ गया। जब मैं पहाड़ के बीचोबीच पहुँचा तो चीख़-पुकार की भयानक आवाज़ें सुनाई पड़ीं। मैंने पूछा : ये कैसी चीख़-पुकार सुनाई दे रही है? वे बोले : ये जहन्नम में पड़े लोगों की चीख़ें हैं। फिर वे मुझे लेकर कुछ दूर और आगे गए तो देखा कि कुछ लोग उलटे लटका दिए गए हैं, उनके जबड़े फाड़ दिए गए हैं तथा उनसे ख़ून बह रहा है। मैंने पूछा : ये लोग कौन हैं? बताया कि ये वे लोग हैं जो रोज़े के दिनों में खाते-पीते थे, रोज़े नहीं रखते थे।

(अल-मुंज़री-सही इब्ने-ख़ुजैमा व इब्ने-हिब्बान के हवाले से)

रमज़ान के रोज़ों की अहमियत

(74) हज़रत अबू हुरैरा (रज़ि०) से रिवायत है कि नबी (सल्ल०) ने फ़रमाया : जो व्यक्ति रमज़ान का एक रोज़ा भी किसी 'शरई उज्र' (सफ़र और बीमारी आदि) के बिना छोड़ दे, फिर उसकी कमी पूरी करने के लिए वह ज़िन्दगीभर रोज़े रखे तब भी रमज़ान के उस एक रोज़े की कमी पूरी न होगी। (हदीस : तिरमिज़ी, अबू दाऊद)

गुनाहों का कफ़्फ़ारा-नमाज़, रोज़ा और सदक़ा

(75) हज़रत हुज़ैफ़ा (रज़ि०) कहते हैं कि मैंने अल्लाह के रसूल (सल्ल०) को यह कहते सुना : इंसान अपने घरवालों के सिलसिले में माल की ख़रीद-फ़रोख़्त और पड़ोसियों के बारे में जो भूल-चूक और ग़लतियाँ कर जाता है (जान-बूझकर नहीं, बल्कि अनजाने में हो जाती हैं) तो नमाज़, रोज़ा और सदक़ा (दान-पुण्य) उनका 'क़फ़्फ़ारा' (प्रायश्चित) बन जाएँगे। (हदीस : बुख़ारी)

रोज़ा तथा अन्य नफ़्ल इबादतों में संतुलन

(76) हज़रत अब्दुल्लाह इब्ने अम्र बिन आस (रज़ि०) कहते हैं कि मुझसे नबी (सल्ल०) ने कहा : मुझे पता चला है कि तुम लगातार पाबंदी से रोज़े रखते हो और रात भर नफ़्ल नमाज़ पढ़ते हो। फ़रमाया क्या यह सही है? मैंने कहा : हाँ, यह ख़बर सही है। आप (सल्ल०) ने कहा : ऐसा न करो। कभी रोज़ा रखो, कभी न रखो। इसी प्रकार रात को सोओ भी और नफ़्ल नमाज़ें भी पढ़ो, क्योंकि तुम्हारे जिस्म का तुमपर हक़ है, तुम्हारी बीवी का तुमपर हक़ है और तुम्हारे मिलने-जुलनेवालों और मेहमानों का तुमपर हक़ है। तुम हर महीने तीन रोज़े रख लिया करो, तुम्हारे लिए बस इतना ही काफ़ी है।

(हदीस : बुख़ारी)

(77) हज़रत मुंजीबा (रज़ि०) (जो 'बाहिला' क़बीले की एक औरत थीं) ने अपने बाप या चचा के बारे में बताया कि वे (दीन सीखने के लिए) नबी (सल्ल०) के पास गए, फिर घर वापस आए। एक साल के बाद वे फिर आप (सल्ल०) के पास गए। उनका हाल बदला हुआ था (तो आप सल्ल० उन्हें पहचान न सके।) तब वे बोले : ऐ अल्लाह के रसूल! आपने मुझे पहचाना नहीं? नबी (सल्ल०) ने कहा : नहीं, तुम अपना परिचय ख़ुद कराओ कि तुम कौन हो। बोले : मैं 'बाहिला' क़बीले का आदमी हूँ। पिछले साल आपकी ख़िदमत में हाज़िर हुआ था। आप (सल्ल०) ने पूछा : तुम्हारा यह क्या हाल हो गया? पिछले साल जब तुम आए थे तो बहुत अच्छी शक्ल व सूरत थी। उन्होंने बताया : जबसे मैं आपके पास से गया उस समय से अब तक लगातार रोज़े रख रहा हूँ। आप (सल्ल०) ने कहा : तुमने ख़ुद अपने को अज़ाब में डाला (यानी लगातार रोज़े रखकर जिस्म को घुला दिया, अपनी सेहत ख़राब कर ली।) नबी (सल्ल०) ने उन्हें हिदायत की कि रमज़ान के रोज़ों के अलावा हर महीने एक रोज़ा रखो। उन्होंने कहा : हुज़ूर! इसमें और इज़ाफ़ा कर दें, मैं अपने अन्दर इससे अधिक रोज़ा रखने की ताक़त पाता हूँ। आप (सल्ल०) ने कहा : अच्छा, हर महीने दो रोज़े रख लिया करो। उन्होंने कहा : कुछ और बढ़ाइए। आप (सल्ल०) ने कहा : अच्छा, तीन दिन। उन्होंने कहा : कुछ और बढ़ाइए। आप (सल्ल०) ने कहा : अच्छा, हर साल मोहतरम

(प्रतिष्ठित) महीने में रोज़ा रखो और छोड़ दो। ऐसा ही हर साल करो—यह कहते हुए नबी (सल्ल०) ने अपनी तीन ऊँगलियों को मिलाया और छोड़ दिया। (हदीस : अबू दाऊद)

व्याख्या : मोहतरम (प्रतिष्ठित) महीने चार हैं : ज़ीक़ादा, ज़िलहिज्जा, मुहर्रम और रजब।[1]

हदीस का मतलब यह है कि इन मोहतरम महीनों में कुछ रोज़े रखो और कुछ दिन रोजे न रखो।

नफ़्ल इबादतों में संतुलन

(78) अबू जुहैफ़ा (रज़ि०) कहते हैं कि नबी (सल्ल०) ने सलमान फ़ारसी और अबू दरदा (रज़ि०) को एक-दूसरे का भाई बनाया था। एक दिन सलमान (रज़ि०) अबू दरदा (रज़ि०) से मिलने गए। उन्होंने उम्मे-दरदा (अबू दरदा की बीवी) को मामूली लिबास में देखा (कोई बनाव-सिंगार नहीं था) तो बोले : तुम्हारा यह क्या हाल है? (क्यों बेवा (विधवा) जैसी सूरत बना रखी है।) उन्होंने कहा : तुम्हारे भाई अबू दरदा को तो दुनिया से कोई मतलब रहा नहीं (फिर बनाव-सिंगार किसके लिए करूँ?) इसके बाद अबू दरदा आए और मेहमान भाई के लिए खाना तैयार कराया और कहा : तुम खाओ, मैं तो रोज़े से हूँ। सलमान बोले : जब तक तुम न खाओगे मैं नहीं खा सकता। अतः उन्होंने रोज़ा तोड़कर उनके साथ खाना खाया। फिर जब रात हुई तो अबू दरदा नफ़्ल नमाज़ पढ़ने के लिए उठने लगे। सलमान ने कहा : अभी सोओ। तो वे घर में जाकर सोए। फिर उठे तो सलमान बोले : अभी जाकर सोओ। फिर आख़िर पहर में सलमान (रज़ि०) ने उन्हें जगाया और दोनों ने तहज्जुद की नमाज़ अदा की। उसके बाद सलमान (रज़ि०) ने कहा : देखो! तुम्हारे रब का तुमपर हक़ है। तुम्हारे नफ़्स (इन्द्रियों) का तुमपर हक़ है। तुम्हारी बीवी का तुमपर हक़ है—तो सबका हक़ अदा करो।

---

1. (अज्ञानकाल/जाहिलियत के ज़माने में अरब पूरे वर्ष युद्ध, संधि और ख़ून-ख़राबे में व्यतीत कर रहे थे सिवाय इन चार महीनों के, क्योंकि ये वे महीने थे जो हज के लिए घोषित थे तथा देश-विदेश से लोग महीनों का सफ़र तय करके मक्का हज करने आते थे।)

फिर अबू दरदा नबी (सल्ल०) की ख़िदमत में हाज़िर हुए और पूरा क़िस्सा कह सुनाया तो आप (सल्ल०) ने कहा : सलमान ने सही बात कही (कि मोमिन को इबादतों वग़ैर में बीच की राह अपनानी चाहिए। हद से बढ़े हुए रवैए और रहबानी सोच से दूर रहना चाहिए)। (हदीस : बुख़ारी)

ईदुल-फ़ित्र—इनाम पाने का दिन

(79) हज़रत साद इब्ने औस (रज़ि०) अपने वालिद औस (रज़ि०) के हवाले से बयान करते हैं कि अल्लाह के रसूल (सल्ल०) ने फ़रमाया : जब ईदुल-फ़ित्र का दिन आता है तो अल्लाह के फ़रिश्ते सभी रास्तों के नुक्कड़ पर खड़े हो जाते हैं। कहते हैं : ऐ मुसलमानो ! अपने रब के पास चलो, जो बड़ा मेहरबान है, जो नेकी और भलाई की बातें बताता और उसपर अमल करने की तौफ़ीक़ देता है। फिर उसपर भारी इनाम भी देता है। तुम्हें उसकी ओर से (नबी के ज़रिए) तरावीह की नमाज़ पढ़ने का हुक्म मिला तो तुमने तरावीह पढ़ी। दिन में रोज़ा रखने का हुक्म दिया गया तो तुमने रोज़े रखे और अपने रब का हुक्म माना। तो अब चलो, अपना इनाम ले लो।

जब लोग ईद की नमाज़ पढ़ चुकते हैं तो ख़ुदा का एक फ़रिश्ता यह एलान करता है : ऐ लोगो ! तुम्हारे रब ने तुम्हें बख़्श दिया, तो अब तुम अपने घरों को वापस जाओ। इस हाल में कि सही रास्ते पर चलनेवाले रहना (अल्लाह का बन्दा बनकर ज़िन्दगी गुज़ारना।) यह ईद का दिन इनाम का दिन है और इसे दुनिया में तो ईद का दिन कहा जाता है मगर आसमानी दुनिया में—यानी फ़रिश्तो की दुनिया में—इसे 'इनाम का दिन' कहा जाता है। (तरग़ीब : अल-मुंज़िरी)

व्याख्या : दुनियावी ज़िन्दगी में लोग उन चीज़ों को 'इनाम' कहते हैं जो ख़त्म होनेवाली हैं, जो एक दिन छिन जानेवाली हैं, मगर हक़ीक़त को जाननेवाले लोगों के नज़दीक, उन लोगों के नज़दीक जिनका मक़सद हमेशा रहनेवाला आराम हासिल करना है, दुनिया का इनाम, कोई इनाम नहीं। असल और पायदार इनाम तो आख़िरत में मिलनेवाला इनाम है। ऐसा इनाम जो कभी ख़त्म न हो— और वह इनाम यह है कि जहन्नम की आँच से बच जाए और हर प्रकार के दुखों से दूर और हर तरह के आराम से भरपूर सलामती के घर जन्नत में जगह पाए।

हज

हज फ़र्ज़ है

(80) हज़रत अबू हुरैरा (रज़ि०) कहते हैं कि अल्लाह के रसूल (सल्ल०) ने ख़ुतबा दिया और फ़रमाया : ऐ लोगो ! अल्लाह ने तुम पर हज फ़र्ज़ (अनिवार्य) किया है; तो हज करो। (अल-मुन्तक़ा)

हज करने में जल्दी करनी चाहिए

(81) अब्दुल्लाह इब्ने अब्बास (रज़ि०) ने कहा कि अल्लाह के रसूल (सल्ल०) ने फ़रमाया : जो व्यक्ति फ़र्ज़ हज अदा करने का इरादा करे उसे जल्दी करनी चाहिए क्योंकि हो सकता है कि वह बीमार पड़ जाए या सवारी की ऊँटनी खो जाए (यानी सफ़र के संसाधन न रहें, रास्ते में रुकावटें और ख़तरे पैदा हो जाएँ, किसी ज़ालिम हुकूमत की ओर से रुकावटें खड़ी कर दी जाएँ या सफ़र-ख़र्च न रहे) और हो सकता है कि कोई ऐसी ज़रूरत सामने आ जाए जो हज के सफ़र को नामुमकिन बना दे। (हदीस : इब्ने-माजा)

जिहाद के बाद सबसे अच्छा अमल हज है

(82) हज़रत अबू हुरैरा (रज़ि०) फ़रमाते हैं कि अल्लाह के रसूल (सल्ल०) से पूछा गया कि कौन-सा अमल सब से अच्छा है? आप (सल्ल०) ने फ़रमाया : अल्लाह और उसके रसूल (सल्ल०) पर ईमान लाना। पूछा गया : उसके बाद कौन-सा? आप (सल्ल०) ने बताया : ख़ुदा की राह में जिहाद करना। पूछा गया : उसके बाद कौन-सा अमल अफ़ज़ल है? फ़रमाया : मबरूर हज यानी वह हज जिसके दौरान ख़ुदा की नाफ़रमानी न की गई हो।

(हदीस : अल-मुन्तक़ा, बुख़ारी, मुस्लिम से उद्धृत)

हक़ीक़ी हज

(83) हज़रत अब्दुल्लाह इब्ने उमर (रज़ि०) फ़रमाते हैं कि एक व्यक्ति ने अल्लाह के रसूल (सल्ल०) से पूछा : हाजी कौन है? (यानी हज करनेवाले में क्या—क्या ख़ूबियाँ होनी चाहिएँ?) आप (सल्ल०) ने बताया : वह जिसके बाल बिखरे हुए हों, कपड़े मैले हों। उसने फिर

पूछा : हज के सारे कामों में कौन-सा काम सवाब और बदले के लिहाज़ से बढ़ा हुआ है? आप (सल्ल०) ने जवाब दिया : ऊँची आवाज़ से 'लब्बैक' कहना और क़ुरबानी करना। उसने फिर पूछा : (क़ुरआन मजीद की सूरा) आले-इमरान में (हज के बारे में जो आयत है उसमें) शब्द 'सबीला' से क्या मुराद है?' आप (सल्ल०) ने बताया : 'इसका मतलब यह है कि अल्लाह के घर (काबा) तक पहुँचने के लिए सवारी और सफ़र ख़र्च उपलब्ध हो।' (हदीस : इब्ने-माजा)

व्याख्या : इस हदीस से स्पष्ट है कि हज एक आशिक़ाना क़िस्म की इबादत है। जो व्यक्ति अपने महबूब के घर के दर्शन (दीदार) को जाता है उसे हर वक़्त नहाने धोने और खाने-पीने से दिलचस्पी नहीं होती। उसे तो जो समय मिलता है उसे अपने महबूब से सरगोशी करने में, ज़िक्र करने में, तौबा और इस्तिग़फ़ार में और उसके आगे रोने और गिड़गिड़ाने में सर्फ़ करता है। ऐसे ही लोगों का हज, हज है। इसी सिलसिले में एक और हदीस देखिए। नबी (सल्ल०) ने फ़रमाया :

"जब हज करने वाले अरफ़ात के मैदान में ठहर, कर अल्लाह के ज़िक्र, दुआ और उसके आगे रोने और गिड़गिड़ाने में मशग़ूल होते हैं तो अल्लाह क़रीब आकाश तक आता है और फ़रिश्तों से कहता है :

'मेरे इन बन्दों को देखो! ये मेरे पास इस हाल में आए हैं कि बाल बिखरे हुए हैं, धूल से अटे हुए हैं।"

हज का तर्क करना इस्लाम के ख़िलाफ़ है

(84) मशहूर ताबई हसन बसरी (रह०) कहते हैं कि उमर बिन ख़त्ताब (रज़ि०) ने फ़रमाया : मेरा इरादा है कि इस्लामी राज्य के इन शहरों में कुछ आदमी भेजूँ जो जायज़ा लें कि कौन लोग हज करने की हैसियत रखते हैं लेकिन उन्होंने अब तक यह फ़र्ज़ अदा नहीं किया है। जी चाहता है कि इनपर जिज़िया (टैक्स) लगा दें। ये मुस्लिम नहीं हैं, ये मुस्लिम नहीं हैं। ('मुस्लिम' के मायने हैं 'अल्लाह का आज्ञापालक, फ़रमाँबरदार'। अब यदि सही मायनों में ये मुस्लिम होते तो हैसियत होते हुए हज कर चुके होते।) (हदीस : अल-मुन्तक़ा)

हज का बदला सफ़र शुरू होते ही मिलने लगता है

(85) हज़रत अबू हुरैरा (रज़ि०) ने कहा कि अल्लाह के रसूल (सल्ल०) ने फ़रमाया : जो व्यक्ति हज या उमरा या जिहाद करने के इरादे से घर

से निकला और रास्ते में ही उसे मौत आ गई तो अल्लाह उसे वही इनाम और बदला देगा जो वह हाजियों, ग़ाज़ियों और उमरा करनेवालों को देता है। (हदीस : मिशकात)

इस्लाम की सभी इबादतों की पाबंदी ज़रूरी है

(86) हज़रत ज़ियाद (रज़ि०) ने कहा कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने फ़रमाया : इस्लाम में चार इबादतें अल्लाह की ओर से फ़र्ज़ की गई हैं। जो व्यक्ति इनमें से तीन इबादतें तो करे, मगर चौथी न करे तो वे तीनों इबादतें उसके काम न आएँगी जब तक कि वह चारों पर अमल न करे। वे चारों फ़र्ज़ इबादतें ये हैं : नमाज़, ज़कात, रमज़ान का रोज़ा और काबा का हज। (हदीस : मुस्नद अहमद)

व्याख्या : यह और इस तरह की दूसरी हदीसों से इस बात का पता चलता है कि नमाज़, ज़कात, रोज़ा और हज की दीने-इस्लाम में बड़ी अहमियत है। आज हम मुसलमानों की हालत यह है कि उनकी एक बहुत बड़ी तादाद नमाज़ नहीं पढ़ती। जो लोग नमाज़ पढ़ते हैं, उनमें से भी बहुत-से लोग ज़कात नहीं अदा करते। कुछ मुसलमान नमाज़, रोज़ा और ज़कात की पाबंदी तो करते हैं लेकिन हज करने की उन्हें फ़िक्र नहीं। कुछ मुसलमान सिर्फ़ रोज़ा रखते हैं, नमाज़ नहीं पढ़ते और न ही ज़कात अदा करते हैं। ऐसे लोग आख़िरत में हिसाब के वक़्त बड़ी मुश्किल में फंस जाएंगे। अल्लाह उन से पूछेगा : मैंने तुम पर चार चीज़ें फ़र्ज़ की थीं—तीन, या दो, या एक नहीं। फिर तुमने इन फ़र्ज़ की हुई चीज़ों में फ़र्क़ किस इख़्तियार और बलबूते पर किया? ख़ुद को उसका बंदा तस्लीम करके, कलमा पढ़कर, मुसलमान होकर और हज़रत मुहम्मद (सल्ल०) की उम्मत के लोग होते हुए यह बग़ावत क्यों की? फिर सोचिए कि वे लोग क्या जवाब देंगे और उन्हें कैसी रुसवाई का सामना करना पड़ेगा!

सामाजिक हक़ और अधिकार

माँ-बाप की ख़िदमत का फल जन्नत है

(87) हज़रत अबू हुरैरा रज़ि० का बयान है कि नबी (सल्ल०) ने फ़रमाया : वह आदमी रुसवा हो। यह वाक्य आप (सल्ल०) ने तीन बार दोहराया। लोगों ने पूछा : ऐ अल्लाह के रसूल! यह बद्दुआ आप किसे दे रहे हैं? आप (सल्ल०) ने बताया : यह बद्दुआ उस व्यक्ति के लिए है जिसने अपने माँ-बाप में से दोनों को या उनमें से किसी एक को उनके बुढ़ापे की हालत में पाया और (उनकी ख़िदमत करके) जन्नत में दाख़िल न हुआ। (हदीस : मुस्लिम)

माँ का हक़, बाप से ज़्यादा है

(88) हज़रत अबू हुरैरा रज़ि० ने फ़रमाया कि एक व्यक्ति ने अल्लाह के रसूल (सल्ल०) से पूछा : ऐ अल्लाह के रसूल ! मेरे अच्छे सुलूक का कौन ज़्यादा हक़दार है? आप (सल्ल०) ने फ़रमाया : तुम्हारी माँ । उसने पूछा : फिर कौन? फ़रमाया : तुम्हारी माँ । उसने कहा : फिर कौन? फ़रमाया : तुम्हारी माँ । उसने चौथी बार फिर पूछा : फिर कौन? कहा : तुम्हारा बाप। (हदीस : बख़ारी, मुस्लिम)

व्याख्या : इस हदीस से पता चलता है कि माँ का दर्जा बाप से ऊँचा है। यही बात क़ुरआन मजीद से भी मालूम होती है। चुनांचे सूरा—31 लुक़मान (आयत : 14) में अल्लाह ने फ़रमाया :

"हमने इंसान को ताकीद की है कि वह अपने माँ-बाप का शुक्रगुज़ार हो।" इसके बाद फ़रमाया : "उसकी माँ ने तकलीफ़ पर तकलीफ़ झेलकर नौ महीने तक उसे अपने पेट में उठाए रखा, फिर दो साल तक अपने ख़ून से पाला"।

इसी वजह से उलमा ने लिखा है कि इज़्ज़त और एहतिराम के पहलू से बाप का दर्जा ऊँचा है जबकि ख़िदमत के लिहाज़ से माँ का।

'माँ का हक़ कितना बड़ा है', इसका अंदाज़ा नीचे लिखी हदीस से भली-भाँति लगाया जा सकता है :

एक व्यक्ति नबी (सल्ल०) के पास आया। उसने कहा : ऐ अल्लाह के रसूल! मैं अपनी अपाहिज बूढ़ी माँ को अपनी पीठ पर

लादकर यमन से मक्का लाया और इसी हाल में काबा का तवाफ़ (परिक्रमा) कराया, सफ़ा-मरवा (पहाड़ियों) के बीच 'सई' की (दौड़ लगाई) और इसी हाल में उसे लिए हुए अरफ़ात गया। फिर मुज़दलफ़ा आया, फिर मिना पहुँचा और कंकरी मारी। मैंने ये सारे काम उसे अपनी पीठ पर लादे हुए किए हैं। बताइए, क्या माँ का हक़ अदा हो गया या नहीं ?आप (सल्ल०) ने फ़रमाया : नहीं, अभी उसका हक़ अदा नहीं हुआ। उसने पूछा : क्यों ? आप (सल्ल०) ने बताया : अभी उसका हक़ इसलिए अदा नहीं हुआ कि उसने सारी मुसीबतें इस तमन्ना के साथ झेली थीं कि तुम ज़िन्दा रहो और तुमने उसके साथ जो कुछ किया है इस हाल में किया है कि उसके मरने की आरज़ू करते हो ?

इसी तरह अब्दुल्लाह इब्ने उमर (रज़ि०) से एक शख़्स ने अपनी माँ की लम्बे अरसे तक की बड़ी-बड़ी ख़िदमत का ज़िक्र करके पूछा कि माँ का हक़ अदा हुआ या नहीं ? उन्होंने कहा : नहीं, तुम तो उस पहली चीख़ का भी हक़ अदा नहीं कर सके हो जो तुम्हें जनने के वक़्त तुम्हारी माँ के मुख से निकली थी

इसी सिलसिले में वह इबरतनाक और सबक़ आमोज़ वाक़िआ भी सुनते चलिए जो नबी (सल्ल०) के मुबारक दौर में पेश आया था। वाक़िआ इस तरह है कि एक नौजवान की मौत का वक़्त आया तो ज़बान से कलमा 'ला इलाह इल्लल्लाह' नहीं अदा हो पा रहा था। लोगों को बड़ी फ़िक्र हुई। मामला नबी (सल्ल०) तक पहुँचा। नबी (सल्ल०) उस नौजवान के पास आए। (आप सल्ल० ने) पूछा : क्या उसके माँ-बाप हैं ? बताया गया कि सिर्फ़ माँ है। उसकी बूढ़ी माँ को बुलाया गया। पूछा गया : तुम्हारा बेटा कैसा है ? कहा कि यह बहुत नेक है मगर जब से शादी हुई है, मुझ से नज़रें फेर ली हैं। मेरा कुछ भी ख़्याल नहीं करता। मैं इस उम्र में मेहनत मज़दूरी करके गुज़ारा करती हूँ।

नबी (सल्ल०) ने फ़रमाया : इसका क़ुसूर माफ़ कर दो। उसने कहा : मैं हरगिज़ माफ़ न करूँगी। उसने मेरा दिल बहुत जलाया है। नबी (सल्ल०) ने फ़रमाया : लाओ, आग जलाओ; मैं इस नौजवान को इस आग में डालूँगा ताकि वह भस्म हो जाए। उसकी माँ बोल पड़ी कि मैं उसको जलते कैसे देखूँगी ? आप (सल्ल०) ने फ़रमाया : माफ़ न करोगी तो वह वहाँ (जहन्नम) की आग में जलेगा। तब बुढ़िया ने बेटे को माफ़ किया। और ज्यों ही उसने माफ़ी दी, बेटे की ज़बान पर ईमान का कलमा (ला इलाह इल्लल्लाह) जारी हो गया और जान निकल गई।

इस प्रकार की घटनाएँ कभी कभार ही घटित होती हैं ताकि नाफ़रमान बेटों को पता चले कि ख़ुदा उनके साथ भी ऐसा कर सकता है। ख़ुदा अगर दुनिया में माँ-बाप के नाफ़रमानों को नहीं पकड़ रहा है, तो इससे धोखा नहीं खाना चाहिए।

माँ-बाप के हक़ (अधिकार) — उनके मरने के बाद

(89) हज़रत अबू उसैद (रज़ि०) कहते हैं कि हम लोग अल्लाह के रसूल (सल्ल०) के पास बैठे हुए थे कि इतने में क़बीला बनू सलमा का एक व्यक्ति आया। उसने कहा : ऐ अल्लाह के रसूल! माँ-बाप की मौत हो जाने के बाद उनका कोई हक़ बाक़ी रहता है जिसे मुझे अदा करना चाहिए? आप (सल्ल०) ने फ़रमाया : हाँ, उनके लिए अल्लाह से दुआ करो कि वह उनकी मग़फ़िरत करे और जो (जायज़) वसीयत वे कर गए हों उसे पूरा करो। माँ-बाप से जिन लोगों का रिश्ते-नाते का संबंध है, उनके साथ अच्छा सुलूक करो और माँ-बाप के दोस्तों और सहेलियों की इज़्ज़त और ख़ातिरदारी करो।

(हदीस : अबू दाऊद)

रज़ायी (दूध पिलानेवाली) माँ का हक़

(90) अबू तुफ़ैल (रज़ि०) कहते हैं कि नबी (सल्ल०) जिइर्राना (एक स्थान) में गोश्त बाँट रहे थे कि इतने में एक औरत आई। आप (सल्ल०) के क़रीब पहुँची तो आप (सल्ल०) ने अपनी चादर बिछा दी। वह औरत बैठ गई। मैंने पूछा : यह औरत कौन है? (जिसका आप (सल्ल०) इतना आदर-सत्कार कर रहे हैं) लोगों ने बताया कि ये वह औरत हैं जिन्होंने आप (सल्ल०) को दूध पिलाया था (यानी क़बीला बनू साद की एक औरत हलीमा रज़ि०)।

(हदीस : अबू दाऊद)

ग़ैर-मुस्लिम माँ-बाप के साथ अच्छा सुलूक

(91) हज़रत अबू बक्र (रज़ि०) की बेटी हज़रत अस्मा (रज़ि०) कहती हैं कि हुदैबिया के ज़माने में मेरी (रज़ायी) माँ मेरे पास आईं। उस समय तक उन्होंने इस्लाम क़बूल नहीं किया था। मैंने पूछा : ऐ अल्लाह के रसूल! मेरी मुशरिक माँ मेरे पास आई हैं जो अब तक ग़ैर-मुस्लिम हैं। वे चाहती हैं कि मैं उन्हें कुछ दूँ तो क्या मैं दे सकती हूँ? आप (सल्ल०) ने फ़रमाया : हाँ, उनके साथ रिश्ता बनाए रखो और जो कुछ

दे सकती हो दो।   (हदीस : बुख़ारी, मुस्लिम)

व्याख्या : क़ुरआन मजीद की वे सूरतें (अध्याय) जो मक्के में नाज़िल हुईं, उनमें माँ-बाप के साथ अच्छा बर्ताव करने का हुक्म आया है। इसमें मुस्लिम और ग़ैर-मुस्लिम, दोनों ही तरह के माँ-बाप आ जाते हैं। सूरा—31 लुक़मान में कहा गया है :

"यदि वे (माँ-बाप) तुझे शिर्क करने के लिए तुझ पर दबाव डालें तो उनके दबाव में न आना। हाँ, दुनिया में उनके साथ शरीफ़ों और मोमिनों जैसा बर्ताव करना।"

ख़ाला (मौसी) के साथ अच्छा सुलूक

(92) हज़रत अब्दुल्लाह इब्ने उमर (रज़ि०) ने कहा कि एक व्यक्ति अल्लाह के रसूल के पास आया। उसने कहा : ऐ अल्लाह के रसूल ! मुझसे एक बड़ा गुनाह हो गया है। क्या उससे तौबा (पश्चात्ताप) की कोई शक्ल है ? आप (सल्ल०) ने पूछा : क्या तुम्हारे माँ-बाप ज़िन्दा हैं? उसने कहा : नहीं। आप (सल्ल०) ने पूछा : क्या ख़ाला (मौसी) ज़िन्दा हैं? उसने कहा : हाँ, वे ज़िन्दा हैं। आप (सल्ल०) ने फ़रमाया : जाओ, उनकी ख़िदमत करो।   (हदीस : तिरमिज़ी)

व्याख्या : तौबा (पश्चाताप) की जानी-पहचानी एक शक्ल तो यह है कि आदमी अपने किए पर पछताए, उसका दिल रोए और अल्लाह से माफ़ी माँगे। मगर नबी (सल्ल०) ने एक पैग़म्बर होने की हैसियत से यह जाना कि अगर माँ-बाप या ख़ाला की ख़िदमत की जाए तो यह गुनाह धुल सकता है। यह बात पैग़म्बर के अलावा और कौन जान सकता है ?

तालीम देनेवालों की इज़्ज़त व एहतिराम

(93) हज़रत अबू हुरैरा (रज़ि०) से रिवायत है कि अल्लाह के रसूल (सल्ल०) ने फ़रमाया : इल्म हासिल करो और साथ ही इस इल्म को सीखने के लिए वक़ार और संजीदगी सीखो। जिनसे तुम इल्म सीखो उनके साथ नर्मी का बर्ताव करो। (अल-मुंज़िरी : तबरानी से उद्धृत)

व्याख्या : आलिमों की राय है कि अल्लाह और रसूल (सल्ल०) के बाद इंसानों में सबसे ऊँचा दर्जा माँ-बाप का है, फिर उस्ताद (शिक्षक) का ! वे जिस्मानी तर्बियत करते हैं और ये दीनी तर्बियत !

सही मानों में अच्छा सुलूक

(94) हज़रत अब्दुल्लाह इब्ने उमर (रज़ि०) कहते हैं कि अल्लाह के रसूल (सल्ल०) ने फ़रमाया : वह आदमी सही मानों में अच्छा सुलूक करनेवाला नहीं है जो किसी के जवाब में अच्छा सुलूक करता है। सही मानों में अच्छा सुलूक करनेवाला आदमी वह है, जिसके रिश्तेदार तो उसके हक़ नहीं देते, मगर यह सबके हक़ अदा करता है और सबसे ताल्लुक़ जोड़े रखता है। (हदीस : बुख़ारी)

व्याख्या : यानी रिश्तेदारों के बर्ताव के जवाब में अच्छा बर्ताव करना कमाल की बात नहीं है। अपने रिश्तेदारों की हमदर्दी और अच्छे बर्ताव का सबसे ऊँचा दर्जा यह है कि आदमी के रिश्तेदार तो उसे काट रहे हों और वह उन्हें जोड़े। वे उसका कोई हक़ न अदा करें और यह उनके सारे हक़ अदा करे। यह एक ऐसा काम है जो उसी वक़्त मुमकिन हो सकता है जब आदमी के अन्दर तक़वा यानी ख़ुदा का डर और परहेज़गारी पूरे तौर पर मौजूद हो।

जो तुमसे नाता तोड़े तुम उससे नाता जोड़ो

(95) हज़रत अबू हुरैरा रज़ि०) से रिवायत है कि एक व्यक्ति ने नबी (सल्ल०) से कहा : ऐ अल्लाह के रसूल ! मेरे कुछ रिश्तेदार हैं जिनके हक़ तो मैं अदा करता हूँ मगर वे ऐसा नहीं करते। मैं उनसे अच्छे ढंग से पेश आता हूँ और वे मेरे साथ बदसुलूकी करते हैं। मैं उनके साथ नर्मी और सहनशीलता (बर्दाश्त करने) का सुलूक करता हूँ और वे मेरे साथ जहालत बरतते हैं। आप (सल्ल०) ने फ़रमाया : यदि तू वैसा ही है जैसा कि कह रहा है, तो मानो तू उनके चेहरों पर स्याही पोत रहा है। अल्लाह उनके मुक़ाबले में तेरा हमेशा मददगार रहेगा जब तक तू अपने इस रवैए पर क़ायम रहेगा। (हदीस : मुस्लिम)

औलाद के हक़

(96) हज़रत अब्दुल्लाह इब्ने अब्बास (रज़ि०) नबी (सल्ल०) से रिवायत करते हैं कि आप (सल्ल) ने फ़रमाया : अपनी औलाद के साथ शफ़क़त और मेहरबानी का बर्ताव करो और उनकी अच्छी से अच्छी तर्बियत करो। (हदीस : इब्ने-माजा)

व्याख्या : औलाद का पहला हक़ यह है कि पैदा होने के बाद उसके कान में अज़ान दो ताकि सबसे पहली आवाज़ जो उनके कान में पहुँचे वह ख़ुदा और नमाज़ की आवाज़ हो। उनका दूसरा हक़ यह है कि उनके अच्छे नाम रखो और हो सके तो अक़ीक़ा करो। तीसरा हक़ यह है कि बच्चों को सादा ज़बान में उनकी ज़ेहनी सतह का ख़याल रखते हुए नबियों, सहाबियों, बुज़ुर्गों और नेक लोगों के क़िस्से सुनाए जाएँ और वे जब कुछ और समझदार हों जाएँ तो उन्हें अपने साथ मस्जिद ले जाएँ और वहाँ उन्हें सुकून से रहने की नसीहत करें। फिर भी अगर वे कोई ग़लती करें तो मसजिद में मौजूद लोग उन्हें डाटें-डपटें नहीं। डाँटने से वे बिदक जाएँगे और मस्जिद से भागने लगेंगे। फिर जब वे सात साल के हो जाएँ तो उन्हें नमाज़ का शौक़ दिलाएँ, तरह-तरह से समझाएँ और जब वे दस साल के हो जाएँ फिर भी नमाज़ न पढ़ें तो उन्हें मारें। मार हल्की हो, उन्हें इस तरह से न मारा जाए कि वे ज़ख़्मी हो जाएँ या उनकी हड्डी टूट जाए। चेहरे पर मारने से तो नबी (सल्ल०) ने हर हाल में मना फ़रमाया है। मतलब यह है कि बच्चों को यक़ीन हो जाए कि यदि वे नमाज़ न पढ़ेंगे तो माँ-बाप की मुहब्बत और मेहरबानियों से महरूम हो जाएँगे।

(97) हज़रत सईद इब्ने आस (रज़ि०) से रिवायत है कि अल्लाह के रसूल (सल्ल०) ने फ़रमाया : बाप अपनी औलाद को जो कुछ देता है उनमें सबसे अच्छी चीज़ तालीम व तर्बियत है। (हदीस : मिशकात)

व्याख्या : इस हदीस में 'बाप' से मुराद माँ-बाप दोनों हैं क्योंकि वह दोनों की औलाद है और 'औलाद' से मुराद लड़के और लड़कियाँ दोनों हैं।

नेक औलाद— हमेशा जारी रहनेवाली नेकी है

(98) हज़रत अबू हुरैरा (रज़ि०) से रिवायत है कि अल्लाह के रसूल (सल्ल०) ने फ़रमाया : जब इंसान मर जाता है तो उसके अमल करने का मौक़ा ख़त्म हो जाता है। हाँ, तीन क़िस्म के अमल ऐसे हैं जिनका बदला मरने के बाद जारी रहता है। (1) एक यह कि वह मरने से पहले सदक़-ए-जारिया कर जाए। (2) दूसरा यह कि ऐसा इल्म छोड़ जाए जिससे लोग फ़ायदा उठाएँ। (3) व्यक्ति की तालीम-तर्बियत के नतीजे में उसकी औलाद नेक बने और उस आदमी के लिए दुआ करे। (हदीस : मुस्लिम)

व्याख्या : सदक़-ए-जारिया से मुराद वह सवाब का काम है जिसका फ़ायदा

लम्बे अरसे तक पहुँचता रहे। जैसे नहर खुदवाना, मुसाफ़िरों के लिए सराय (निःशुल्क मुसाफ़िरख़ाना) बनवा देना, रास्तों के किनारे पेड़ लगवाना, किसी दीनी इदारे में कमरे बनवा देना, किताबें वक़्फ़ करना, मस्जिदों में क़ुरआन मजीद और दीनी किताबें रखवा देना आदि। जब तक इन चीज़ों से लोग फ़ायदा उठाएँगे, मरनेवाले को सवाब मिलता रहेगा। इसी तरह किसी बच्चे को तालीम देकर उसे आलिम बना देने या कोई दीनी किताब लिख देने से भी उसका सवाब उसे मिलता रहेगा। इसी प्रकार यदि किसी की औलाद उसकी अपनी कोशिशों के नतीजे में दीनदार और नेक व परहेज़गार बनी है तो जब तक वह नेक आमाल करती रहेगी, माँ-बाप को उसका सवाब बराबर मिलता रहेगा और नेक औलाद अल्लाह से दुआ भी करेगी कि : ऐ हमारे रब ! मुझे बख़्श दे और मेरे माँ-बाप की भी बख़्शिश फ़रमा दे। हिसाब के दिन (यानी क़ियामत के दिन मुझे और मेरे माँ-बाप को जहन्नम की आँच से बचा लीजिए।)

यह हदीस उन लोगों को संजीदगी के साथ सोचने की दावत देती है जो अपनी औलाद की इस्लामी तालीम व तर्बियत से ग़ाफ़िल और बेपरवाह रहे। ऐसे लोग मरने के बाद अपनी औलाद की दुआओं से महरूम रहेंगे और इससे भी कहीं ख़तरे की बात यह होगी कि उनके लड़के-लड़कियाँ ख़ुदा की अदालत में उनके खिलाफ़ अपील करेंगे कि हमारे माँ-बाप ने हमें दीन से अनजान रखा लिहाज़ा इसकी सज़ा हमारे . . . .।

लड़कियों के साथ अच्छे बर्ताव का बदला

(99) हज़रत आइशा (रज़ि०) कहती हैं कि मेरे पास एक औरत अपनी बच्चियों के साथ कुछ माँगने के लिए आई। (ये तीनों भूखी थीं।) उस वक़्त मेरे पास उन्हें देने के लिए एक खजूर के सिवाय कुछ नहीं था। मैंने वही दे दिया। उसने खजूर के दो टुकड़े किए और एक-एक टुकड़ा दोनों बेटियों को दे दिया; ख़ुद उसमें से कुछ न खाया (जबकि वह भी भूखी थी मगर ममता की आग !) फिर वह चली गई। उसके चले जाने के बाद नबी (सल्ल०) घर आए तो मैंने आप (सल्ल०) के सामने उस औरत का ज़िक्र किया। आप (सल्ल०) ने फ़रमाया : जिस व्यक्ति को भी इन बच्चियों के इम्तिहान में डाला गया और उसने इनके साथ अच्छा सुलूक किया तो ये बच्चियाँ (क़ियामत के दिन) उसके लिए जहन्नम से बचाव का ज़रिया बन जाएँगी।

(हदीस : बुख़ारी, मुस्लिम)

व्याख्या : हदीस की किताब मिशकात में हज़रत अब्दुल्लाह बिन अब्बास (रज़ि०) से एक हदीस रिवायत है जिसका मज़मून यह है :

> "जिस आदमी ने तीन लड़कियों या तीन बहनों की सरपरस्ती की, उनकी तालीम व तर्बियत की, उनके साथ मेहरबानी का मामला किया और जब वे बड़ी हो गईं तो उनकी शादी की तो ऐसे आदमी के लिए अल्लाह ने अपने ऊपर जन्नत वाजिब कर ली।"

इसपर एक शख़्स ने पूछा : अगर किसी के दो ही लड़कियाँ हों तो? आप (सल्ल०) ने जवाब दिया :

'दो लड़कियों की सरपरस्ती, उनकी तालीम व तर्बियत का बंदोबस्त करने और उनकी शादी कर देने पर भी यही बदला है।'

अब्दुल्लाह इब्ने-अब्बास (रज़ि०) कहते हैं कि यदि कोई एक लड़की के बारे में पूछता तो आप (सल्ल०) यही जवाब देते। (आगे इसी हदीस में यह टुकड़ा भी है कि) जिस व्यक्ति से अल्लाह ने उसकी दो बेहतरीन चीज़ें ले लीं तो उसके लिए जन्नत वाजिब हो गई। लोगों ने पूछा : दो बेहतर चीज़ों से क्या मुराद है? आप (सल्ल०) ने बताया : इससे दो आँखें मुराद हैं।

औलाद और सगे-संबंधियों की तालीम व तर्बियत

> (100) अब्दुल्लाह बिन उमर (रज़ि०) कहते हैं कि नबी (सल्ल०) ने फ़रमाया : अल्लाह जब किसी बंदे को कुछ लोगों पर इख़्तियार देता है—चाहे वे गिनती में थोड़े हों या ज़्यादा—तो क़ियामत के दिन अल्लाह उस बंदे से ज़रूर पूछगछ करेगा कि अपने मातहत लोगों पर ख़ुदा का दीन जारी किया या ख़ुदा के दीन को उनपर जारी करने में कोताही की? यहाँ तक कि आदमी के अपने ख़ास ख़ानदानवालों (बीवी बच्चे और दूसरे लोगों जो उसकी सरपरस्ती में हों) के बारे में पूछगछ होगी। (हदीस : मुस्नद अहमद)

व्याख्या : अगर किसी ने अपने बस भर बीवी-बच्चों, और दूसरे मातहतों को दीन सिखाने और दीनदार बनाने की कोशिश की तो वह आख़िरत में ख़ुदा की अदालत में कामयाब होगा। लेकिन अगर उसने ग़फ़लत से काम लिया, उनके सुधार की फ़िक्र न की तो वह वहाँ बड़ी मुश्किल में फँस जाएगा, भले ही वह ख़ुद बड़ा ख़ुदापरस्त और दीनदार हो। उसकी दीनदारी वहाँ नाक़िस साबित होगी।

एक दूसरी हदीस में जो अबू दाऊद (हदीस-संग्रह) में इब्ने-अब्बास से रिवायत की गई है, नबी (सल्ल०) ने कहा : जिसके यहाँ बच्ची ने जन्म लिया और

उसने उसे ज़िंदा दफ़न नहीं किया और न उसे तुच्छ जाना, न लड़कों को उस पर तरजीह दी तो अल्लाह ऐसे लोगों को जन्नत में दाख़िल करेगा।

बेसहारा बेटी की सरपरस्ती

(101) सुराक़ा इब्ने मालिक (रज़ि०) बयान करते हैं कि नबी (सल्ल०) ने फ़रमाया : क्या मैं तुम्हें न बताऊँ कि सबसे अच्छा सदक़ा (दान) क्या है? उस बेटी की सरपरस्ती करना सबसे बड़ा सदक़ा है जो तेरे पास लौटा दी गई है और तुम्हारे अलावा उसके लिए कोई भी कमानेवाला नहीं है। (हदीस : इब्ने-माजा)

व्याख्या : ऐसी लड़की जिसकी बदसूरती या जिस्मानी कमी के सबब शादी नहीं होती या शादी के बाद तलाक़ मिल गई है और तुम्हारे सिवा उसको खिलाने-पिलाने वाला कोई नहीं है, तो उस पर जो कुछ तुम ख़र्च करोगे वह अल्लाह के नज़दीक बेहतरीन सदक़ा होगा। हदीस में बेटी का ज़िक्र आया है और यही दर्जा बहन का है जबकि भाई घर का ज़िम्मेदार हो।

औलाद के साथ बराबरी का सुलूक

(102) नोमान इब्ने बशीर (रज़ि०) कहते हैं कि मेरे वालिद (बशीर) मुझे लिए हुए नबी (सल्ल०) की ख़िदमत में हाज़िर हुए और कहा : ऐ अल्लाह के रसूल! मेरे पास एक ग़ुलाम था, उसे मैंने अपने इस लड़के (नोमान) को दे दिया है। (आप गवाह रहिए!) नबी (सल्ल०) ने पूछा : क्या अपने सभी लड़कों को दिया है? उन्होंने कहा: नहीं, सब लड़कों को नहीं दिया है। नबी (सल्ल०) ने फ़रमाया : इस ग़ुलाम को वापस ले लो।

एक दूसरी हदीस के अनुसार नबी (सल्ल०) ने पूछा : क्या तुमने अपने सभी लड़कों के साथ ऐसा ही मामला किया है? उन्होंने कहा : नहीं, तो आप ने (सल्ल०) फ़रमाया : "अल्लाह से डरो और अपनी औलाद के साथ बराबरी का सुलूक करो।" तो मेरे अब्बा घर आए और ग़ुलाम को वापस ले लिया।

एक दूसरी हदीस में यह है कि नबी (सल्ल०) ने फ़रमाया : फिर तो मुझे गवाह न बनाओ; मैं ज़ुल्म पर गवाह न बनूँगा।

एक तीसरी रिवायत में यह है कि नबी (सल्ल०) ने पूछा : क्या तुम्हें यह पसंद है कि सब लड़के तुम्हारे साथ अच्छा सलूक करें? मेरे

वालिद ने कहा : हाँ, मुझे तो यही बात पसंद है। आप (सल्ल०) ने फ़रमाया : तब ऐसा न करो (यानी सिर्फ़ इसी लड़के को ग़ुलाम मत दो)। (हदीस : बुख़ारी, मुस्लिम)

व्याख्या : इस हदीस से मालूम हुआ कि औलाद के साथ बराबरी का बर्ताव होना चाहिए। यदि ऐसा न किया गया तो उनके दिल आपस में फट जाएँगे और जो महरूम किया जाएगा, उसके मन में बाप के ख़िलाफ़ नफ़रत की भावना पनपेगी। हाँ, यह बात और है कि कोई बेटा जिस्मानी तौर से विकलांग है तो उसके साथ औरों के मुक़ाबले में बेहतर सुलूक किया जा सकता है। या इसी प्रकार यदि किसी बेटे को दीनी तालीम और दीन की ख़िदमत के लिए वक़्फ़ कर दिया जाए तो उसके साथ दूसरे बच्चों के मुक़ाबले में ज़्यादा अच्छा सुलूक किया जा सकता है।

यतीमों और औरतों के हक़ व अधिकार

(103) ख़ुवैलिद इब्ने-अम्र (रज़ि०) कहते हैं कि अल्लाह के रसूल (सल्ल०) ने फ़रमाया : ऐ अल्लाह ! मैं इन दोनों कमज़ोरों : यतीमों और औरतों के हक़ को मोहतरम ठहराता हूँ। (हदीस : नसई)

व्याख्या : नबी (सल्ल०) के बयान का यह अंदाज़ बड़ा ही प्रभावकारी है। आप (सल्ल०) लोगों को बता रहे हैं कि यतीमों और औरतों के अधिकारों की हिफ़ाज़त करो। यदि तुम उनके हक़ अदा नहीं करोगे तो तुम अपने नबी (सल्ल०) की नाफ़रमानी और तौहीन करोगे।

यतीम की सरपरस्ती करनेवाले को पैग़म्बर का साथ नसीब होगा

(104) सह्ल इब्ने-साद (रज़ि०) कहते हैं कि अल्लाह के रसूल (सल्ल०) ने फ़रमाया : मैं और यतीम का सरपरस्त और दूसरे ऐसे ही बेसहारा लोगों का सरपरस्त मैं और वह दोनों जन्नत में पास-पास रहेंगे। यह कहकर आप (सल्ल०) ने बीच की ऊँगली और शहादत की उँगली (अँगूठे के पासवाली) लोगों को दिखाकर बताया कि मैं और ये सरपरस्त जन्नत में इतने क़रीब रहेंगे। यह कहते समय आप (सल्ल०) ने दोनों उँगलियों के बीच में ज़रा सा फ़ासला रखा।

(हदीस : बुख़ारी)

व्याख्या : हदीस का मतलब एकदम वाज़ेह है। जन्नत में रहना हो—और वह

भी नबी (सल्ल०) के क़रीब ! इससे बड़ी ख़ुशक़िस्मती के बारे में सोचा भी नहीं जा सकता।

यतीम के माल में उसके सरपरस्त का हक़

(105) एक आदमी नबी (सल्ल०) के पास आया। उसने कहा कि मैं एक ग़रीब आदमी हूँ; मेरे पास कुछ नहीं है, और मेरी सरपरस्ती में एक (माल और जायदादवाला) यतीम है (क्या मैं उसके माल में से ले सकता हूँ ?) आप (सल्ल०) ने फ़रमाया : तुम अपने यतीम के माल में से अपना मुनासिब ख़र्च ले सकते हो शर्त यह है कि फ़िज़ूलख़र्ची न करो तथा उसके बालिग़ होने से पहले जल्दी-जल्दी उसका माल न उड़ाओ और अपनी जायदाद बनाने की फ़िक्र न करो।

(हदीस : अबू दाऊद)

व्याख्या : यह हदीस क़ुरआन की सूरा निसा के एक टुकड़े की अच्छी व्याख्या करती है जो यतीमों के बारे में है। उसका तर्जमा यह है :

"देखो, यतीमों का माल फ़िज़ूलख़र्ची करते हुए और उनके बड़े हो जाने के अंदेशे से जल्दी करते हुए हड़प न कर जाना। हाँ, जो सरपरस्त मालदार हो तो वह यतीम के माल में से कुछ भी लेने से परहेज़ करे। अलबत्ता जो ग़रीब है, वह अपना मुनासिब ख़र्च ले सकता है।"

यतीम को मारना

(106) हज़रत जाबिर (रज़ि०) कहते हैं कि मैंने नबी (सल्ल०) से पूछा : मेरी सरपरस्ती में जो यतीम है, मैं उसको किन वजहों से मार सकता हूँ ? नबी (सल्ल०) ने बताया : जिन वजहों से तुम अपने बेटों को मारते हो, यतीम को भी मार सकते हो। ख़बरदार ! अपना माल बचाने के लिए यतीम का माल बर्बाद न करना और न उसके माल को अपनी जायदाद बना लेना। (हदीस : मोजम तबरानी)

बीवियों के हक़ और अधिकार

(107) हकीम अपने वालिद मुआविया (रज़ि०) से रिवायत करते हैं कि उन्होंने (यानी मुआविया रज़ि०) कहा : ऐ अल्लाह के रसूल ! शौहर पर बीवी का क्या हक़ है ? आप (सल्ल०) ने फ़रमाया : जब तू खाए तो उसे भी खिलाए। जब तू पहने तो उसे भी पहनाए। उसके मुँह पर न मारे और उसे बद्दुआ न दे (जैसे : ख़ुदा तेरा चेहरा बिगाड़ दे, आदि) और यदि वह जायज़ और मुनासिब बात न माने और जिस्मानी ताल्लुक़ तोड़ लेना बहुत ज़रूरी हो जाए तो घर के भीतर हीं रहकर ही ताल्लुक तोड़े यानी घर में अपना बिस्तर अलग कर ले।

(हदीस : अबू दाऊद)

व्याख्या : मुँह पर तो पशुओं को भी मारना जायज़ नहीं, फिर जीवन-साथी के चेहरे पर मारना कैसे जायज़ हो सकता है ? फिर भी जब समझाने-बुझाने और नसीहत से बीवी न सुधरे तो शौहर हल्की-फुल्की सज़ा दे सकता है, लेकिन नबी (सल्ल०) की हिदायत है कि ऐसी मार न मारे कि जिससे ज़ख्म हो जाए या हड्डी टूट जाए।

बदज़बान बीवी के साथ सुलूक

(108) लक़ीत इब्ने सब्रा कहते हैं कि मैंने कहा : ऐ अल्लाह के रसूल ! मेरी बीवी बदज़बान है, (बताइए, मैं क्या करूँ ?) आप (सल्ल०) ने फ़रमाया : उसे तलाक़ दे दो। मैंने कहा : उससे मेरे बच्चे हैं, लम्बे समय से हम दोनों का साथ रहा है। (तलाक़ देने को जी नहीं चाहता, कि बच्चों का क्या बनेगा ?) आप (सल्ल०) ने फ़रमाया : फिर तो समझाने—बुझाने और नसीहत से काम लो। यदि उसमें भलाई क़बूल करने की सलाहियत होगी तो तुम्हारी नसीहतों से वह ज़रूर सुधर जाएगी। हाँ, इस बात का ध्यान रखना कि अपनी जीवन-संगिनी को इस तरह न पीटना जिस तरह तुम लौंडियों को मारते हो।

(हदीस : अबू दाऊद)

व्याख्या : हदीस के आख़िरी हिस्से का यह मतलब नहीं है कि बीवी पर हाथ न उठाओ और लौंडियों को ख़ूब पीटो बल्कि इसका मतलब यह है कि लोग जिस अंदाज़ से अपनी लौंडियों से बर्ताव करते हैं उस तरह का बर्ताव अपनी ज़िन्दगी भर की साथी के साथ न होना चाहिए।

बीवियों के बीच इंसाफ़ करने का हुक्म

(109) अबू हुरैरा (रज़ि०) से रिवायत है कि नबी (सल्ल०) ने फ़रमाया : जिस व्यक्ति की दो बीवियाँ हों और उसने उनके साथ इंसाफ़ और बराबरी का बर्ताव नहीं किया तो ऐसा व्यक्ति क़ियामत के दिन इस हाल में उठेगा कि उसके जिस्म का आधा भाग गिर गया होगा। (हदीस : तिरमिज़ी)

व्याख्या : शौहर ने जिस बीवी के हक़ अदा नहीं किए, वह उसके जिस्म का एक हिस्सा थी। अपने जिस्म के आधे हिस्से को उसने दुनिया में काटकर फेंक दिया था। ऐसी हालत में वह किस प्रकार क़ियामत के दिन पूरे जिस्म के साथ (अल्लाह की अदालत) में आएगा ?

बीवी पर किया जाने वाला ख़र्च 'नेकी' है

(110) हज़रत अबू मसऊद (रज़ि०) कहते हैं कि नबी (सल्ल०) ने फ़रमाया : जब कोई व्यक्ति अपने बीवी-बच्चों पर और उन लोगों पर जो उसकी सरपरस्ती में हैं आख़िरत में बदला पाने की नीयत से ख़र्च करता है तो यह उसके लिए 'नेकी' (यानी बदले और इनाम का काम) बनता है। (हदीस : बुख़ारी, मुस्लिम)

बीवी से निबाह की कोशिश करो

(111) हज़रत अबू हुरैरा (रज़ि०) से रिवायत है कि नबी (सल्ल०) ने फ़रमाया : कोई मोमिन शौहर अपनी मोमिन बीवी से नफ़रत न करे। यदि उसकी एक आदत पसंद नहीं आई तो दूसरी आदत पसंद आ जाएगी। (हदीस : मुस्लिम)

व्याख्या : यानी यदि बीवी ख़ूबसूरत नहीं है या आपके मेयार पर पूरी नहीं उतरती या उसमें किसी और तरह की कमी का अहसास होता है तो उससे बेज़ार होने या उससे नफ़रत करने में जल्दबाज़ी नहीं करनी चाहिए। उसकी अच्छाइयों को उभरने और सलाहियतों को निखरने का मौक़ा दीजिए, हो सकता है, वह आपका दिल जीत ले। किसी के रंग-रूप से ज़्यादा ताक़तवर और मुफ़ीद उसकी ओर से की जानेवाली ख़िदमत और मुहब्बत होती है।

अच्छी बीवी की ख़ूबियाँ

(112) हज़रत अबू हुरैरा (रज़ि०) बयान करते हैं कि नबी (सल्ल०) से पूछा गया : अच्छी बीवी की सिफ़ात और ख़ूबियाँ क्या हैं ? आप

(सल्ल०) ने फ़रमाया : अच्छी बीवी वह है जिसे उसका शौहर देखे तो ख़ुश हो जाए, हुक्म दे तो माने तथा अपने बारे में और अपने माल-दौलत के बारे में कोई ऐसा रवैया न अपनाए जो शौहर को नापसंद हो। (हदीस : नसई)

व्याख्या : अपने माल-दौलत से मुराद शौहर का माल है जो उसने बीवी को घर की मालिका के रूप में दिया है।

नफ़्ल इबादत के लिए शौहर की इजाज़त लेनी ज़रूरी है

(113) अबू सईद ख़ुदरी (रज़ि०) कहते हैं कि एक औरत नबी (सल्ल०) के पास आई और कहा : मेरे शौहर सफ़्वान इब्ने मुअत्तल नमाज़ पढ़ने पर मुझे मारते हैं और रोज़े से होती हूँ तो रोज़ा तुड़वा देते हैं; फ़ज्र की नमाज़ भी वे सूरज निकल आने के बाद पढ़ते हैं।

हदीस को बयान करनेवाले अबू सईद (रज़ि०) कहते हैं कि सफ़्वान हमारे साथ इसी मजलिस में मौजूद थे। नबी (सल्ल०) ने उनकी बीवी की शिकायतों के बारे में उनसे पूछा। उन्होंने कहा : ऐ अल्लाह के रसूल! नमाज़ पढ़ने पर मारने की जो शिकायत है, उसकी हक़ीक़त यह है कि वह दो-दो सूरतें (क़ुरआन के अध्याय) मिलाकर पढ़ती है, जबकि मैं उसे इससे मना कर चुका हूँ। इसपर आप (सल्ल०) ने कहा : नमाज़ में एक सूरत पढ़ लेना काफ़ी है, दो सूरत मिलाकर पढ़ना क्या ज़रूरी है। सफ़वान ने कहा : रोज़ा तुड़वाने की बात यह है कि यह लगातार रोज़ा रखे चली जाती है; मैं जवान आदमी हूँ, सब्र नहीं कर पाता। इसपर आप (सल्ल०) ने हुक्म दिया : कोई औरत अपने शौहर की इजाज़त से ही नफ़्ल रोज़े रख सकती है। इसके बाद सफ़्वान ने कहा : दिन निकल आने के बाद फ़ज्र की नमाज़ पढ़ने का मामला यह है कि हमारा ताल्लुक़ उस ख़ानदान से है जिसके बारे में यह बात आम है कि जब तक दिन न निकल आए, हमारी नींद नहीं टूटती। इसपर आप (सल्ल०) ने कहा : ऐ सफ़्वान! जब नींद टूटे तब नमाज़ पढ़ लिया करो। (हदीस : अबू दाऊद)

व्याख्या : शौहर को यह हक़ नहीं है कि वह अपनी बीवी को फ़र्ज़ (अनिवार्य) इबादतों से रोके। हाँ, बीवी के लिए ज़रूरी है कि वह शौहर की ज़रूरतों को ध्यान में रखे। दीनदारी के शौक़ में लम्बी-लम्बी सूरतें पढ़कर नमाज़ लम्बी न

करे। रही नफ़्ल नमाज़-रोज़े की बात, तो शौहर की इजाज़त के बिना इसका इरादा न करे।

सफ़्वान बिन मुअत्तल नबी (सल्ल०) के साथियों में से हैं। उनके बारे में यह सोचा भी नहीं जा सकता कि वे फ़ज्र की नमाज़ में सुस्ती और लापरवाही बरतते रहे हों। यह भी नहीं कहा जा सकता कि उनकी बीवी ने जिस अंदाज़ में बात नबी (सल्ल०) के सामने रखी है, वह सही नहीं है। उनकी फ़ज्र की नमाज़ हमेशा क़ज़ा नहीं होती थी। यदि हमेशा छूटती रहती तो नबी (सल्ल०) उन्हें ज़रूर मलामत करते। फ़ज्र की नमाज़ समय पर अदा न होने की दो वजहें जान पड़ती हैं : पहली वजह की ओर ख़ुद यह हदीस इशारा करती है। कुछ लोग बहुत गहरी नींद सोते हैं। चाहे क़ियामत का शोर हो, उन्हें कितना भी जगाइए, उनकी नींद टूटने का नाम नहीं लेती। दूसरी वजह यह थी कि वे रातों को खजूरों के बाग़ों में मज़दूरी पर सिंचाई का काम करते थे। वाज़ेह है, जो व्यक्ति रात का एक बड़ा भाग जागकर गुज़ारे उसके लिए फ़ज्र के वक़्त जागना आसान नहीं होता।

इस हदीस से यह भी पता चलता है कि नबी (सल्ल०) के समय में औरतों में इबादत का कितना ज़्यादा शौक़ था।

शौहर की नाशुक्री

(114) हज़रत अस्मा बिन्त यज़ीद अंसारी (रज़ि०) कहती हैं कि मैं अपनी हमउम्र सहेलियों के साथ बैठी थी। इतने में नबी (सल्ल०) हमारे पास से गुज़रे। आप (सल्ल०) ने हमें सलाम किया और कहा : तुम अच्छा सुलूक करनेवाले शौहरों की नाशुक्री से बचना। फिर फ़रमाया : तुम औरतों में किसी का हाल यह होता है कि अपने माँ-बाप के घर लम्बे अरसे तक बैठी रहती है। फिर अल्लाह उसे शौहर दे देता है और उससे औलाद भी हो जाती है। फिर उसे किसी बात पर ग़ुस्सा आ जाता है और शौहर से कहती है : मुझे तुमसे कभी आराम नहीं मिला। तुमने कभी मेरे साथ अच्छा सुलूक नहीं किया।

(अल-अदबुल मुफ़रद : इमाम बुख़ारी)

बीवी, शौहर के घर की निगराँ और बच्चों की तरबियत की ज़िम्मेदार है

(115) अब्दुल्लाह इब्ने-उमर (रज़ि०) कहते हैं कि नबी (सल्ल०) ने फ़रमाया : तुममें से हरेक निगराँ और सरपरस्त है और तुममें से प्रत्येक

से उन लोगों के बारे में पूछताछ होगी जो तुम्हारी देख-रेख और सरपरस्ती में होंगे। क़ौम का नेता (अमीर) भी निगराँ है और उससे उसकी रैयत के बारे में पूछताछ होगी। शौहर अपनी बीवी (बच्चों और जिनकी सरपरस्ती का भार उसपर है) का निगराँ है। बीवी अपने शौहर के घर और उसके बच्चों की निगराँ है। तो तुम में का हर व्यक्ति निगराँ है और उसके मातहत लोगों के बारे में तुममें से हरेक से पूछगछ होगी। (हदीस : रियाज़ुस्सालिहीन)

व्याख्या : इस हदीस से पता चलता है कि शौहर अपनी बीवी को सिर्फ़ खिलाने-पहनाने का ज़िम्मेदार नहीं है, बल्कि उसके दीन और अख़्लाक़ की हिफ़ाज़त और उसकी देख-रेख की ज़िम्मेदारी भी उस पर है। बीवी पर तो निगरानी का दोहरा भार है। वह शौहर के घर और उसके धन की निगराँ तो है ही, उसके बच्चों की तरबियत की अहम ज़िम्मेदारी भी उस पर है, क्योंकि शौहर तो रोज़ी और आजीविका की तलाश में अधिकतर बाहर रहता है और बच्चे ज़्यादातर अपनी माँ के पास रहते हैं और बाप के मुक़ाबले में माँ से ज़्यादा हिले-मिले होते हैं। यही वज़ह है कि सबसे अच्छी तरबियत करनेवाले हज़रत मुहम्मद (सल्ल०) का हुक्म है कि बच्चे जब सात साल के हो जाएँ तो उन्हें नमाज़ पढ़ने पर उभारो, नसीहत करो, हर तरह समझाओ; और जब वे दस साल के हो जाएँ और समझाने बुझाने पर भी नमाज़ न पढ़ें तो उनको सज़ा दो। इस हुक्म के पालन में माँ या बाप की या दोनों की हर कोताही पर पूछगछ होगी।

बीवी का हक़

(116) समुरा इब्ने-जुन्दुब (रज़ि०) से रिवायत है कि अल्लाह के रसूल (सल्ल०) ने फ़रमाया : औरत का जन्म पसली से हुआ है। यदि तुम उसे सीधा करना चाहोगे तो तोड़ डालोगे। अतः उसके साथ अच्छा बर्ताव करो तो ज़िन्दगी अच्छी गुज़रेगी। (हदीस : अल-मुंज़िरी)

व्याख्या : "औरत का जन्म पसली से हुआ है।" यह उसी प्रकार का मुहावरा है जैसे क़ुरआन मजीद में आया है : 'खुलिक़ल् इंसानु मिन् अजल्' (21 : 37) यानी इंसान का जन्म जल्दबाज़ी से हुआ है। पसली अपनी ज़ाहिरी बनावट में टेढ़ी नज़र आती है और यही उसकी सबसे बड़ी ख़ूबी है। अल्लाह ने उसके अंदर झुकाव रखा है, जिसकी वजह सीना और उसके भीतर के अहम अंगों की हिफ़ाज़त होती है। यदि पसली सीधी होती तो छाती और उसके अंदरूनी अहम अंगों की हिफ़ाज़त न हो पाती। अतः औरत की मिसाल पसली से दी जा सकती

है जो शौहर और उसके घर की हिफ़ाज़त करनेवाली है। यह देखा गया है कि मर्दों में आम तौर से बचा-बचाकर रखने की आदत नहीं होती। यह ख़ूबी आमतौर से औरतों में पाई जाती है। यदि औरत में यह ख़ूबी न होती तो घर-गृहस्थी का सारा इन्तिज़ाम चौपट होकर रह जाता। नबी (सल्ल०) ने औरत की मिसाल पसली से दी है और उसकी ख़ूबियों की ओर ध्यान दिलाया है। आप (सल्ल०) के कहने का यह मतलब हरगिज़ नहीं है कि औरतें टेढ़ी होती हैं और मर्द बड़े सीधे होते हैं, बल्कि कहने का मतलब यह है कि औरत का स्वभाव तथा उसके सोचने और करने का ढंग मर्दों से भिन्न होता है। पारिवारिक व्यवस्था (ख़ानदानी निज़ाम) में मर्द को घर का मुखिया और सर्वोच्च अधिकारी बनाया गया है। अब यदि कोई शौहर अपनी बीवी की भावनाओं और जज़बात का लिहाज़ न करे और अपनी बात मनवाने पर अड़ा रहे तो घर सच्ची ख़ुशियों से महरूम हो जाएगा तथा लड़ाई-झगड़े और आपसी कलह से नरक (जहन्नम) में बदल जाएगा। यही वजह है कि नबी (सल्ल०) ने मर्दों को औरतों के साथ नरमी और मुहब्बत का बर्ताव करने की तालीम दी है ताकि घर में अमन-चैन का माहौल बना रहे, कलह की हालत न पैदा हो।

इस हदीस की कुछेक रिवायतों (उल्लेखों) के अंतिम शब्द ये हैं :

"बीवियों के साथ ख़ुद भी अच्छा बर्ताव करो और दूसरों को भी उनसे अच्छा बर्ताव करने की नसीहत करो।"

शौहर का हक़ अदा करना भी जिहाद है

(117) हज़रत इब्ने अब्बास (रज़ि०) ने फ़रमाया : एक औरत नबी (सल्ल०) के पास आई। उसने कहा : ऐ अल्लाह के रसूल ! मुझे औरतों ने आपके पास अपना नुमाइन्दा बनाकर भेजा है (यह कहने के लिए कि) जिहाद सिर्फ़ मर्दों के लिए ज़रूरी हुआ है। यदि वे घायल हो जाएँ तो उन्हें इसका सवाब मिले। शहीद हो जाएँ तो अपने रब के पास ज़िन्दा रहें तथा उसके इनाम-इकराम और बख़्शिश का लुत्फ़ उठाएँ—और हम औरतें (जिहाद के मैदान में उनके चले जाने के बाद) उनके घर की हिफ़ाज़त करती हैं, अपने मुजाहिद मर्दों की ज़रूरतों का ख़याल रखती हैं तो हमें इस ख़िदमत का क्या फल मिलेगा? नबी (सल्ल०) ने फ़रमाया : तुम्हें जो औरत भी मिले उस तक मेरी यह बात पहुँचा दो कि जिहाद की मुहिम पर जानेवाले शौहरों की फ़रमाँबरदारी और वफ़ादारी तथा उनके हक़ों को जानना-समझना जिहाद के बराबर

है; लेकिन तुम औरतों में कम ही ऐसी हैं जो ऐसा करती हैं।

यह 'मुस्नद बज़्ज़ार' की रिवायत है जो मुख़्तसर है; 'तबरानी' (एक हदीस संग्रह) ने किसी हद तक तफ़्सील से इस हदीस को बयान किया है जिसका आख़िरी हिस्सा (अंश) यह है :

एक औरत नबी (सल्ल०) के पास आई और कहा : मैं आपके पास औरतों की नुमाइन्दा बनकर आई हूँ; और चाहे किसी औरत को आपके पास मेरे आने की ख़बर हो या न हो तो भी हर औरत आपके पास मेरा आना पसंद करती है। मुझे कहना यह है कि अल्लाह मर्दों और औरतों—दोनों का मालिक, माबूद और हाकिम है तथा आप मर्दों और औरतों—दोनों की ओर पैग़म्बर (संदेष्टा) बनाकर भेजे गए हैं। मर्दों पर जिहाद फ़र्ज़ हुआ है। यदि वे इस्लाम के दुश्मनों को मारें तो वे सवाब कमाएँ और यदि वे शहीद हो जाएँ तो बेहतरीन ज़िन्दगी पाएँ, रब का उन्हें सानिध्य और क़ुरबत हासिल हो तथा उसके इनाम-इकराम से मालामाल हों—बताइए, हम क्या करें जो उनके बराबर बदला और सवाब कमाएँ? नबी (सल्ल०) ने फ़रमाया : इन शौहरों की फ़रमाँबरदारी और उनके हक़ की अदायगी का वही मक़ाम है जो मर्दों के मैदाने-जिहाद के काम का है। (अल-मुंज़िरी)

व्याख्या : इस नुमाइन्दा औरत का नाम अस्मा बिन्त यज़ीद है। ये बड़ी पढ़ी-लिखी थीं और तक़रीर भी अच्छी करती थीं। अपना मुद्दा रखने का बड़ा अच्छा ढंग अल्लाह ने उन्हें दिया था। यही वजह है कि नबी (सल्ल०) ने बैठक में मौजूद लोगों के सामने इस पहलू से उनकी तारीफ़ की। हज़रत अस्मा (रज़ि०) नबी (सल्ल०) के पास 'औरतों और मर्दों की बराबरी' का मसला लेकर नहीं गई थीं। बल्कि वे और उस समय की दूसरी औरतें आप (सल्ल०) की ज़बाने-मुबारक से यह ख़ुशख़बरी सुनना चाहती थीं कि 'इक़ामते-दीन' (इस्लाम की स्थापना के लिए की जानेवाली जिद्दोजुहद) के अनेक मरहलों में मर्दों के पीछे घरों में रहकर काम करनेवाली औरतें उस फल से महरूम न रहेंगी जो मर्दों को मिलनेवाला है, बल्कि इससे भी आगे यह कि उन्हें उन मर्दों के बराबर इज़्ज़त और इनाम मिलेगा।

पड़ोसियों का हक़

पड़ोसी को तकलीफ़ देना ईमान के ख़िलाफ़ है

(118) हज़रत अबू हुरैरा (रज़ि०) से रिवायत है कि अल्लाह के रसूल (सल्ल०) ने फ़रमाया : ख़ुदा की क़सम ! वह ईमान नहीं रखता; ख़ुदा की क़सम ! वह ईमान नहीं रखता; ख़ुदा की क़सम ! वह ईमान नहीं रखता ! लोगों ने घबराकर पूछा : कौन ? ऐ अल्लाह के रसूल ! आप (सल्ल०) ने फ़रमाया : वह व्यक्ति ईमान नहीं रखता जिसका पड़ोसी उसके ज़रिए तकलीफ़ देने और सताने से महफ़ूज़ न हो।

(हदीस : बुख़ारी, मुस्लिम)

भूखा पड़ोसी

(119) हज़रत अब्दुल्लाह इब्ने-अब्बास (रज़ि०) का बयान है कि मैंने अल्लाह के रसूल (सल्ल०) को यह फ़रमाते सुना है : मोमिन ऐसा नहीं होता कि ख़ुद तो पेट भर खाकर सोए और उसका पड़ोसी भूखा सोए। (हदीस : मिशकात)

पड़ोसियों की देखभाल करना

(120) हज़रत अबू ज़र ग़िफ़ारी (रज़ि०) कहते हैं कि अल्लाह के रसूल (सल्ल०) ने फ़रमाया : ऐ अबू ज़र ! जब तुम गोश्त पकाओ तो शोरबा (तरी) ज़्यादा कर दो और पड़ोसियों की देखभाल करो (पता करो कि किसके घर सालन नहीं है या कमी है, उसके यहाँ भेजो।)

(हदीस : मुस्लिम)

पड़ोसियों को तोहफ़ा भेजना

(121) हज़रत अबू हुरैरा (रज़ि०) कहते हैं कि अल्लाह के रसूल (सल्ल०) ने मुसलमान औरतों को मुख़ातब करते हुए फ़रमाया : ऐ मुसलमान औरतो ! कोई औरत अपनी पड़ोसन को मामूली से मामूली चीज़ तोहफ़ा भेजने को छोटा न समझे; यदि उसके पास बकरी की खुर ही हो तो वही भेजे। (हदीस : बुख़ारी, मुस्लिम)

व्याख्या : 'बक़री की खुर' अरबी ज़बान का मुहावरा है और यह मामूली सी चीज़ के मानी में इस्तेमाल होता है। औरतों का मिज़ाज आम तौर से यह होता है कि वे कोई मामूली और थोड़ी चीज़ अपने पड़ोस में भेजना पसंद नहीं करतीं। उनकी ख़्वाहिश यह होती है कि अच्छी से अच्छी चीज़ भेजें। इस लिए नबी (सल्ल०) ने औरतों को हिदायत की कि मामूली से मामूली चीज़ भी अपनी पड़ोसन के यहाँ भेजो। तो जिन औरतों के पास-पड़ोस से कोई तोहफ़ा आए, उसे खुले दिल से क़बूल करना चाहिए। उसे न तो मामूली समझें और न उसकी नुक्ता चीनी करें जैसा कि नासमझ औरतें करती हैं।

क़ियामत के दिन पहला मुक़द्दमा पड़ोसियों का होगा

(122) हज़रत उक़्बा बिन आमिर (रज़ि०) कहते हैं कि अल्लाह के रसूल (सल्ल०) ने फ़रमाया : क़ियामत के दिन जिन दो व्यक्तियों का मुक़द्दमा अल्लाह की अदालत में सबसे पहले पेश होगा, वे दो पड़ोसी होंगे। (हदीस : मिशकात)

व्याख्या : यानी क़ियामत के दिन बन्दों के हक़ से संबंधित जो मुक़द्दमे/विवाद ख़ुदा की अदालत में पेश होंगे उनमें सबसे पहला दो पड़ोसियों का मुक़द्दमा पेश होगा जो अड़ोस-पड़ोस में रहते हुए भी एक दूसरे को सताने, दबाने, गिराने से न चूके। याद रहे, सभी मुसलमानों का हिसाब नबी (सल्ल०) की मौजूदगी में होगा। इस हदीस में जिस मुक़द्दमे की बात कही गई है, उसमें नबी (सल्ल०) गवाही देंगे कि मैंने साफ़-साफ़ बता दिया था कि मुसलमान पर इंसानों के क्या हक़ हैं और पड़ोसियों के साथ पड़ोसी को कैसा बर्ताव करने की तालीम दी गई है।

सबसे ज़्यादा हक़दार पड़ोसी

(123) हज़रत आइशा (रज़ि०) फ़रमाती हैं कि मैंने पूछा : ऐ अल्लाह के रसूल! मेरे दो पड़ोसी हैं, तो उनमें से किसके यहाँ मैं कोई चीज़ तोहफ़े में भेजूँ? नबी (सल्ल०) ने फ़रमाया : उस पड़ोसी के यहाँ जिसका दरवाज़ा तेरे दरवाज़े से ज़्यादा क़रीब हो। (हदीस : बुख़ारी)

पड़ोसी के साथ बर्ताव का नतीजा : जन्नत या जहन्नम

(124) हज़रत अबू हुरैरा (रज़ि०) कहते हैं कि एक व्यक्ति ने कहा : ऐ अल्लाह के रसूल! फ़लाँ औरत नफ़्ल नमाज़ें पढ़ने, नफ़्ली रोज़े रखने

और सदक़ा (दान-पुण्य) करने के लिए बहुत मशहूर है, लेकिन अपनी ज़बान से पड़ोसियों को सताती है (उसके बारे में आपका क्या विचार है ?) आप (सल्ल०) ने फ़रमाया : वह जहन्नम में जाएगी।

उस व्यक्ति ने कहा : एक दूसरी औरत है जो नफ़्ल नमाज़ कम पढ़ती है, नफ़्ली रोज़े भी कम रखती है और सदक़ा (दान) भी थोड़ा ही करती है। वह पनीर के कुछ टुकड़े ग़रीबों को देती है, लेकिन अपने पड़ोसियों को अपनी ज़बान (आदि) से नहीं सताती। (उसके बारे में आप की क्या राय है ?) आप (सल्ल०) ने फ़रमाया : वह जन्नत में जाएगी।

(हदीस : मिशकात)

मेहमान-नवाज़ी

मेहमान का हक़

> (125) हज़रत ख़ुवैलिद इब्ने उम्र (रज़ि०) से रिवायत है कि अल्लाह के रसूल (सल्ल०) ने फ़रमाया : जो लोग अल्लाह और आख़िरत के दिन पर ईमान रखते हों वे अपने मेहमान की ख़ातिर करें। पहला दिन इनाम और बख़्शिश का है (जिसमें उसकी ख़ूब ख़ातिरदारी की जानी चाहिए)। और मेहमानी तीन दिन की है। तीन दिन के बाद मेज़बान जो कुछ करेगा उस पर सवाब मिलेगा। मेहमान के लिए जायज़ नहीं कि वह अपने मेज़बान के यहाँ तीन दिन से अधिक ठहरे जिसकी वजह से वह तंगी और परेशानी में पड़ जाए।
>
> (हदीस : बुख़ारी, मुस्लिम)

व्याख्या : इस हदीस में मेहमान और मेज़बान—दोनों को ही हिदायतें दी गई हैं कि मेहमान को तीन दिन से अधिक नहीं ठहरना चाहिए और मेज़बान को हर मुमकिन ख़ातिरदारी करनी चाहिए। हाँ, मेज़बान ख़ुद अपनी ख़ुशी व रज़ामंदी से मेहमान को और अधिक दिन के लिए रोकना चाहे तो यह बात अलग है।

इस हदीस के आख़िरी हिस्से की ज़्यादा स्पष्ट व्याख्या उस हदीस से होती है जिसका ज़िक्र 'सहीह मुस्लिम' में हुआ है जिसमें नबी (सल्ल०) ने फ़रमाया :

> किसी मुसलमान के लिए यह मुनासिब नहीं कि वह अपने भाई के पास इतने दिन ठहरा रह जाए कि उसे परेशानी में डाल दे। लोगों ने पूछा: ऐ अल्लाह के रसूल! वह कैसे उसे परेशानी में डाल देगा? आप (सल्ल०) ने फ़रमाया : वह इस प्रकार कि मेज़बान के पास ठहरा रहे और उसके पास ख़ातिरदारी के लिए कुछ न हो।

फ़क़ीरों एवं मिस्कीनों के हक़

मुफ़लिसों के साथ अल्लाह का ताल्लुक़

(126) हज़रत अबू हुरैरा (रज़ि०) कहते हैं कि अल्लाह के रसूल (सल्ल०) ने फ़रमाया : क़ियामत के दिन अल्लाह कहेगा : ऐ आदम के बेटे ! मैंने तुझसे खाना माँगा था, लेकिन तूने मुझे खाना नहीं दिया ? वह कहेगा : ऐ मेरे रब ! मैं तुझे खाना किस प्रकार खिलाता जबकि तू ख़ुद सारे संसार का पालनहार है ? (लोगों की परवरिश तू करता है, फिर तुझे खाने की ज़रूरत भी तो नहीं है ?) अल्लाह कहेगा : क्या तुझे पता नहीं कि मेरा फ़लाँ बंदा भूखा था, उसने तुझसे खाना माँगा, लेकिन तूने नहीं दिया (जबकि तेरे पास देने के लिए बहुत कुछ था) क्या तुझे यह पता न था कि यदि तू उसके पेट की आग बुझा देता तो उसका बदला मेरे पास से पाता। फिर अल्लाह उससे कहेगा : ऐ आदम के बेटे ! मैंने तुझसे पानी माँगा था मगर तूने मेरी प्यास नहीं बुझाई ! वह कहेगा : ऐ मेरे रब ! मैं तुझे कैसे पिलाता जबकि तू ख़ुद सारे संसार का पालनहार है (तू सबको पिलाता है। तुझे प्यास ही कब लगती है ?) वह कहेगा : क्या तुझे पता है कि मेरे फ़लाँ प्यासे बन्दे ने तुझसे पानी माँगा था मगर तूने उसकी प्यास नहीं बुझाई (जबकि तेरे पास फ़ालतू पानी मौजूद था) क्या तुझे पता नहीं कि यदि तू उसकी प्यास बुझा देता तो उसका इनाम तुझे मेरे पास से मिलता !

(हदीस : मुस्लिम)

ईमानवाले मिस्कीन की मदद

(127) हज़रत अबू सईद ख़ुदरी (रज़ि०) कहते हैं कि अल्लाह के रसूल (सल्ल०) ने फ़रमाया : जिस किसी मुसलमान ने किसी भूखे मोमिन को खाना खिलाया, अल्लाह उसको क़ियामत के दिन जन्नती खाना खिलाएगा और जिस मुसलमान ने किसी प्यासे मोमिन को पानी पिलाया, अल्लाह उसे क़ियामत के दिन मुहरबंद उम्दा क़िस्म का पेय पिलाएगा तथा जिस मुसलमान ने कपड़ों से महरूम (नंगे) किसी मोमिन को कपड़ा पहनाया, अल्लाह उसे क़ियामत के दिन जन्नती लिबास पहनाएगा। (हदीस : तिरमिज़ी)

मिस्कीन : मदद का सबसे ज़्यादा हक़दार

(128) नबी (सल्ल०) ने फ़रमाया : असल मिस्कीन वह नहीं है जो भिखारी बनकर लोगों के पास जाता है और एक दो निवाला खाना या एक-दो खजूर लेकर घर लौटता है, बल्कि असल में मिस्कीन वह है जिसके पास अपनी ज़रूरत पूरी करने के लिए कुछ नहीं है और लोग उसकी हालत को नहीं जान पाते कि उसे मदद के तौर पर कुछ दें। इज़्ज़त और शर्म की वजह से वह लोगों के सामने हाथ नहीं फैलाता।

(हदीस : बुख़ारी व मुस्लिम)

नौकरों और सेवकों का हक़

(129) हज़रत अबू हुरैरा (रज़ि०) कहते हैं कि अल्लाह के रसूल (सल्ल०) ने फ़रमाया : ग़ुलाम और बाँदी (दासी) का हक़ यह है कि उन्हें खाना खिलाया जाए और कपड़े दिए जाएँ तथा उनपर काम का उतना ही बोझ डाला जाए जिसे वे सहन कर सकते हों।

(हदीस : मुस्लिम)

व्याख्या : असल हदीस में 'मम्लूक' शब्द इस्तेमाल हुआ है जिससे मुराद लौंडी और ग़ुलाम हैं जो इस्लाम से पूर्व अरब-समाज में पाए जाते थे। लोग इनके साथ जानवरों से भी बुरा सुलूक करते थे, उन्हें ठीक से खाना और कपड़ा न देते और उनकी ताक़त से भी अधिक काम लेते। जब इस्लाम आया तो उस समय यह वर्ग भी पाया जाता था। यही वजह है कि नबी (सल्ल०) ने मुस्लिम समाज को हुक्म दिया कि उन्हें खिलाओ, कपड़े पहनाओ और उनसे हल्का-फुल्का काम लो।

यही हुक्म उस नौकर का है जिसके दिन-रात मालिक के पास बीतते हैं।

नौकरों के साथ अच्छा बर्ताव करने के बारे में अबू क़िलाबा (रज़ि०) की एक रिवायत का तर्जुमा देखिए। वे कहते हैं :

हज़रत सलमान फ़ारसी (रज़ि०) जिस समय गवर्नर थे, एक व्यक्ति उनके पास आया। उसने देखा कि गवर्नर साहब अपने हाथ से आटा गूंध रहे हैं। पूछा : यह क्या? हज़रत सलमान ने कहा : हमने अपने नौकर को एक काम से बाहर भेज दिया है और हमें यह अच्छा नहीं लगता कि उस पर दो कामों का बोझ डालें।

(130) हज़रत अबू हुरैरा (रज़ि०) कहते हैं कि अल्लाह के रसूल (सल्ल०) ने फ़रमाया : ये ग़ुलाम तुम्हारे भाई हैं, इन्हें अल्लाह ने तुम्हारे मातहत कर दिया है। तो अल्लाह ने जिस व्यक्ति के भाई को उसके

मातहत किया है उसे चाहिए कि उसे वह खाना खिलाए जो वह ख़ुद खाता है और वह (कपड़ा) पहनाए जो ख़ुद पहनता है तथा उससे ऐसा कोई काम न ले जो उसकी ताक़त से बाहर हो। और यदि किसी मौक़े पर उससे भारी काम कराना पड़ जाए तो उसमें उसका हाथ बटाए।

(हदीस : बुख़ारी-मुस्लिम)

(131) हज़रत अबू हुरैरा (रज़ि०) रिवायत करते हैं कि अल्लाह के रसूल (सल्ल०) ने फ़रमाया : जब तुममें से किसी का नौकर खाना तैयार करके उसके पास लाए और हाल यह है कि खाना पकाने में वह आँच और धुएँ का कष्ट झेलता है—तो उसे अपने पास बिठाकर खिलाए और अगर खाना थोड़ा हो तो दो एक लुक़मा (कौर) उसको दे दे। (हदीस : मुस्लिम)

ग़ुलाम को मारने की मनाही

(132) हज़रत अबू उमामा (रज़ि०) कहते हैं कि अल्लाह के रसूल (सल्ल०) ने हज़रत अली (रज़ि०) को एक ग़ुलाम दिया और कहा : इसे मारना मत, क्योंकि मुझे (ख़ुदा की ओर से) नमाज़ियों को मारने से मना किया गया है और मैंने इस ग़ुलाम को नमाज़ पढ़ते हुए देखा है।

(हदीस : मिशकात)

नौकरों के साथ नर्मी करने का फल

(133) हज़रत अम्र इब्ने हुरैस (रज़ि०) कहते हैं कि नबी (सल्ल०) ने फ़रमाया : तुम अपने नौकरों से जितना हल्का काम लोगे उतना ही अज्र व सवाब तुम्हारे आमालनामे में लिखा जाएगा।

(हदीस : अल-मुंज़िरी)

सफ़र के साथियों के हक़

सफ़र के साथियों की ख़िदमत

(134) हज़रत सह्ल इब्ने-साद (रज़ि०) कहते हैं कि अल्लाह के रसूल (सल्ल०) ने फ़रमाया : क़ौम का सरदार (क़ाफ़िलों का अमीर) उनका ख़िदमतगार होता है। ऐसी हालत में क़ाफ़िले का जो अमीर क़ाफ़िलेवालों की ख़िदमत में आगे-आगे हो तो कोई व्यक्ति अपने किसी अमल की वजह से उससे आगे नहीं बढ़ सकता सिवाय शहादत के (जिसका मक़ाम बहुत ऊँचा है।) (हदीस : मिशकात)

ज़रूरत से अधिक चीज़ हो तो अपने हमसफ़र को दो

(135) हज़रत अबू सईद ख़ुदरी (रज़ि०) कहते हैं कि एक बार हम लोग सफ़र में थे कि एक व्यक्ति नबी (सल्ल०) के पास सवार होकर आया और आते ही इधर-उधर देखने लगा। (नबी सल्ल० समझ गए कि इसे कुछ ज़रूरत है) तो आप (सल्ल०) ने फ़रमाया : जिस व्यक्ति के पास अपनी ज़रूरत से ज़्यादा सवारी हो, उसे चाहिए कि वह उसे दे जिसके पास सवारी का जानवर नहीं। इसी तरह जिसके पास फ़ालतू खाना हो उसे चाहिए कि वह उस व्यक्ति को दे जिसके पास खाना नहीं है। हज़रत अबू सईद ख़ुदरी (रज़ि०) का बयान है कि नबी (सल्ल०) ने धन की अनेक क़िस्मों का ज़िक्र किया यहाँ तक कि हमने यह समझा कि हम लोगों में से किसी का अपनी ज़रूरत से ज़्यादा धन पर कोई अधिकार और हक़ ही नहीं है। (हदीस : मुस्लिम)

शैतानी घर और शैतानी सवारी

(136) हज़रत अबू हुरैरा (रज़ि०) कहते हैं कि अल्लाह के रसूल (सल्ल०) ने फ़रमाया : कुछ ऊँट शैतानों का हिस्सा होते हैं और कुछ घर भी। शैतानी ऊँट तो मैंने भी देखे हैं। (देखते नहीं कि) तुम में से कोई अपने साथ बहुत-सी सवारियाँ लेकर निकलता है, उन्हें पाल-पोसकर ख़ूब मोटा ताज़ा बना रखा है और उनमें से किसी पर वह सवार नहीं होता। वह अपने भाई के पास से गुज़रता है, जिसके

पास सवारी नहीं है, फिर भी यह व्यक्ति अपनी अनेक सवारियों में से किसी पर उसे सवार नहीं करता। (यह तो शैतानी सवारियों का हाल हुआ) रहे शैतानी घर तो मैंने उन्हें नहीं देखा। (हदीस : अबू दाऊद)

व्याख्या : शैतानी घरों से मुराद वे मकान हैं जिन्हें लोग बग़ैर ज़रूरत महज़ अपनी शान-शौकत और दौलत की नुमाइश के लिए बनाते हैं। न ख़ुद उनमें रहते हैं, न बेघर लोगों को रहने के लिए देते हैं। इस्लाम ऐसी नुमाइश पसंद नहीं करता। नबी (सल्ल०) ने ऐसे मकान नहीं देखे क्योंकि मुस्लिम समाज में उस समय ऐसे नुमाइशी लोग नहीं थे। अलबत्ता बाद के दौर में हमारे बुज़ुर्गों ने ऐसे मकान देखे और हम भी अपने ज़माने के कुछ दौलतमन्द मुसलमानों के यहाँ ऐसे नुमाइशी मकान देख रहे हैं।

बीमारों के हक़

बीमारों का हक़

(137) हज़रत अबू हुरैरा (रज़ि०) कहते हैं कि अल्लाह के रसूल (सल्ल०) ने बताया : क़ियामत के दिन अल्लाह एक आदमी से कहेगा: ऐ आदम के बेटे ! मैं बीमार पड़ा था, तो तू मेरी इयादत (हाल पूछने) के लिए नहीं आया। वह कहेगा : ऐ मेरे रब ! तेरी इयादत को कैसे आता, तू तो सारे संसार का पालनहार है। (बीमार पड़ना तो तेरी शान के ख़िलाफ़ है)। अल्लाह कहेगा : क्या तुझे पता नहीं था कि मेरा फ़लाँ बंदा बीमार पड़ा था मगर तू उसका हाल-चाल मालूम करने नहीं गया-था ? क्या तुझे पता न था कि यदि तू उसका हाल-चाल मालूम करने जाता तो मुझे उसके पास पाता। (हदीस : मुस्लिम)

व्याख्या : बीमार का हाल-चाल मालूम करने के लिए यहाँ मूल हदीस में जो अरबी शब्द आया है उसमें देख-रेख का भाव भी छिपा हुआ है। यानी मरीज़ अगर ग़रीब है और दवा के लिए उसके पास पैसे नहीं हैं तो उसकी दवा का इन्तिज़ाम करो, और यदि उसके पास पैसे तो हैं मगर कोई दवा लानेवाला नहीं है तो तुम दवा ला दो या फिर उसे मंगाने का इन्तिज़ाम करो। अल्लाह को मरीज़ के पास पाने का मतलब है कि अल्लाह तुमसे ख़ुश होता, उसका सानिध्य (क़ुर्ब) तुम्हें हासिल होता।

मरीज़, भूखे और क़ैदी के साथ अच्छा सुलूक

(138) अबू मूसा अशअरी (रज़ि०) से रिवायत है कि अल्लाह के रसूल (सल्ल०) ने फ़रमाया : तुम मरीज़ की देख-भाल करो, भूखे को खाना खिलाओ और (बेक़ुसूर) क़ैदी को (हवालात, जेल से) छुड़ाने का इन्तिज़ाम करो। (हदीस : बुख़ारी)

बीमार ग़ैर-मुस्लिमों का हालचाल पूछने जाना

(139) हज़रत अनस (रज़ि०) कहते हैं कि एक यहूदी लड़का नबी (सल्ल०) की ख़िदमत में था। एक बार वह बीमार पड़ा तो आप (सल्ल०) उसका हाल मालूम करने के लिए गए। उसके सिरहाने बैठे और कहा: इस्लाम क़बूल कर लो। उसने अपने बाप की ओर देखा।

बाप ने कहा : अबुल-क़ासिम (मुहम्मद सल्ल०) की बात मान लो। चुनाँचे उसने इस्लाम क़बूल कर लिया। इसके बाद आप (सल्ल०) वहाँ से यह कहते हुए उठे : शुक्र है ख़ुदा का जिसने इसे जहन्नम की आग से बचा लिया। (हदीस : बुख़ारी)

व्याख्या : नबी (सल्ल०) के पाकीज़ा अख़्लाक़ से दोस्त-दुश्मन सभी वाक़िफ़ थे। सारे यहूदी आप (सल्ल०) के दुश्मन न थे। इस यहूदी को आप (सल्ल०) से ख़ास लगाव था और वह इस्लामी तालीमात से प्रभावित था। इसी लिए उसने अपने लड़के को पैग़म्बर की सेवा के लिए भेजा था।

बीमार की मिज़ाजपुरसी कैसे की जाए?

(140) हज़रत अब्दुल्लाह इब्ने अब्बास (रज़ि०) कहते हैं कि सुन्नत (यानी नबी सल्ल० का तरीक़ा) यह है कि मरीज़ के पास थोड़ी देर ठहरा जाए (माहौल शांत रखा जाए) कोई शोर-हंगामा न हो।

मुसलमान पर मुसलमान का हक़

जान और माल का एहतिमाम

(141) हज़रत अब्दुल्लाह इब्ने उमर (रज़ि०) कहते हैं कि नबी (सल्ल०) ने अपने आख़िरी हज (हज्जतुलविदा) के मौक़े पर फ़रमाया : सुनो, अल्लाह ने तुम्हारी जान, तुम्हारा माल और तुम्हारी इज़्ज़त-आबरू को बिल्कुल ऐसे ही मोहतरम (आदरणीय) ठहराया है, जैसे यह दिन मोहतरम है तुम्हारे इस शहर में और तुम्हारे इस महीने में। बताओ, मैंने अपना पैग़ाम पहुँचा दिया? लोगों ने कहा : हाँ, आपने हम तक पैग़ाम पहुँचा दिया। नबी (सल्ल०) ने यह वाक्य तीन बार दोहराया और लोगों ने भी तीन बार 'हाँ' कहा। उसके बाद आप (सल्ल०) ने आसमान की ओर देखा और कहा : ऐ अल्लाह ! तू गवाह रह कि मैंने अपनी उम्मत को बात पहुँचा दी। इसके बाद आप (सल्ल०) ने फ़रमाया : सुनो, देखो ! मेरे बाद बेदीन न हो जाना कि आपस में एक दूसरे का गला काटने लगो। (हदीस : बुख़ारी)

व्याख्या : 'हज्जतुल-विदा' से मुराद नबी (सल्ल०) का वह आख़िरी हज है जिसके दो-तीन महीने के बाद आप (सल्ल०) का इंतिक़ाल हो गया। इस हज की अहमियत यह है कि उस समय की पूरी इस्लामी दुनिया से एक लाख चौबीस हज़ार मुसलमान हज में शरीक हुए थे। यह बात पूरे इस्लामी इलाक़ों में मशहूर हो गई थी कि अल्लाह के आख़िरी पैग़म्बर (सल्ल०) की इमामत (नेतृत्व) में हज होगा। और इस हज के दौरान आप (सल्ल०) ने मक्का में, अरफ़ात के मैदान में, मुज़दलफ़ा में और मिना में जो ख़ुतबे (भाषण) दिए उनकी हैसियत एक वसीयत की सी थी जो आप (सल्ल०) पूरी मुस्लिम उम्मत को कर रहे थे। उनका ख़िताब उन लोगों से था जो इस हज में ख़ुद शरीक थे; और उन लोगों से भी था जो पीछे रह गए थे तथा उन तमाम लोगों से भी था जो क़ियामत तक आप (सल्ल०) की उम्मत में शामिल होंगे। हज के इस मौक़े पर आपने वाज़ेह तौर से कहा था कि इसके बाद शायद मैं तुम लोगों से मुलाक़ात न कर सकूँगा। इन ख़ुतबों का अंदाज़ भी बताता है कि आप (सल्ल०) संसार से विदा लेनेवाले के रूप में अपनी पूरी उम्मत को कुछ वसीयत फ़रमा रहे हैं। इस वसीयत में दो बातों पर ख़ासतौर से बल दिया गया है : एक यह कि कोई मुसलमान किसी दूसरे मुसलमान का न

ख़ून बहाए, न उसका माल हथियाए, न उसका अपमान करे और न ही समाज की नज़र में उसे गिराने की कोशिश करे। दूसरी बात जिसकी आप (सल्ल०) ने बड़ी ताकीद की, वह यह थी कि मियाँ-बीवी दोनों एक दूसरे का हक़ पहचानें, याद रखें और अदा करें। देखिए, किसी का बेटा चाहे कितना ही गया-गुज़रा हो, मगर अपने बाप की वसीयत को याद रखता और उसे पूरा करता है; मगर यह कैसी अफ़सोसनाक बात है कि सारे बापों से बढ़कर प्रेम और मुहब्बत करनेवाले बाप—नबी (सल्ल०) की आख़िरी वसीयत को ज़्यदातर मुसलमान भुला बैठे हैं। नालायक़ी की भी एक हद होती है।

मोमिन, मोमिन का आईना है

(142) हज़रत अबू हुरैरा (रज़ि०) कहते हैं कि अल्लाह के रसूल (सल्ल०) ने फ़रमाया : मुसलमान, मुसलमान का आईना है और मुसलमान, मुसलमान का भाई है। वह उसको बर्बादी से बचाता है और उसकी हिफ़ाज़त करता है तथा उसका मददगार होता है।

(हदीस : मिशकात)

व्याख्या : "मुसलमान, मुसलमान का आईना है" यानी उसकी तकलीफ़ को अपनी तकलीफ़ समझता है, जिस तरह अपनी तकलीफ़ पर तड़पता है, वैसे ही अपने मुसलमान भाई की तकलीफ़ पर तड़प उठता और उसे दूर करने के लिए बेचैन हो जाता है।

एक अन्य हदीस में यही बात इस तरह बयान हुई है : तुममें से प्रत्येक व्यक्ति अपने भाई का आईना है। तो यदि उसे तकलीफ़ में घिरा हुआ देखे तो उसकी तकलीफ़ दूर कर दे। इसी प्रकार यदि अपने मुसलमान भाई में कोई (अख़्लाक़ी) कमज़ोरी पाए तो उसे अपनी कमज़ोरी समझकर दूर कर दे।

मुहब्बत, रहमत और शफ़क़त

(143) हज़रत नोमान इब्ने बशीर (रज़ि०) कहते हैं कि अल्लाह के रसूल (सल्ल०) ने फ़रमाया : मुसलमानों को आपस में दया करने में, प्रेम करने में, और एक दूसरे के साथ नर्मी करने में तुम जिस्म की तरह पाओगे। जिस्म का यह हाल होता है कि जब उसका एक अंग बीमार हो जाए तो पूरे शरीर में उसकी टीस महसूस करते हैं, आदमी की नींद

उड़ जाती है और सारा जिस्म बुख़ार से तपने लगता है।

(हदीस : बुख़ारी, मुस्लिम)

मज़बूत भाईचारा

(144) हज़रत अबू मूसा अशअरी (रज़ि०) कहते हैं कि नबी (सल्ल०) ने फ़रमाया : मुसलमान, मुसलमान के लिए एक इमारत की तरह है जिसका एक हिस्सा दूसरे हिस्से को ताक़त देता है। इस बात को समझाने के लिए आप (सल्ल०) ने एक हाथ की ऊँगलियाँ दूसरे हाथ की ऊँगलियों में डालीं। (हदीस : बुख़ारी, मुस्लिम)

व्याख्या : इस हदीस में मुस्लिम सोसाइटी की मिसाल मज़बूत इमारत से दी गई है। जिस प्रकार उसकी ईंटें एक दूसरी से जुड़ी होती हैं, उसी प्रकार मुसलमानों को आपस में जुड़ा रहना चाहिए; और जिस तरह इमारत की एक ईंट दूसरी को बल और सहारा देती है, उसी तरह उन्हें भी एक दूसरे को सहारा देना चाहिए तथा उनके सामने यह बात हमेशा रहे कि उनकी ताक़त का राज़ आपस में जुड़े रहने में है। यदि वे बिखरी हुई ईंटों की तरह अलग-थलग रहे तो उन्हें हवा का हर झोंका उड़ा ले जा सकता है और पानी का हर रैला बहा ले जा सकता है।

भाई की मदद करो, वह ज़ालिम हो या मज़लूम

(145) हज़रत अनस (रज़ि०) कहते हैं कि अल्लाह के रसूल (सल्ल०) ने फ़रमाया : तुम अपने भाई की मदद करो चाहे वह ज़ालिम हो या मज़लूम। एक आदमी ने पूछा : ऐ अल्लाह के रसूल, उसके मज़लूम होने की हालत में मदद करने की बात तो समझ में आती है, मगर ज़ालिम (अत्याचारी) की मदद कैसे की जाए? आप (सल्ल०) ने फ़रमाया : उसको ज़ुल्म करने से रोक दो, यही उसकी मदद करना है।

(हदीस : बुख़ारी, मुस्लिम)

अपने भाई के हाथ कोई चीज़ बेचो तो उसका ऐब बताकर बेचो

(146) हज़रत उक़बा इब्ने आमिर (रज़ि०) कहते हैं कि मैंने अल्लाह के रसूल (सल्ल०) को यह कहते सुना है कि मुसलमान, मुसलमान का भाई है। (अतएव) जो मुसलमान किसी मुसलमान के हाथ कोई चीज़

बेचे जबकि उसमें कोई ऐब हो, तो वह साफ़-साफ़ उसको बता दे।

(हदीस : इब्ने-माजा)

व्याख्या : दुकानदार के लिए ख़रीदार के सामने ऐब बता देना लाज़िम है। ख़रीदार चाहे मुसलमान हो या ग़ैर-मुस्लिम, जैसा कि आगे मामलात/कारोबार के उनवान से आनेवाली हदीसों से स्पष्ट है।

कितने दिन ताल्लुक़ तोड़ा जा सकता है?

(147) हज़रत अबू अय्यूब अंसारी (रज़ि०) कहते हैं कि अल्लाह के रसूल (सल्ल०) ने फ़रमाया : किसी मुसलमान के लिए यह जायज़ नहीं कि वह अपने मुसमलान भाई से तीन दिन से ज़्यादा नाता तोड़े रखे। हाल यह हो कि दोनों कहीं मिलें तो यह अपना मुँह उधर फेर ले और वह अपना मुँह इधर! इन दोनों में अच्छा और बेहतर मुसलमान वह है जो सलाम करने में पहल करे और ताल्लुक़ तोड़ लेने की शैतानी पालिसी ख़त्म कर दे। (हदीस : बुख़ारी, मुस्लिम)

नेक लोगों का हक़

(148) हज़रत आइशा (रज़ि०) से रिवायत है कि अल्लाह के रसूल (सल्ल०) ने फ़रमाया : अच्छी आदत और अच्छे किरदार के लोगों से यदि कोई भूल-चूक हो जाए तो उसे माफ़ कर दो; सिवाय हुदूद के।

(हदीस : अबू दाऊद)

व्याख्या : मतलब यह है कि नेक और परहेज़गार आदमी यदि फिसलकर गुनाह कर बैठे तो उसकी पहली चूक पर उसे नज़रों से न गिराओ, न उसकी चर्चा करो, बल्कि उस पर परदा डालो। हाँ, यदि वह ज़िना कर बैठे, या चोरी करे तो सज़ा दी जाएगी। ग़रज़ ऐसे गुनाहों पर सज़ा देना इस्लामी निज़ाम से सम्बन्धित है, वरना तौबा (पश्चाताप) कराना ही काफ़ी होगा।

इज्तिमाई अख़्लाक़

(149) हज़रत अबू हुरैरा (रज़ि०) कहते हैं कि अल्लाह के रसूल (सल्ल०) ने फ़रमाया : अपने को बदगुमानी से बचाओ, इसलिए कि बदगुमानी से जो बात की जाएगी वह सबसे ज़्यादा झूठी बात होगी। और दूसरों के बारे में (बुरी नीयत से) जानकारी इकट्ठी न करते फिरो और न (किसी के ऐब की) टोह में लगो और न दलाली करो (ख़रीदारों

को फंसाने के लिए) न आपस में कीना करो, न एक दूसरे की काट करने में लगो, बल्कि अल्लाह के बंदे बनो और आपस में भाई-भाई बनकर रहो।

छः हक़

(150) हज़रत अबू हुरैरा (रज़ि०) कहते हैं कि अल्लाह के रसूल (सल्ल०) ने फ़रमाया : मुसलमानों के मुसलमानों पर छः हक़ हैं। पूछा गया, वे छः बातें क्या हैं? फ़रमाया : वे छः बातें ये हैं : (1) जब तू किसी मुसलमान से मिले तो उसे सलाम कर (2) यदि वह तुझे दावत दे तो उसका न्योता क़बूल कर (3) यदि वह तुझसे ख़ैरख़ाही चाहे तो उसके साथ ख़ैरख़ाही कर (4) जब उसे छींक आए और 'अल हम्दु-लिल्लाहि' (अल्लाह! तेरा शुक्र है) कहे तो तू ('यर्हम्कल्लाहु' यानी ख़ुदा तुझपर रहम करे, कहकर) उसका जवाब दे (5) जब वह बीमार पड़े तो उसकी मिज़ाजपुर्सी को जा (6) जब वह मर जाए तो क़ब्रिस्तान उसके पीछे-पीछे जा। (हदीस : मुस्लिम)

व्याख्या : सलाम करने का मतलब सिर्फ़ 'अस्सलामु अलैकुम' के शब्द कह देना भर नहीं है बल्कि वह एक इक़रार है इस बात का कि मेरी ओर से तेरी जान-माल, इज़्ज़त-आबरू सब महफ़ूज़ हैं, उन्हें मेरी ओर से कोई ख़तरा नहीं; और दुआ है इस बात की कि अल्लाह तेरे दीन व ईमान को हर प्रकार के संकट से बचाए; तुझ पर अपनी रहमत करे। यह रूह है अस्सलामु अलैकुम की। अफ़सोस कि आज यह रूह अपने जिस्म से तो निकल चुकी है; अब तो सिर्फ़ शब्द रह गए। छींकने वाले के हक़ में कोई भली बात कही जाए जैसे—'यर्हमकल्लाहु' कहना यानी अल्लाह तुम पर अपनी रहमत करे, तुमसे कोई ऐसी ग़लती न हो जिस पर तेरा बुरा चाहनेवालों को हँसने का मौक़ा मिले।

ग़ैर-मुस्लिम नागरिकों के हक़ और अधिकार

(151) अल्लाह के रसूल (सल्ल०) ने फ़रमाया : इस्लामी हुकूमत में किसी ऐसे ग़ैर मुस्लिम नागरिक पर जिसकी जान-माल, इज़्ज़त-आबरू की हिफ़ाज़त का मुसलमानों ने समझौता किया है, जो व्यक्ति ज़ुल्म करेगा, या उसका हक़ मारेगा या उस पर उसकी ताक़त से अधिक बोझ डालेगा या ग़ैर-मुस्लिम नागरिक की कोई चीज़ उसकी रज़ामन्दी के बग़ैर ले लेगा तो मैं अल्लाह की अदालत में दायर होनेवाले मुक़द्दमे में उस ग़ैर-मुस्लिम नागरिक की ओर से वकील बनूँगा।

(हदीस : अबू दाऊद)

व्याख्या : इससे पहले माँ-बाप, पड़ोसी, मेहमान, बीमार और सफ़र के साथियों तथा ग़रीब, मोहताज और मिस्कीन आदि के शीर्षक के तहत जो हदीसें आई हैं उनमें मुस्लिम और ग़ैर-मुस्लिम दोनों शामिल हैं, चाहे इस्लामी हुकूमत हो या ग़ैर-इस्लामी। इस हदीस का संबंध उस हालत से है जब किसी देश में इस्लामी हुकूमत क़ायम हो। हदीस का आख़िरी हिस्सा ख़ास तौर से अपनी अहमियत रखता है। यदि नबी (सल्ल०) क़ियामत के दिन किसी ग़ैर-मुस्लिम के मुक़द्दमे में उसके वकील बनकर अदालत में आएँ तो उस मुसलमान की शर्मनाक हार होने से कौन रोक सकता है जिसके ख़िलाफ़ मुक़द्दमा क़ायम किया गया है?

पशुओं और जानवरों के हक़

(152) हज़रत सुहैल (रज़ि०) कहते हैं कि नबी (सल्ल०) एक ऊँट के पास से गुज़रे जिसकी पीठ उसके पेट से लग गई थी। आप (सल्ल०) ने फ़रमाया : इन मूक जानवरों के बारे में अल्लाह के गुस्से से बचने की फ़िक्र करो। इन पर सवारी उसी वक़्त करो जब ये अच्छी हालत में हों और जब सफ़र ख़त्म हो जाए तो उन्हें अच्छी हालत में छोड़ो।

(हदीस : अबू दाऊद)

व्याख्या : मतलब यह है कि पशुओं और जानवरों को भूखा रखना ख़ुदा के ग़ुस्से को भड़काना है। उन्हें ख़ूब पेट भर खिलाइए-पिलाइए और काम लीजिए मगर इतना काम न लीजिए कि उसे अधमुआ कर छोड़िए। आगे जो हदीस आ रही है, उससे इसका भाव और स्पष्ट हो जाएगा।

(153) हज़रत अब्दुल्लाह इब्ने-जाफ़र (रज़ि०) से रिवायत है कि नबी (सल्ल०) (किसी ज़रूरत से) एक अंसारी के बाग़ में गए, जिसमें एक ऊँट वहाँ पहले से बैठा हुआ था। जब ऊँट की नज़र आप (सल्ल०) पर पड़ी तो उसने दर्दनाक आवाज़ निकाली और उसकी दोनों आंखों से आँसू बहने लगे। आप (सल्ल०) उसके क़रीब गए और कोहान तथा कनपटियों पर हाथ फेरा तो उसे थोड़ा सुकून मिला। आप (सल्ल०) ने पूछा : इस ऊँट का मालिक कौन है? यह किसका ऊँट है? इतने में एक अंसारी नौजवान सामने आया और कहा : ऐ अल्लाह के रसूल! यह ऊँट मेरा है। आप (सल्ल०) ने उससे कहा : क्या तू अल्लाह से डरता नहीं? यह बेचारा जानवर जिसे अल्लाह ने तेरे क़ब्ज़े में दिया है, (तुझे ख़्याल नहीं आता कि इसके बारे में तुझे कितनी सख़्त जवाबदेही करनी पड़ेगी?) यह ऊँट मुझसे शिकायत कर रहा है कि तू इसे भूखा रखता है और लगातार इससे काम लिए चला जाता है। (हदीस : रियाज़ुस्सालिहीन)

(154) हज़रत अबू हुरैरा (रज़ि०) कहते हैं कि अल्लाह के रसूल (सल्ल०) ने फ़रमाया : जब तुम हरियाली के दिनों में सफ़र करो तो ऊँटों को धरती से उनका हक़ दो (यानी घास चरने दो) और जब तुम सूखा-काल में सफ़र करो तो उनको तेज़ हाँको (ताकि जल्द मंज़िल पर

पहुँच जाएँ) और भूख-प्यास की मुसीबत से बच जाएँ।

ज़बह करने का तरीक़ा

(155) हज़रत शद्दाद इब्ने-औस (रज़ि०) कहते हैं कि अल्लाह के रसूल (सल्ल०) ने फ़रमाया : अल्लाह तआला ने हर काम बेहतर ढंग से करना ज़रूरी ठहराया है तो जब किसी को (क़ानूनी बुनियाद पर) क़त्ल करो तो भले तरीक़े से क़त्ल करो (यानी नाक, कान, आँख आदि को छत-विछत न करो।) और जब तुम जानवर ज़बह करो तो उसे भी भले तरीक़े से ज़बह करो। तुम में से हर एक को चाहिए कि अपनी छुरी तेज़ कर ले (और ज़बह कर चुकने के बाद) जानवर को देर तक तड़पने के लिए न छोड़े। इस तरह ज़बह करे कि जल्दी से उसकी जान निकल जाए। (इसका मतलब यह भी है कि ज़बह करने के बाद जब जानवर का तड़पना बंद हो जाए, तब उसकी खाल उतारे और बोटियाँ करे।) (हदीस : मुस्लिम)

जानवरों के चेहरे पर न मारो

(156) हज़रत जाबिर इब्ने-अब्दुल्लाह (रज़ि०) कहते हैं कि नबी (सल्ल०) के पास से एक गधा गुज़रा, जिसका चेहरा दाग़ दिया गया था और दोनों नथुनों से ख़ून का फ़व्वारा छूट रहा था। आप (सल्ल०) ने यह मंज़र देखा तो बोल पड़े : ख़ुदा की फिटकार उस व्यक्ति पर जिसने यह हरकत की है। फिर आप (सल्ल०) ने जानवरों के चेहरे को दाग़ने और चेहरे पर मारने से मना कर दिया।

(हदीस : मुस्लिम, इब्ने-हिब्बान तिरमिज़ी)

व्याख्या : नबी (सल्ल०) की यह हिदायत उस्ताद और सरपरस्तों को ख़ास तौर पर याद रखनी चाहिए कि बच्चों के चेहरे पर कभी न मारें। जब जानवरों के चेहरे पर मारना सही नहीं है तो बच्चों के चेहरे पर मारना कैसे सही हो सकता है।

जानवरों को आपस में लड़ाने की मनाही

(157) हज़रत इब्ने-अब्बास (रज़ि०) कहते हैं कि अल्लाह के रसूल (सल्ल०) ने जानवरों को आपस में लड़ाने से रोका है।

(हदीस : तिरमिज़ी)

व्याख्या : मुर्ग़े लड़ाना, बटेरें, दुंबे और भेड़ आदि लड़ाना सब नाजायज़ हैं।

जानवरों का दुख समझना

(158) अब्दुर्रहमान अपने वालिद (बाप) अब्दुल्लाह से रिवायत करते हैं कि मेरे वालिद अब्दुल्लाह ने कहा कि हम एक सफ़र में नबी (सल्ल०) के साथ थे। आप (सल्ल०) ज़रूरत के लिए चले गए। इसी बीच हमने एक लाल चिड़िया देखी जिसके साथ दो बच्चे थे। हमने दोनों बच्चों को पकड़ लिया। इतने में चिड़िया आई और पर खोलकर बच्चों पर मंडराने लगी। तब तक नबी (सल्ल०) आ गए और चिड़िया की बेचैनी देखी। आप (सल्ल०) ने पूछा : किसने इसके बच्चे छीन कर इसे दुख पहुँचाया है? इसके बच्चे वापस करो। आप (सल्ल०) ने चींटियों के वे बिल भी देखे जिन्हें हमने जला दिया था। आप (सल्ल०) के पूछने पर हमने बताया कि हम लोगों ने जलाया है। आप (सल्ल०) ने फ़रमाया : आग की सज़ा देना आग के मालिक (अल्लाह) ही के लिए मुनासिब है। (हदीस : अबू दाऊद)

व्याख्या : खटमलों पर गर्म पानी डालने का फ़तवा इमाम अहमद बिन हंबल ने दिया है। मगर हमारी समझ में यह आता है कि जब खटमल आदि मारने के लिए अन्य दवाइयाँ मौजूद न हों या वे बेअसर हो जाएँ तब गर्म पानी डालना चाहिए।

ज़बह करने से पहले छुरी तेज़ कर लो

(159) हज़रत इब्ने अब्बास (रज़ि०) ने बयान किया कि नबी (सल्ल०) एक ऐसे व्यक्ति के पास से गुजरे जो बकरी को गिराकर उसके चेहरे को अपने पैर से दबाए छुरी तेज़ कर रहा था और बकरी यह मंज़र देख रही थी। नबी (सल्ल०) ने फ़रमाया : क्या यह बकरी ज़बह होने से पहले ही मर न जाएगी? क्या तुम इसे दोहरी मौत देना चाहते हो? एक दूसरी रिवायत में है :

क्या तुम उसे कई बार मारना चाहते हो? उसको लिटाने से पहले ही छुरी क्यों न तेज़ कर ली? (हदीस : तरग़ीब)

जानवर दूसरे जानवर के सामने ज़बह न करो

(160) हज़रत इब्ने उमर (रज़ि०) कहते हैं कि नबी (सल्ल०) ने जानवर को तेज़ छुरी से ज़बह करने का हुक्म दिया और यह भी हुक्म दिया कि जानवर को दूसरे जानवरों के सामने ज़बह न किया जाए। साथ ही

यह भी कहा कि जब तुम कोई जानवर ज़बह करो तो जल्दी से उसका काम तमाम कर दो (और उसे देर तक तड़पने के लिए न छोड़ दो)।

(हदीस : अल-मुंज़िरी)

जानवरों पर निशानेबाज़ी की मनाही

(161) हज़रत अब्दुल्लाह इब्ने उमर (रज़ि०) क़बीला क़ुरैश के कुछ जवानों के पास से गुज़रे जो एक चिड़िया या मुर्ग़ी को बाँधकर उसपर तीरों की बारिश कर रहे थे (निशानेबाज़ी का अभ्यास कर रहे थे) और चिड़िया के मालिक से तय कर लिया था कि जो तीर (निशाना) चूक जाएगा वह उसका होगा। जब इन लोगों ने इब्ने-उमर (रज़ि०) को आते देखा तो इधर-उधर दुबक गए। इब्ने-उमर (रज़ि०) ने पूछा : यह हरकत किसने की ? उसपर अल्लाह की फिटकार जिसने यह हरकत की। अल्लाह के रसूल (सल्ल०) ने ऐसे लोगों पर लानत भेजी है जो किसी जानदार को निशाना बनाएँ (उसपर निशानेबाज़ी का अभ्यास करें)।

जानवरों के बारे में अहम बात

(162) हज़रत अबू हुरैरा (रज़ि०) कहते हैं कि नबी (सल्ल०) ने फ़रमाया : एक व्यक्ति पैदल जा रहा था कि उसे बड़े ज़ोर की प्यास लगी। रास्ते में उसे एक उथला कुँआ मिला। वह उसमें उतर गया और अपनी प्यास बुझाई। बाहर निकला तो क्या देखता है कि एक कुत्ता जीभ निकाले हाँफ रहा है और प्यास के मारे गीली मिट्टी खा रहा है। उसने सोचा कि इस कुत्ते को भी बहुत प्यास लगी है जैसी मुझे लगी थी। अतएव वह तुरंत कुएँ में उतरा, अपनी चमड़े की जुराब में पानी भर कर उसे मुँह से थामे बाहर आया और कुत्ते को पानी पिलाया। अल्लाह उसके इस अमल से ख़ुश हुआ और उसकी बख़्शिश कर दी (उसकी मुक्ति हो गई)। लोगों ने पूछा : क्या जानवरों पर रहम करने से अच्छा फल मिलता है ? आप (सल्ल०) ने कहा : हाँ, हर जानदार के साथ रहम का सुलूक करने पर अच्छा बदला मिलता है। (हदीस : बुख़ारी, मुस्लिम)

मामलात/कारोबार

हाथ की कमाई की अहमियत

(163) हज़रत मिक़्दाम इब्ने मादीकरिब (रज़ि०) कहते हैं कि अल्लाह के रसूल (सल्ल०) ने फ़रमाया : अपने हाथ की कमाई से ज़्यादा बेहतर खाना कभी किसी ने नहीं खाया। और अल्लाह के नबी दाऊद (अलैहिस्सलाम) अपने हाथ की कमाई खाते थे। (हदीस : बुख़ारी)

मज़दूर की कमाई

(164) हज़रत अबू हुरैरा (रज़ि०) से रिवायत है कि नबी (सल्ल०) ने फ़रमाया : बेहतरीन कमाई मज़दूर की कमाई है; शर्त यह है कि वह अपने मालिक का काम पूरी लगन और ईमानदारी से करे।

(हदीस : मुस्नद अहमद)

मेहनत की कमाई

(165) इब्ने उमर (रज़ि०) नबी (सल्ल०) से रिवायत करते हैं कि आप (सल्ल०) ने फ़रमाया : अल्लाह उस मुसलमान से प्रेम करता है जो मेहनत करके अपनी रोज़ी कमाता है। (हदीस : अल-मुंज़िरी)

कारोबार में ईमानदारी

(166) हज़रत राफ़ेअ इब्ने ख़दीज (रज़ि०) कहते हैं कि किसी ने पूछा : ऐ अल्लाह के रसूल ! कमाई का कौन सा ज़रिया सबसे पाक और बढ़िया है? आप (सल्ल०) ने फ़रमाया : अपने हाथ से काम करना और ईमानदारी से कारोबार करना। (हदीस : मिशकात)

अमानतदार और सच्चे व्यापारी का दर्जा

(167) हज़रत अबू सईद ख़ुदरी (रज़ि०) ने कहा कि अल्लाह के रसूल (सल्ल०) ने फ़रमाया : सच्चे और अमानतदार व्यापारी (आख़िरत में) नबियों, सिद्दीक़ों (सत्यनिष्ठों) और शहीदों के साथ रहेंगे।

(हदीस : तिरमिज़ी)

हेराफेरी करनेवाले व्यापारियों का अंजाम

(168) अल्लाह के रसूल (सल्ल०) ने फ़रमाया : मैदाने-हश्र में व्यापारी

लोग खुले बदकार के रूप में हाज़िर किए जाएँगे। हाँ, वे व्यापारी बदकार और गुनाहगार के रूप में नहीं लाए जाएँगे, जिन्होंने अपने कारोबार में परहेज़गारी इख़्तियार की (यानी ख़ुदा की हिदायतों का पालन किया) पूरा-पूरा हक़ दिया और सच बोला होगा।

(हदीस : तिरमिज़ी)

नाजायज़ हथकंडों से बरकत ख़त्म हो जाती है

(169) अल्लाह के रसूल (सल्ल०) ने व्यापारियों को ख़िताब करते हुए फ़रमाया : व्यापार में ज़्यादा क़समें खाने से बचो क्योंकि यह चीज़ थोड़े-से समय के लिए कारोबार में कुछ तेज़ी ला देती है मगर आख़िरकार बरकत ख़त्म कर देती है। (हदीस : मुस्लिम)

व्याख्या : झूठी क़समें खाकर थोड़े समय के लिए व्यापार और कारोबार को ख़ूब चमकाया जा सकता है : लेकिन यही चीज़ आगे चलकर कारोबार को ले डूबती है; दुनिया को हमेशा धोखे में नहीं रखा जा सकता।

(170) अल्लाह के रसूल (सल्ल०) ने फ़रमाया : तीन तरह के लोगों से क़ियामत के दिन अल्लाह न तो बात करेगा, न उनकी ओर देखेगा और न उन्हें पाक-साफ़ करके जन्नत में दाखिल करेगा, बल्कि उन्हें दर्दनाक सज़ा देगा। अबू ज़र ग़िफ़ारी (रज़ि०) ने पूछा : ये नाकाम और बदक़िस्मत कौन लोग हैं? ऐ अल्लाह के रसूल! आप (सल्ल०) ने फ़रमाया : (घमंड के मारे) टख़ने से नीचे तहमद रखनेवाला, एहसान करके एहसान जतानेवाला और तीसरा वह व्यापारी जो झूठी क़समें खाकर अपना कारोबार चमकाता हो। (हदीस : तिरमिज़ी)

कारोबारी भूल-चूक का कफ़्फ़ारा (प्रायश्चित) सदक़ा

(171) हज़रत क़ैस अबू ग़रज़ा (रज़ि०) कहते हैं कि नबी (सल्ल०) के समय में हम व्यापारी लोगों को 'समासिरा' कहा जाता था। एक दिन नबी (सल्ल०) हमारे पास से गुज़रे तो आप (सल्ल०) ने हमें इससे बेहतर नाम दिया और कहा : ऐ व्यापारियो! माल बेचने में बहुत-सी फ़ुज़ूल बातें कहने और झूठी क़सम खाने की संभवाना रहती है। लिहाज़ा तुम लोग सदक़ा करो (दान दो) ताकि इस भूल-चूक का कफ़्फ़ारा (प्रायश्चित) बन सके। (हदीस : अबू दाऊद)

जमाख़ोरी हराम है

(172) अल्लाह के रसूल (सल्ल०) ने फ़रमाया : जिस व्यापारी ने जमाख़ोरी की वह गुनहगार है। (हदीस : अल-मुंतक़ा)

व्याख्या : यहाँ हदीस में मूल अरबी शब्द 'इहतिकार' आया है जिसके मायने हैं आम ज़रूरत की चीज़ों को रोक लेना, बाज़ार में उन्हें न लाना, क़ीमतों के ख़ूब चढ़ने का इंतिज़ार करना और जब क़ीमतें ख़ूब चढ़ जाएँ तब माल को बाहर निकालना और ख़ूब नफ़ा कमाना। यह मानसिकता व्यापारियों में होती है, इसलिए नबी (सल्ल०) ने इस मानसिकता पर चोट की, क्योंकि यह मानसिकता इंसान को संगदिल और बेरहम बना देती है, जबकि इस्लाम इंसानों के साथ दया और रहम की तालीम देता है।

जमाख़ोरी केवल अनाज के लिए ही ख़ास नहीं है, जैसा कि कुछ लोग कहते हैं बल्कि आम ज़रूरत की सारी चीज़ें जैसे तेल, देसी घी, वनस्पति घी, चीनी आदि में से किसी के साथ कोई आदमी यह अमल करेगा तो गुनहगार होगा और यह लानत वाला अमल होगा जैसा कि अगली हदीस में आया है।

(173) अल्लाह के रसूल (सल्ल०) ने फ़रमाया : जो व्यापारी ज़रूरत की चीज़ों को नहीं रोकता, बल्कि समय रहते बाज़ार में लाता है, वह अल्लाह की रहमत का हक़दार है, अल्लाह उसे रोज़ी देगा। हाँ, आम ज़रूरत की चीज़ों को रोकनेवाले पर ख़ुदा की फिटकार है। (वह अल्लाह की मेहरबानी से महरूम है, क्योंकि उसने बहुत ग़लत काम किया है) (हदीस : इब्ने-माजा)

जमाख़ोरी करनेवाले की नीची सोच

(174) हज़रत मुआज़ (रज़ि०) कहते हैं कि मैंने अल्लाह के रसूल (सल्ल०) को यह कहते सुना : कितना बुरा है ज़रूरत की चीज़ों को रोके रखनेवाला आदमी! यदि चीज़ों का भाव गिरता है तो उसे ग़म होता है और अगर महंगाई होती है तो ख़ुश होता है।

(हदीस : मिशकात)

माल का नुक़्स न छिपाओ

(175) अल्लाह के रसूल (सल्ल०) ने फ़रमाया : किसी व्यापारी के लिए जायज़ नहीं कि वह कोई माल बेचे और उसका नुक़्स ख़रीदार

को न बताए। इसी तरह किसी के लिए यह भी जायज़ नहीं कि (उस बेचे जानेवाले माल के) ऐब को जानता हो फिर भी ख़रीदार को न बताए। (हदीस : अल-मुंतक़ा)

व्याख्या : व्यापारी के लिए जायज़ नहीं है कि वह ख़रीदार से अपने माल का ऐब छिपाए। इसी प्रकार माल खरीदते समय कोई ऐसा व्यक्ति सामने है जो माल के नुक़्स को जानता है तो उसके लिए ज़रूरी है कि ख़रीदार के सामने ऐब बयान कर दे। मतलब यह है कि मुसलमान व्यापारी के लिए ख़रीदार को धोखा देना हराम है :

नबी (सल्ल०) अनाज के एक व्यापारी के पास पहुँचे और ढेर में अपना हाथ डाला तो पता चला कि भीतर का हिस्सा पानी से तर था। आप (सल्ल०) ने पूछा : यह क्या? उसने जवाब दिया : हुज़ूर! बारिश से यह भीग गया है। आप (सल्ल०) ने कहा : फिर इसे ऊपर क्यों न रखा? उसके बाद आप (सल्ल०) ने फ़रमाया : जो लोग हम को धोखा दें, वे हम में से नहीं। (हदीस : मिशकात)

ख़रीद-फ़रोख़्त में नरमी

(176) अल्लाह के रसूल (सल्ल०) ने फ़रमाया : अल्लाह उस व्यक्ति के साथ रहमत का मामला करेगा जो ख़रीद-फ़रोख़्त में और कर्ज़ का तक़ाज़ा करने में नरमी और अख़्लाक़ का बर्ताव करे।

(हदीस : बुख़ारी)

किसी का माल हड़पना

(177) अल्लाह के रसूल (सल्ल०) ने फ़रमाया : जो व्यक्ति किसी की बित्ता भर ज़मीन भी ज़ुल्म करके ले लेगा तो क़ियामत के दिन सात ज़मीनों का तौक़ उसकी गर्दन में डाला जाएगा। (हदीस : बुख़ारी)

एक अन्य हदीस का भाव यह है कि :

खबरदार! किसी के साथ अन्याय न करना; किसी व्यक्ति का माल लेना जायज़ नहीं। यह और बात है कि जिसका माल हो, वह खुद अपनी ख़ुशी से दे दे। (हदीस : बुख़ारी, मुस्लिम)

(178) हज़रत अबू हुरैरा (रज़ि०) ने कहा : अल्लाह के रसूल (सल्ल०) ने फ़रमाया : एक समय ऐसा आनेवाला है जब इंसान इस बात की

परवाह न करेगा कि उसने जो माल कमाया है वह हलाल (वैध) है या हराम (अवैध)। (हदीस : बुख़ारी)

वे लोग जिन्हें अल्लाह नज़रअन्दाज़ करेगा

(179) अल्लाह के रसूल (सल्ल०) ने फ़रमाया : क़ियामत के दिन तीन प्रकार के लोग होंगे जिनसे न तो अल्लाह बात करेगा और न उनकी ओर (नज़र उठाकर) देखेगा। उनमें एक तो वे लोग होंगे जिन्होंने अपना माल बेचते समय झूठी क़सम खाई थी और उसके कारण अधिक दाम वसूल किए। दूसरे वे लोग होंगे जिन्होंने अस्र की नमाज़ के बाद (मस्जिद में) झूठी क़सम खाई और उसके नतीजे में किसी ईमानवाले का माल हड़प लिया। तीसरे वे लोग होंगे जो अपनी ज़रूरत से अधिक पानी को रोकें और ख़ुदा के दूसरे बन्दों को उससे फ़ायदा न उठाने दें (क़ियामत के दिन अल्लाह उन लोगों से कहेगा :) "आज मैं अपनी मेहरबानी से तुम्हें महरूम (वंचित) करूँगा क्योंकि तुमने फ़ालतू पानी से मेरे बन्दों को महरूम किया था जबकि वह तुम्हारा अपना पैदा किया हुआ न था।" (हदीस : बुख़ारी, मुस्लिम)

व्याख्या : झूठी क़सम खाना हर जगह और हर समय बुरा है मगर मस्जिद में और भी बुरा है। ख़ास तौर से अस्र की नमाज़ के बाद मस्जिद में झूठ बोलना तो और भी बुरा है क्योंकि अस्र की नमाज़ की जमाअत में फ़रिश्ते काफ़ी तादाद में शामिल होते हैं, वे भी जो दिन भर अपनी ड्यूटी पर तैनात रहते हैं और वे भी जिन्हें रात को अपनी ड्यूटी देनी होती है—दोनों ही क़िस्म के फ़रिश्ते अस्र की जमाअत में शरीक होते हैं। इसका मतलब यह हुआ कि इन सारे फ़रिश्तों के सामने झूठी क़सम खाई गई। ये सब फ़रिश्ते गवाही देंगे कि फ़लाँ व्यक्ति ने एक व्यक्ति का माल हड़पने के लिए हमारे सामने झूठी क़सम खाई।

पसीना सूखने से पहले मज़दूरी दो

(180) अल्लाह के रसूल (सल्ल०) ने फ़रमाया : मज़दूर का पसीना सूखने से पहले उसकी मज़दूरी दे दो। (हदीस : इब्ने- माजा)

व्याख्या : मज़दूर कहते ही हैं उस व्यक्ति को जिसको अपना व अपने बच्चों का पेट भरने के लिए रोज़ मेहनत करनी पड़ती है। अब यदि उसकी मज़दूरी

किसी और दिन पर टाल दी जाए तो वह और उसके बीवी-बच्चे शाम को क्या खाएँगे !

मज़दूर की वकालत अल्लाह करेगा

(181) अल्लाह के रसूल (सल्ल०) ने फ़रमाया : अल्लाह कहता है कि तीन क़िस्म के लोग हैं जिनके ख़िलाफ़ क़ियामत के दिन मेरी ओर से मुक़दमा दायर होगा। एक वे लोग जिन्होंने मेरे नाम पर कोई समझौता किया फिर बिना किसी मुनासिब वजह के उसे तोड़ डाला। दूसरे वे जो किसी शरीफ़ और आज़ाद आदमी का अपहरण करें फिर उसे ग़ुलाम बनाकर बेचें। तीसरे वे लोग जो मज़दूर को काम पर लगाएँ, उससे पूरी मेहनत लें और मज़दूरी न दें। (हदीस : बुख़ारी)

वसीयत और विरासत

नाजायज़ वसीयत की सज़ा

(182) अल्लाह के रसूल (सल्ल०) ने फ़रमाया : कोई व्यक्ति (मर्द या औरत) अल्लाह की फ़रमाँबरदारी में साठ साल बसर कर डालता है मगर जब मरने का समय आता है तो वसीयत करके वारिसों को उनके जायज़ हक़ से महरूम (वंचित) कर देता है, और इस प्रकार उसके लिए जहन्नम ज़रूरी हो जाती है। अबू हुरैरा (रज़ि०) जो इस हदीस के बयान करनेवाले हैं, ने (क़ुरआन की) सूरा निसा की विरासत वाली आयत का आख़िरी अंश पढ़ा जो हदीस के आशय की ताईद करता है। (आयत का अंश यह है : "मिम्बअदे वसीयतिन् यूसा बिहा अव दैन... से ज़ालिकल फ़ौज़ुल अज़ीम" तक। (हदीस : मुस्नद अहमद)

व्याख्या : नेक आदमी भी अपने सगे-संबंधियों से ग़ुस्सा होकर ऐसी वसीयत कर जाता है जिसकी वजह से वारिस अपना उचित अधिकार पाने से महरूम (वंचित) रह जाते हैं जबकि अल्लाह की किताब और नबी की हिदायतों की रू से उन्हें हिस्सा मिलना चाहिए। ऐसे मर्दों और औरतों के बारे में नबी (सल्ल०) ने कहा कि साठ साल तक इबादत और शरीअत की पाबंदी करने के बावजूद भी अंततः ये लोग नाजायज़ वसीयत करके ख़ुद को जहन्नम का हक़दार बना लेते हैं। उपरोक्त हदीस में हज़रत अबू हुरैरा (रज़ि०) ने क़ुरआन की सूरा-4 अन-निसा का जो टुकड़ा पढ़ा उसका मतलब यह है कि ख़बरदार ! वारिसों को नुक़सान पहुँचाने वाली कार्यवाही न करना। अल्लाह ने विरासत के बंटवारे का जो नियम और क़ानून बनाया है वह इल्म और हिकमत पर आधारित है, उसमें न तो किसी प्रकार की नाइंसाफ़ी है और न ही किसी तरह की जज़्बाती बात। उसके बाद फ़रमाया : जो लोग अल्लाह और रसूल की नाफ़रमानी करेंगे और अल्लाह का क़ानून तोड़ेंगे, अल्लाह उन्हें जहन्नम में डालेगा जहाँ वे रुसवा कर देनेवाला अज़ाब भुगतेंगे।

विरासत से महरूम करने का अंजाम

(183) अल्लाह के रसूल (सल्ल०) ने फ़रमाया : जो अपने वारिस को मीरास से महरूम करेगा क़ियामत के दिन अल्लाह उसे जन्नत की मीरास से महरूम कर देगा। (हदीस : इब्ने-माजा)

(184) हज़रत सालिम अपने बाप हज़रत अब्दुल्लाह बिन उमर (रज़ि०) से रिवायत करते हैं कि क़बीला 'सक़ीफ़' के एक व्यक्ति ग़ैलान बिन सलमा ने जब इस्लाम क़बूल किया, उस समय उनके पास दस बीवियाँ थीं। नबी (सल्ल०) ने उनको हुक्म दिया कि इनमें से चार को चुन लो और बाक़ी को छोड़ दो–(इसके बाद हुआ यह कि) ग़ैलान ने हज़रत उमर (रज़ि०) के दौर में अपनी चारों बीवियों को तलाक़ दे दी और अपना पूरा माल भाइयों में बाँट दिया। जब इसका पता हज़रत उमर (रज़ि०) को चला तो उन्होंने ग़ैलान को बुलाया और कहा: मेरा ख़याल है कि शैतान ने ऊपर जाकर तुम्हारी मौत की ख़बर सुन ली है और आकर तुम्हें बता दिया है कि अब तुम बस कुछ दिन के मेहमान हो (इसलिए तुमने उन्हें विरासत से महरूम करने के लिए अपनी बीवियों को तलाक़ देकर सारी जायदाद भाइयों में बाँट दी।) मैं अल्लाह की क़सम खाकर कहता हूँ कि तुम्हें अपनी बीवियों से तलाक़ वापस लेनी होगी और बाँटी हुई जायदाद भी वापस लेनी होगी वरना (मैं इस्लामी राज्य के मुखिया की हैसियत से) तुम्हारी बीवियों को तुम्हारा वारिस (उत्तराधिकारी) बनाऊँगा और लोगों को हुक्म दूँगा कि वे तुम्हारी क़ब्र पर पत्थर मारें जैसे अबू-रिग़ाल की क़ब्र पर मारते हैं।

(हदीस : मुस्नद अहमद)

व्याख्या : पत्थर मारना जघन्य अपराधों के लिए मुक़र्रर एक सज़ा है जिसके भोगी केवल ज़ालिम और अत्यंत पापी लोग ही होते हैं। 'अबू रिग़ाल' अज्ञानकाल का वह अरब बाशिंदा है जिसने अबरहा के साथ मिलकर साज़िश रची थी और पाक काबा को ढहाने के इरादे से आनेवाली सेना को रास्ता बताया था। इसलिए उस लानती व्यक्ति की क़ब्र पर लोग पत्थर मारते थे।

वारिस के हक़ में वसीयत करना जायज़ नहीं

(185) अल्लाह के रसूल (सल्ल०) ने फ़रमाया : किसी वारिस (उत्तराधिकारी) के हक़ में मरनेवाले की वसीयत लागू न होगी (यानी उसपर अमल न होगा)। हाँ, दूसरे वारिसों की इजाज़त से ऐसा किया जा सकता है। (हदीस : मिशकात)

वसीयत की आख़िरी हद

(186) हज़रत साद इब्ने वक़्क़ास (रज़ि०) कहते हैं कि मैं बीमार था तो अल्लाह के रसूल (सल्ल०) मेरा हाल-चाल पूछने आए। आप (सल्ल०) ने पूछा : क्या तुमने वसीयत कर दी ? मैंने कहा : हाँ। आप (सल्ल०) ने पूछा : कितने की वसीयत की ? मैंने कहा : पूरे माल दौलत की वसीयत कर दी है, उसे अल्लाह की राह में दे दिया है। आप (सल्ल०) ने पूछा : अपनी औलाद के लिए क्या छोड़ा ? मैंने कहा : वे मालदार हैं; अच्छी हालत में हैं। आप (सल्ल०) ने कहा : अच्छा, दसवाँ भाग अल्लाह की राह में दे दो। साद कहते हैं : मैं बराबर अर्ज़ करता रहा कि हुज़ूर ! यह तो बहुत कम है कुछ और बढ़ाइए। तब आप (सल्ल०) ने कहा : अच्छा, एक तिहाई अल्लाह की राह में दो, यह एक तिहाई भी बहुत है। (हदीस : तिरमिज़ी)

व्याख्या : इस हदीस से पता चला कि मरनेवाला अपने पूरे माल का एक तिहाई हिस्सा ही वक़्फ़ कर सकता है और किसी ज़रूरतमंद, मदरसे या मस्जिद या मोहताज को भी दे सकता हैं। लेकिन ज़्यादा अच्छा यह है कि पहले अपने रिश्तेदारों पर नज़र डाले और यह देखे कि उनमें कौन लोग ऐसे हैं जिन्हें क़ानूनी तौर पर हिस्सा नहीं मिलनेवाला है तथा किसकी माली हालत कैसी है ! ऐसे रिश्तेदारों को देने से ज़्यादा सवाब मिलेगा।

सूदी कारोबार

सूदी लेन-देन और उसकी गवाही

(187) अल्लाह के रसूल (सल्ल०) ने फ़रमाया : धिक्कार है सूद खानेवाले पर, सूद खिलानेवाले पर, सूदी लेन-देन के गवाहों पर तथा सूदी लेन-देन की दस्तावेज़ लिखनेवाले पर।

(हदीस : बुख़ारी, मुस्लिम)

व्याख्या : इस सिलसिले में इमाम नसाई ने इसी रिवायत को इस तरह बयान फ़रमाया :

"जानते-बूझते सूद खाने, खिलाने, गवाही देने और सूदी दस्तावेज़ लिखनेवालों पर क़ियामत के दिन अल्लाह के रसूल लानत करेंगे।"

इसका मतलब यह हुआ कि नबी (सल्ल०) की सिफ़ारिश से ऐसे लोग न सिर्फ़ यह कि महरूम रहेंगे बल्कि आप (सल्ल०) की धिक्कार, लानत और फिटकार उनके हिस्से में आएगी। अल्लाह इससे बचाए, आमीन।

सूदख़ोर का बुरा अंजाम

(188) हज़रत समुरा इब्ने जुंदुब (रज़ि०) कहते हैं कि अल्लाह के नबी (सल्ल०) ने फ़रमाया : आज रात मैंने देखा कि दो आदमी मेरे पास आए। वे मुझे एक मुक़द्दस (पवित्र) सरज़मीन की ओर ले गए। वहाँ से हम तीनों आगे चले यहाँ तक कि ख़ून की एक नदी के पास पहुंचे जिसमें एक व्यक्ति खड़ा हुआ था। नदी के किनारे एक और व्यक्ति था और उसके सामने बहुत से पत्थर पड़े थे। वह व्यक्ति जो नदी में खड़ा था, निकलने के लिए आगे बढ़ता है तो किनारे पर खड़ा आदमी उसके मुँह पर पत्थर मारकर उसे वहीं पहुँचा देता है जहाँ से वह चला था। इसी तरह बराबर हो रहा था—वह निकलने की कोशिश करता और यह उसके मुँह पर पत्थर मारकर लौटा देता। नबी (सल्ल०) ने पूछा : यह जो ख़ून की नदी में खड़ा है, कौन है? तो उन दोनों आदमियों में से एक ने कहा : यह वह व्यक्ति है जो दुनिया में ब्याज (सूद) खाता था। (हदीस : बुख़ारी)

व्याख्या : सूदख़ोर के सूद ने ख़ून की नदी की शक्ल इख़्तियार कर ली है जिसमें उसे खड़ा कर दिया गया है। उसे सूद से मुहब्बत थी इसलिए उसे उस चीज़ के पास पहुँचा दिया गया जिससे उसे मुहब्बत थी। नदी के किनारे खड़ा आदमी वह ग़रीब मुहताज व्यक्ति है जिसकी ग़रीबी का फ़ायदा उठाकर उसने अपनी असल रक़म से ज़्यादा रक़म सूद के तौर पर ली थी।

रिश्वत

रिश्वत देने और लेनेवाले पर लानत

(189) अल्लाह के रसूल (सल्ल०) ने फ़रमाया : रिश्वत देने और रिश्वत लेनेवाले पर अल्लाह की फिटकार और लानत है।"

(हदीस : बुख़ारी, मुस्लिम)

व्याख्या : इस हदीस में किसी शर्त और किसी ख़ास हालत का ज़िक्र किए बिना रिश्वत लेने-देने का उल्लेख है और अल-मुंतक़ा (एक हदीस-ग्रंथ) में हज़रत अबू हुरैरा (रज़ि०) की रिवायत की गई एक हदीस है जिसका तर्जुमा यह है :

"अल्लाह की लानत है हाकिम को रिश्वत देनेवाले पर और उस अधिकारी पर भी जो रिश्वत ले।"

रिश्वत किसे कहते हैं? रिश्वत उस माल को कहते हैं जो दूसरों का हक़ हड़पने के लिए सरकारी क्लर्कों और अधिकारियों को दी जाती है। और वह रक़म हरगिज़ रिश्वत नहीं है जो अपने जायज़ हक़ को हासिल करने के लिए बातिल हुकूमत के भ्रष्ट कारिंदों को दिल की पूरी नफ़रत के साथ अपनी जेब से निकालकर देनी पड़ती है, जिसके बिना अपना जायज़ हक़ नहीं मिलता है। यही राय शैख़ुल-इस्लाम हाफ़िज इब्ने-तैमिया (रह०) की है और यही राय हदीस के मशहूर आलिम इमाम ख़त्ताबी (रह०) ने अपनी पुस्तक 'मआलिमु-स्सुनुन' में कही है तथा यही बात क़ुरआन मजीद की सूरा बक़रा आयत 188 से भी मालूम होती है।

शक व शुब्हेवाली चीज़ों से परहेज़

(190) नबी (सल्ल०) ने फ़रमाया : हलाल भी वाज़ेह है और हराम भी; लेकिन इन दोनों के बीच की कुछ ऐसी चीज़ें हैं जिनमें शक व शुब्हा है। तो जो व्यक्ति शक व शुब्हेवाले गुनाहों से बचेगा वह ज़रूर ही खुले गुनाहों से बचेगा। अलबत्ता जो व्यक्ति शक व शुब्हेवाले गुनाह बेहिचक कर डालने का आदी होगा उसके खुले गुनाह में पड़ने का अन्देशा अधिक है। गुनाह, अल्लाह के उस इलाक़े (क्षेत्र) की तरह है जिसके अन्दर क़दम रखना जुर्म है। जो जानवर प्रतिबंधित इलाक़े के सिरे पर चरता है उसके प्रतिबंधित इलाक़े में जा पड़ने की अधिक

संभावना रहती है।   (हदीस : बुख़ारी, मुस्लिम)

व्याख्या : नबी (सल्ल०) के कहने का मतलब यह है कि यदि कुछ ऐसी चीज़ें हों जिनका न हराम होना एकदम वाज़ेह हो, न हलाल होना साफ़ मालूम होता हो, बल्कि उसके कुछ पहलू हलाल मालूम होते हों और कुछ हराम दिखाई पड़ते हों तो ऐसी हालत में मुसलमान की ज़िम्मेदारी यह है कि उन चीज़ों के क़रीब न फटके। ज़ाहिर है, जो व्यक्ति सन्देहवाली चीज़ों से बचता हो, वह खुला हराम काम कैसे कर सकता है? इसके बरख़िलाफ़, जो व्यक्ति सन्देहवाली चीज़ों के नाजायज़ पहलुओं को जानते-बूझते उन्हें अपनाता है तो ऐसा व्यक्ति खुला गुनाह करने में और अधिक साहस दिखाएगा हक़ीक़त में यह दिल की ख़तरनाक हालत है जिससे चौकन्ना रहना बहुत ही ज़रूरी है। मतलब यह है कि ऐसी चीज़ों से बचा जाए जिनमें शक या सन्देह हो।

शकवाली चीज़ से बचना

(191) नबी (सल्ल०) ने फ़रमाया : कोई व्यक्ति मुत्तक़ी और परहेज़गार बन्दों की सूची में जगह नहीं पा सकता जब तक कि गुनाह में पड़ जाने के डर से वह चीज़ न छोड़ दे जिसके करने में कोई गुनाह नहीं।

(हदीस : तिरमिज़ी)

व्याख्या : एक काम जायज़ है, उसके करने में कोई हर्ज नहीं; मगर उसकी सीमा गुनाह से मिली हुई है। आदमी को इसका एहसास हो जाता है कि यदि वह इस जायज़ काम के गिर्द चक्कर काटता रहा तो डर है, कदम फिसल जाए और वह गुनाह में पड़ जाए। इस डर से वह उस जायज़ काम से फ़ायदा उठाना छोड़ देता है। दिल की इसी हालत को शरीअत की ज़बान में 'तक़वा' (परहेज़गारी, ईशपरायणता) कहा जाता है।

लेन-देन और क़र्ज़

क़र्ज़ देना सदक़ा है

(192) नबी (सल्ल०) ने फ़रमाया : हर क़र्ज़ सदक़ा (पुण्य) है।

(हदीस : अल-मुंज़िरी)

व्याख्या : अल्लाह ने जिसे उसकी ज़रूरत से अधिक माल दिया है, उसे ज़रूरतमंदों के काम आना चाहिए। वह उनकी मदद करे जिसकी एक शक्ल यह है कि ऐसे लोगों को क़र्ज़ दे जो ज़रूरतमंद हों। क़र्ज़दार यदि समय पर क़र्ज़ अदा न कर सके तो उसे कुछ और मोहलत दे या फिर क़र्ज़ ही माफ़ कर दे। क़र्ज़ देना सवाब (पुण्य) का काम है, और क़र्ज़ अदायगी के लिए कुछ और समय बढ़ा देना दोहरे सवाब का ज़रिया है, जिसका इब्ने-माजा की उद्धृत एक हदीस में वादा भी किया गया है। फिर यदि क़र्ज़दार की मजबूरी को देखते हुए क़र्ज देनेवाला व्यक्ति क़र्ज़ माफ़ कर दे तो अल्लाह इस बात से बहुत खुश होता है। क़ुरआन की सूरा 2 बक़रा, आयत 280 में कहा गया है :

> "तंगदस्त क़र्ज़दार का क़र्ज़ माफ़ कर दो तो यह बेहतरीन काम है बशर्तेकि तुम जानो कि इसके बदले में कितना बड़ा इनाम मिलनेवाला है।"

तंगहाल क़र्ज़दार को मोहलत देने का फल

(193) नबी (सल्ल०) ने फ़रमाया : (पिछले वक़्तों की बात है) एक व्यक्ति ज़रूरतमंद लोगों को क़र्ज़ दिया करता था और जब क़र्ज़-वुसूली के लिए अपने कारिंदे भेजता तो उनसे कहता : देखो, यदि कोई क़र्ज़दार तंगहाल हो तो माफ़ कर देना (दरगुज़र से काम लेना, वुसूली में कड़ाई से पेश न आना) इससे उम्मीद है कि अल्लाह हमारी ग़लतियों को माफ़ कर देगा।

नबी (सल्ल०) ने फ़रमाया : (मरने के बाद) जब वह अल्लाह से मिला तो अल्लाह ने उसके साथ माफ़ी और दरगुज़र का मामला किया। (हदीस : बुख़ारी, मुस्लिम)

क़र्ज़दारों को मोहलत देने का इनाम

(194) अल्लाह के रसूल (सल्ल०) ने फ़रमाया : तुमसे पहले जो लोग गुज़रे हैं, उनमें से एक व्यक्ति की रूह फ़रिश्तों ने क़ब्ज़ की और उससे पूछा : क्या तुमने कोई अच्छा काम किया है ? उसने कहा नहीं। फ़रिश्तों ने कहा कि याद करो, देखो तुमने कोई नेक काम किया है। उसने सोचकर कहा : "हाँ याद आया। मैं दुनिया में ज़रूरतमंद लोगों को क़र्ज़ दिया करता था और अपने नौकरों को हुक्म देता कि तंगदस्त क़र्ज़दार यदि समय पर क़र्ज़ वापस न कर सके तो कुछ और समय दे देना और जो क़र्ज़दार क़र्ज़ वापस करे उसके साथ नरमी का बर्ताव करना।

अल्लाह ने फ़रिश्तों से कहा : इसकी ग़लतियों को माफ़ कर दो। (क्योंकि यह मेरे मुहताज बन्दों से रहम और दया का मामला करता था।) (हदीस : बुख़ारी)

मालदार का क़र्ज़ चुकाने में टाल-मटोल करना ज़ुल्म है

(195) अल्लाह के रसूल (सल्ल०) ने फ़रमाया : जो क़र्ज़दार क़र्ज़ अदा कर देने की हालत में हो (फिर भी वह क़र्ज़ अदा न करे) तो ऐसे व्यक्ति का टाल-मटोल करना ज़ुल्म और अत्याचार है; और यदि क़र्ज़दार क़र्ज़ देनेवाले से यह कहे कि तुम अपना क़र्ज़ फ़लाँ से जाकर वुसूल कर लो (मैंने उससे कह दिया है) तो क़र्ज़ देनेवाले व्यक्ति को चाहिए कि जिस व्यक्ति का हवाला दिया जा रहा है उससे जाकर अपना क़र्ज़ वुसूल कर ले (यह न कहे कि मैं तो तुम्हीं से वुसूल करूँगा, मैं किसी और को क्या जानूँ ?) (हदीस : बुख़ारी, मुस्लिम)

टाल-मटोल की क़ानूनी सज़ा

(196) अल्लाह के रसूल (सल्ल०) ने फ़रमाया : ऐसा क़र्ज़दार जो क़र्ज़ अदा कर सकता हो, यदि टाल-मटोल का रवैया अपनाए तो समाज की नज़र में उसे गिरा देना सज़ा के तौर पर जायज़ है।

(हदीस : अबू दाऊद)

भले तरीक़े से क़र्ज़ अदा करना

(197) अबू राफ़े (रज़ि०) कहते हैं कि अल्लाह के रसूल (सल्ल०) ने एक कम उम्र ऊँट किसी से उधार लिया। इसी मुद्दत में ज़कात के कुछ ऊँट (आप सल्ल० के पास) आए। आप (सल्ल०) ने अबू राफ़े से कहा : उधार का ऊँट वापस कर दो। मैंने कहा : इनमें एक ही ऊँट है जो बहुत उम्दा है और सात साल का है (जबकि उधार देनेवाले का ऊँट इससे घटिया था)। आप (सल्ल०) ने कहा : यही ऊँट उसे दे दो क्योंकि अच्छा इंसान वह है जो अच्छे तरीक़े से क़र्ज़ अदा करे।

(हदीस : मुस्लिम)

व्याख्या : मूल हदीस में 'इबिल' शब्द इस्तेमाल हुआ है जो ऊँटों और ऊँटनियों के समूह के लिए बोला जाता है। ज़कात के जो मवेशी आए उनमें केवल एक ऊँट था, बाक़ी सब ऊँटनियाँ थीं।

धोखाधड़ी करनेवाले के साथ धोखाधड़ी करने की मनाही

(198) अल्लाह के रसूल (सल्ल०) ने फ़रमाया : जिस व्यक्ति ने तुम्हें भरोसे के लायक़ समझा और अपनी अमानत तुम्हारे सुपुर्द की, उसकी अमानत वापस कर दो, और जिसने तुम्हारे साथ धोखाधड़ी की उसके साथ धोखाधड़ी मत करना (बल्कि अपना हक़ वुसूल करने के लिए जायज़ तरीक़ा अपनाना।) (हदीस : तिरमिज़ी)

क़र्ज़ अदा करने में नीयत का असर

(199) अल्लाह के रसूल (सल्ल०) ने फ़रमाया : जिस व्यक्ति ने किसी से क़र्ज़ के तौर पर कुछ माल लिया और वह उसे अदा करने की नीयत रखता है और आगे चलकर किसी वजह से वह क़र्ज़ अदा न कर सका तो अल्लाह अपनी ओर से उसका यह क़र्ज़ अदा कर देगा; और जिसने क़र्ज़ लिया और उसे वापस करने की नीयत नहीं है तो अल्लाह इस बुरी नीयत की वजह से उसे बर्बाद करके रहेगा।

(हदीस : बुख़ारी)

क़ियामत में क़र्ज़दार की माफ़ी नहीं

(200) नबी (सल्ल०) ने फ़रमाया : जिस व्यक्ति ने अल्लाह की राह में अपनी जान की बाज़ी लगा दी, उसका हर गुनाह माफ़ कर दिया जाएगा। अलबत्ता क़र्ज़ का मामला इससे अलग है।

(हदीस : मुस्लिम)

व्याख्या : इस हदीस से क़र्ज़ की अहमियत खुलकर सामने आ जाती है। एक आदमी जिसने ख़ुदा के दीन का बोलबाला करने के लिए अपनी जान की बाज़ी लगा दी लेकिन उस पर किसी का क़र्ज़ था, जिसे वह अदा नहीं कर सका था तो वह माफ़ नहीं होगा, क्योंकि उसका संबंध बंदों के हक़ से है। क़र्ज़ के बारे में पूछगछ अवश्य होगी। क़र्ज़ देनेवाला अपना हक़ वुसूल करने अदालत में आएगा और जब तक वह ख़ुद न माफ़ कर दे, माफ़ होने का कोई सवाल नहीं। इस हदीस में एक ऐसे क़र्ज़दार का ज़िक्र हुआ है जो अल्लाह की राह में जान देकर शहीद हो चुका है। अब यदि वह अपने जीते जी क़र्ज़ के बोझ से उबरने की नीयत रखता था मगर हालात की ख़राबी की वजह से अदा न कर सका तो अल्लाह की मेहरबानी से उम्मीद है कि वह जवाबदेही से छुटकारा पा जाएगा। हदीसों में इसका उल्लेख है कि यदि कोई व्यक्ति क़र्ज़ अदा करने की नीयत रखता हो मगर वह क़र्ज़ अदा न कर सके, इससे पहले ही मर जाए तो क़ियामत के दिन अल्लाह हक़दार को बुलाएगा और माफ़ करने के लिए उससे कहेगा और उसके बदले जन्नत की नेमतों में से कोई नेमत उसे देने का वादा करेगा तो हक़दार अपने हक़ को माफ़ कर देगा। मगर यदि किसी ने सकत होते हुए हक़दार को उसका हक़ नहीं लौटाया और न दुनिया में हक़दार से क़र्ज़ माफ़ कराया तो आख़िरत (परलोक) में उसकी गाड़ी गहरे दलदल में फंस जाएगी। (तरग़ीब)

किसान का सदक़ा

(201) अल्लाह के रसूल (सल्ल०) ने फ़रमाया : जो मुसलमान खेती-बाड़ी करता है या बाग़ लगाता है और उसके खेतों की पैदावार तथा बाग़ के फलों में से चिड़िया या इंसान या जानवर खा ले तो यह उसके लिए सदक़ा बन जाता है (यानी किसान को उसका सवाब (पुण्य) मिलेगा।) (हदीस : मुस्लिम)

शादी-ब्याह

निकाह

निकाह एक अहम मामला और सामाजिक समझौता है जो मर्द-औरत के बीच आजीवन साथ निभाने के लिए होता है। इसी अहमियत को देखते हुए निकाह तथा उससे सम्बन्धित मामलों को यहाँ बयान किया जा रहा है।

निकाह पर उभारना

(202) अल्लाह के रसूल (सल्ल०) ने फ़रमाया : ऐ नौजवानो! तुममें से जो कोई निकाह की ज़िम्मेदारियाँ उठाने की सकत रखता हो उसे शादी कर लेनी चाहिए। क्योंकि शादी निगाहों को नीचा रखती है, जिंसी ख़ाहिशों को बेलगाम नहीं होने देती, और जो निकाह की ज़िम्मेदारियाँ उठाने की सकत नहीं रखता वह रोज़ा रखे, इसलिए कि रोज़ा जिंसी ख़ाहिशों को बस में रखने में मददगार होता है।

(हदीस : बुख़ारी, मुस्लिम)

व्याख्या : मतलब यह है कि शादी, नज़र के आवारापन से बचाती और इधर-उधर की ताक-झाँक और ग़लत जगह पर निगाह जाने से रोकती है।

दीनदार औरत से शादी

(203) अल्लाह के रसूल (सल्ल०) ने फ़रमाया : आमतौर पर चार बातों को ध्यान में रखकर किसी औरत से शादी की जाती है : (1) उसके माल-दौलत की वजह से (2) उसकी ख़ानदानी शराफ़त को देखकर, (3) उसकी ख़ूबसूरती की वजह से और (4) उसके दीनदार होने की वजह से। तुम दीनदार औरत से शादी करो, तुम्हारा भला हो।

(हदीस : बुख़ारी, मुस्लिम)

व्याख्या : नबी (सल्ल०) ने उम्मत (मुस्लिम-समुदाय) के जवानों को हिदायत दी कि शादी के सिलसिले में जो असल देखने की चीज़ है वह औरत की दीनदारी और उसका तक़्वा (परहेज़गारी) है। वैसे यदि उसमें ये चारों ख़ूबियाँ एक साथ पाई जाएँ तो बड़ी अच्छी बात है और उसके अन्दर दीनदारी को नज़रअंदाज़ करना और सिर्फ़ माल-दौलत और ख़ूबसूरती के आधार पर शादी करना किसी मुसलमान का काम नहीं।

(204) नबी (सल्ल०) ने फ़रमाया : औरतों के ज़ाहिरी रंग-रूप और ख़ूबसूरती की वजह से शादी न करो; हो सकता है उनका हुस्न और उनकी ख़ूबसूरती उनको तबाह कर दे (और वे अच्छी बीवी न बनें, ख़ूबसूरती के घमंड में फंस कर रह जाएँ)। माल-दौलत के आधार पर भी औरतों से शादी न करो; हो सकता है, उनका माल उन्हें सरकशी और बग़ावत में डाल दे, बल्कि दीनदारी और शराफ़त की बुनियाद पर उनसे शादी करो। काली रंगतवाली दीनदार लौंडी (गोरी और ख़ानदानी औरत के मुक़ाबले में) बेहतर है। (हदीस : अल-मुन्तक़ा)

दीनदार मर्द से शादी

(205) अल्लाह के रसूल (सल्ल०) ने फ़रमाया : जब तुम्हारे पास शादी का पैग़ाम कोई ऐसा व्यक्ति भेजे जो तुम्हारी नज़र में दीनदार और अच्छे अख़्लाक़ का हो तो उससे शादी कर दो; यदि तुमने ऐसा न किया तो समाज में फ़ितना-फ़साद फैल जाएगा। (हदीस : तिरमिज़ी)

व्याख्या : देख लीजिए कि अपने पैग़म्बर की बात न मानने की वजह से मुस्लिम समाज में कैसी-कैसी बुराइयाँ फैल गई हैं!

निकाह का ख़ुतबा

(206) हज़रत अब्दुल्लाह इब्ने मसऊद (रज़ि०) कहते हैं कि अल्लाह के रसूल (सल्ल०) ने हमको नमाज़ में पढ़ा जानेवाला कलमा 'तशह्हुद' सिखाया और निकाह का ख़ुतबा भी। चुनांचे इब्ने मसऊद (रज़ि०) ने नमाज़ का तशह्हुद बताने के बाद कहा कि निकाह का ख़ुतबा यह है (जिसका तर्जुमा है :)

"शुक्र और तारीफ़ केवल अल्लाह के लिए है। हम उसी से मदद माँगते हैं और उसी से गुनाहों की माफ़ी चाहते हैं। अपने नफ़्स (मन) की शरारतों से बचने के लिए हम अल्लाह की पनाह चाहते हैं। जिसे अल्लाह हिदायत दे उसे कोई गुमराह नहीं कर सकता (और वह हिदायत उन्हीं को देता है जिनके अन्दर हिदायत पाने की चाह होती है) वह जिसे गुमराह कर दे उसे कोई हिदायत देनेवाला नहीं (और वह गुमराह उन्हीं को करता है जो गुमराही को पंसद करते हैं।) मैं गवाही देता हूँ कि अल्लाह के सिवाय कोई माबूद नहीं और मैं गवाही देता हूँ कि मुहम्मद अल्लाह के बन्दे और उसके रसूल हैं।"

इसके बाद नबी (सल्ल०) क़ुरआन मजीद की तीन आयतें पढ़ते। सुफ़ियान सौरी (मुफ़स्सिर 'भाष्यकार') की तफ़्सीर के मुताबिक़ वे तीनों आयतें इस प्रकार हैं : पहली आयत सूरा आले-इमरान (3 : 102) का तर्जुमा यह है :

"ऐ ईमान लानेवालो ! अल्लाह के ग़ुस्से और उसके अज़ाब से पूरे तौर पर बचे रहने की फ़िक्र रखना, और तुम्हें मौत न आए मगर इस हाल में कि तुम ख़ुदा के फ़रमाँबरदार बने रहो।"

दूसरी आयत सूरा निसा (4 : 1) की है जिसका तर्जुमा यह है :

"ऐ लोगो। अपने पालनहार की नाराज़ी से बचना जिसने तुम्हें एक जान से पैदा किया तथा उसकी जिंस (जाति) से उसका जोड़ा बनाया और उन दोनों के ज़रिए बेशुमार मर्द-औरत संसार में फैला दिए। अतएव अपने रब की नाफ़रमानी से बचना जिसके नाम के हवाले से तुम एक दूसरे से अपने अधिकारों की माँग करते हो। और रिश्तेदारों के हक़ों का भी ध्यान रखना। याद रखो ! अल्लाह तुम्हारी निगरानी कर रहा है।"

तीसरे स्थान की दोनों आयतें सूरा अहज़ाब (33 : 70, 71) की हैं जिनका तर्जुमा यह है :

"ऐ ईमान लानेवालो ! अल्लाह के ग़ुस्से से डरना, उसकी नाफ़रमानी से बचना और सीधी-सच्ची बात कहना। (यदि ऐसा करोगे तो) वह तुम्हें और ज़्यादा नेक बना देगा और तुम्हारे गुनाह माफ़ कर देगा। जो लोग अल्लाह और उसके रसूल की फ़रमाँबरदारी करेंगे वे बेशक बड़ी कामयाबी हासिल करेंगे।" (हदीस : तिरमिज़ी)

व्याख्या : पूरे क़ुरआन में से निकाह के इस स्थायी समझौते के मौक़े पर तीन जगहों से इन आयतों को चुनना पैग़म्बर (सल्ल०) की बसीरत और सूझबूझ की दलील है। इन आयतों का तर्जुमा ग़ौर से पढ़िए। इनमें आम मुसलमानों के लिए— जिनकी शादी हो चुकी है— यह नसीहत है कि मर्द अपनी बीवियों के हक़ पहचानें। बीवियाँ अपने शौहरों के हक़ पहचानें। शौहर-बीवी को ख़ासतौर से सावधान किया जा रहा है कि ज़िन्दगी भर के साथ देने के इस समझौते की ख़िलाफ़वर्ज़ी न करना। "मैंने क़बूल किया" के मतलब को याद रखना और नया रिश्ता जो दो ख़ानदानों के बीच क़ायम हुआ है, उसके तक़ाज़ों को भी ध्यान में रखना।

2. मह्र

मह्र अदा करना ज़रूरी है

(207) अल्लाह के रसूल (सल्ल०) ने फ़रमाया : शर्तों में वह शर्त पूरी किए जाने की सबसे ज़्यादा हक़दार है जिसके द्वारा तुम अपनी बीवियों की इस्मत के मालिक बने हो (यानी मह्र अदा करना फ़र्ज़ है; यह तुम्हारे ऊपर बीवियों का क़र्ज़ है जिसे हर हालत में तुम्हें अदा करना ही है)। (हदीस : बुख़ारी, मुस्लिम)

मामूली मह्र की फ़ज़ीलत

(208) अल्लाह के रसूल (सल्ल०) ने फ़रमाया : सबसे उम्दा मह्र वह है जो थोड़ी हो और आसानी से अदा की जा सके।

(हदीस : अल-मुंतक़ा)

(209) हज़रत उमर (रज़ि०) ने फ़रमाया : सुन लो ! औरतों के मह्र बढ़ा-चढ़ा कर न बाँधा करो। क्योंकि यदि यह दुनिया में इज़्ज़त और बड़ाई की चीज़ होती और अल्लाह की नज़र में यह कोई तक़्वा व परहेज़गारी का काम होता तो इसके सबसे ज़्यादा हक़दार नबी (सल्ल०) होते। मगर मुझे नहीं पता कि आप (सल्ल०) ने बारह 'औक़िया' से अधिक रक़म पर किसी औरत से निकाह किया हो या अपनी बेटियों में से किसी की शादी की हो। (हदीस : बुख़ारी)

व्याख्या : हज़रत उमर (रज़ि) जिस चीज़ से रोक रहे हैं वह यह है कि लोग ख़ानदानी शराफ़त के घमंड में भारी-भरकम मह्र तय करते हैं। जिसका अदा करना उनके बस में नहीं होता और फिर आख़िरकार वह गले की फांस बन जाती है। इसलिए हज़रत उमर (रज़ि०) भारी मह्र मुक़र्रर करने से रोक रहे हैं।

एक औक़िया साढ़े दस तोला चाँदी के बराबर होता है। इस हिसाब से 126 तोले चाँदी से ज़्यादा पर न तो नबी (सल्ल०) का निकाह हुआ और न आप (सल्ल०) ने अपनी बेटियों में से किसी का इससे ज़्यादा मह्र मुक़र्रर किया था। रहा हज़रत उम्मे—हबीबा (रज़ि०) का मह्र जो इससे ज़्यादा था तो यह मह्र हबशा के बादशाह नज्जाशी ने मुकर्रर किया था और ख़ुद अपनी ओर से अदा भी कर दिया था। 126 तोले चाँदी जितने रुपयों की आती हो, उतने रुपए मह्र तय करना नबी (सल्ल०) की सुन्नत है।

नापसन्दीदा दावते-वलीमा

(210) अल्लाह के रसूल (सल्ल०) ने फ़रमाया : सबसे घटिया खाना, उस दावते-वलीमा (शादी के बाद लड़के की ओर से दी जानेवाली दावत) का खाना है जिसमें मालदारों को तो बुलाया जाए और ग़रीबों की अनदेखी कर दी जाए। जिसने दावते-वलीमा क़बूल नहीं की उसने अल्लाह और रसूल की नाफ़रमानी की। (हदीस : बुख़ारी, मुस्लिम)

फ़ासिक़ (दुराचारी) की दावत से दूर रहें

(211) अल्लाह के रसूल (सल्ल०) ने फ़ासिक़ों (दुराचारियों) की दावत क़बूल करने से मना किया है। (हदीस : मिशकात)

व्याख्या : शरीअत की नज़र में 'फ़ासिक़' वह है जो अल्लाह और रसूल के हुक्मों को ढिठाई से तोड़ता है। ऐसे व्यक्ति की दावत क़बूल करने के मायने ये हैं कि आप दीन की बेइज़्ज़ती करनेवाले की इज़्ज़त बढ़ाने जा रहे हैं। हाँ, यह बात सोचने की है कि हम इस्लाम की ओर लोगों को बुलाने के मरहले (दौरे-दावत) में हैं और इस दौर में हरेक के लिए दावत का दरवाज़ा खुला रखना होगा। इसलिए सुधार और दावते-दीन के मद्दे-नज़र जहाँ ज़रूरत हो दावत क़बूल की जा सकती है।

आचार-व्यवहार

ख़ियानत

(212) अल्लाह के नबी (सल्ल०) ने फ़रमाया : अल्लाह तआला फ़रमाता है कि जब तक किसी कारोबार के दो साझेदार आपस में धोखाधड़ी और बेईमानी न करें तब तक मैं उनके साथ रहता हूँ (यानी कारोबार में बढ़ोत्तरी और तरक़्क़ी होती है) मगर जब उनमें से एक साझेदार अपने साथी से धोखाधड़ी करता है तो मैं उनसे अलग हो जाता हूँ और उनके बीच में शैतान आ जाता है। (यानी मैं उन्हें अपनी मदद और मेहरबानी से महरूम कर देता हूँ और शैतान आकर उनके कारोबार को तबाही की राह पर डाल देता है।)

(हदीस : अबू-दाऊद)

जायज़ मक़सद के लिए माल कमाना इबादत है

(213) काब इब्ने उजरा (रज़ि०) कहते हैं कि नबी (सल्ल०) के पास से एक व्यक्ति गुज़रा (जो मेहनत-मज़दूरी के लिए जा रहा था।) आप (सल्ल०) के पास बैठे हुए लोगों ने उसकी मेहनत और भाग-दौड़ देखकर कहा : ऐ अल्लाह के रसूल ! यदि इस व्यक्ति की दिलचस्पी और इसकी भाग-दौड़ अल्लाह की राह में होती तो कितना अच्छा होता ! आप (सल्ल०) ने फ़रमाया : यदि वह अपने छोटे-छोटे बच्चों की परवरिश के लिए दौड़-धूप कर रहा है तो यह कोशिश भी अल्लाह की राह में शुमार की जाएगी। और यदि वह बूढ़े माँ-बाप की परवरिश के लिए कोशिश कर रहा है तो यह भी अल्लाह के लिए किया गया काम समझा जाएगा और यदि वह अपने निजी और व्यक्तिगत काम के लिए दौड़-धूप कर रहा है और मक़सद यह है कि लोगों के सामने हाथ न फैलाना पड़े तो यह भी अल्लाह के लिए किया गया काम समझा जाएगा। लेकिन यदि इस कोशिश का मक़सद यह हो कि लोगों पर अपने माल-दौलत की बरतरी जताए और लोगों के सामने अपनी ख़ुशहाली की नुमाइश करे तो उसकी यह सारी कोशिश और मेहनत शैतान की राह में शुमार होगी। (हदीस : अल-मुंज़िरी)

व्याख्या : नीयत की अच्छाई पूरी ज़िन्दगी और उसके हर काम को इबादत

बना देती है और नीयत की ख़राबी अच्छे कामों को भी गुनाह बना देती है। इस्लाम ने ज़ुह्दो-तक़्वा (दीनदारी और परहेज़गारी) और इबादत की जो व्यापक धारणा दी है, वह इस हदीस से भली-भाँति स्पष्ट है।

माल के बारे में सोचने का सही तरीक़ा

(214) सुफ़यान सौरी (रह०) ने कहा : अब से पहले—नबी (सल्ल०) और सहाबा के दौर में माल एक नापसन्दीदा चीज़ समझी जाती थी मगर हमारे इस ज़माने में माल तो मोमिन की ढाल है। आगे आपने यह भी कहा : यदि हमारे पास ये सोने-चाँदी के सिक्के न होते तो ये बादशाह लोग हमें अपना रूमाल (यानी कठपुतली) बना लेते। आज जिस व्यक्ति के पास भी रुपये पैसे हों, उन्हें वह अच्छी हालत में रखे (कारोबार आदि में लगाए, माल को बढ़ाए) क्योंकि यह ऐसा ज़माना है कि यदि कोई मुहताज हो जाए तो सबसे पहले उसे अपना दीन (धर्म) बेचना पड़ेगा। उन्होंने यह भी कहा : हलाल कमाई में फ़ुज़ूल ख़र्ची नहीं होती। (हदीस : मिशकात)

व्याख्या : बादशाह और अमीर हमें अपना रूमाल बना लेते का मतलब यह है कि यदि हमारे पास माल-दौलत न होती तो हम उनके पास जाने के लिए मजबूर होते और वे हमें अपने ग़लत कामों के लिए इस्तेमाल करते, मगर हमारे पास माल-दौलत मौजूद है; हमें उनसे कुछ लेना-देना नहीं है इसलिए हम उनसे महफ़ूज़ हैं।

नबी (सल्ल०) तथा सहाबा (रज़ि०) के दौर में लोगों का ईमान मज़बूत था, इसलिए तंगहाली में भी वे हर प्रकार की आफ़तों से बचे रहे; मगर आजकल के लोगों का ईमान आमतौर पर कमज़ोर है। इसलिए ग़रीबी और मजबूरी की हालत में वे अपना दीन व ईमान बेचने को तैयार हो जाएँगे। इसी पहलू से हज़रत सुफ़यान (रह०) यह नसीहत कर रहे हैं। उनकी मंशा ऐशो-इशरत करने की सीख देना नहीं है।

रिवायत के आख़िरी हिस्से का मतलब यह है कि यदि कोई अच्छा खाए, अच्छा पहने तो उसको फ़ुज़ूलख़र्ची नहीं कहते; शर्त यह है कि उसने जायज़ ज़रिए से माल कमाया हो। इसका मतलब यह भी हो सकता है कि हलाल कमाई फ़ुज़ूल कामों में ख़र्च नहीं होनी चाहिए।

बुरे अख़्लाक़

घमंड

(215) अल्लाह के रसूल (सल्ल०) ने फ़रमाया : जिस व्यक्ति के मन में तनिक भी घमंड होगा, वह जन्नत में न जा सकेगा। इसपर एक व्यक्ति ने पूछा : आदमी चाहता है कि उसके कपड़े और जूते अच्छे हों (तो क्या इसे भी घमंड समझा जाएगा? और क्या ऐसी रुचि रखनेवाला जन्नत में न जा सकेगा?) नबी (सल्ल०) ने फ़रमाया : नहीं, यह घमंड नहीं है। अल्लाह तो जमील और ख़ूबसूरत है और जमाल व ख़ूबसूरती को पसंद करता है। घमंड यह है कि अल्लाह का हक़ अदा न किया जाए, उसकी नाफ़रमानी की जाए और उसके बंदों को तुच्छ और नीचा समझा जाए। (हदीस : मुस्लिम)

व्याख्या : कुरआन मजीद की सूरा 7 आराफ़ के दूसरे रुकूअ (आयत 11-25) में आदम (अलैहि०) और इबलीस के क़िस्से से घमंड का मतलब स्पष्ट होकर सामने आता है। इबलीस, अल्लाह को अपना पैदा करनेवाला और पालनहार मानता है, मगर जब अल्लाह ने उसे आदेश दिया तो उसे उसने न माना और अकड़ गया। अल्लाह ने उससे कहा : जा भाग यहाँ से। तेरे लिए सही नहीं कि इस मुबारक जगह पर रहते हुए घमंड करे। जा, भाग यहाँ से; तू मेरी नज़र में बेइज़्ज़त और अपमानित है। स्पष्ट है, जो ख़ुदा के मुक़ाबले में अकड़ दिखाएगा, ज़रूरी है कि वह ख़ुदा के बंदों को तुच्छ और नीच समझेगा।

लालच और कंजूसी

(216) अल्लाह के रसूल (सल्ल०) ने फ़रमाया : माल का लालच और ईमान—दोनों किसी बन्दे के दिल में हरगिज़ इकट्ठे नहीं हो सकते। (हदीस : नसई)

व्याख्या : मूल अरबी शब्द "शुह" इस हदीस में इस्तेमाल हुआ है जिसका अर्थ है : लालच और कंजूसी। स्पष्ट है, जो धन का लालची होगा वह कंजूस भी होगा और ये दोनों ही बातें ईमान से मेल नहीं खातीं। जबकि ईमान तो यह चाहता है कि इंसान माल का पुजारी न बने बल्कि जो कुछ कमाए उसका एक हिस्सा इस्लाम को फैलाने और ग़रीबों की भलाई पर ख़र्च करे। सच तो यह है कि ज़्यादा से ज़्यादा माल जमा करने की ज़ेहनियत न तो दीनी ज़रूरतों में माल

ख़र्च करने देती है और न मुहताजों और ज़रूरतमंद लोगों की मदद करने देती है।

बुरे विचारों को मन में जगह न दो

(217) (असावधान) व्यक्ति को उसके व्यभिचार (ज़िना) का हिस्सा मिलकर रहेगा। शहवत (कामवासना) की नज़र से देखना आंखों का ज़िना है, शहवानी (कामुक) बातें सुनना कानों का ज़िना है, इस बारे में बातचीत करना ज़बान का ज़िना है, पकड़ना हाथ का ज़िना है, इसके लिए चलकर जाना पैरों का ज़िना है, ख़ाहिश और तमन्ना दिल का ज़िना है, और आख़िरकार शर्मगाह या तो ज़िना का अमल कर गुज़रती है या फिर इरादा छोड़ देती है।

हदीस-संग्रहों : 'मुस्लिम' और 'अबू दाऊद' में इतनी बढ़ोत्तरी है कि और बोसे लेना मुँह का ज़िना है।

(हदीस : बुख़ारी, मुस्लिम, अबू दाऊद, नसई)

व्याख्या : यह हदीस बहुत अहम है। इसमें बुनियादी तौर से जो बात कही गई है, वह यह है कि इंसान के शरीर में दिल का स्थान एक शासक और हुक्मराँ का है। यदि कोई बुरा विचार मन में आए और आदमी उसको झटक न दे तो फिर उसे गुनाह करने से कोई चीज़ रोक नहीं सकती। जब दिल बुरे विचारों को पालेगा तो सारे अंग उसकी ख़ाहिश को पूरी करने में लग जाएँगे, इसलिए अगर दिल में बुरा ख़्याल आ जाए तो सबसे पहला काम यह है कि उसे ताक़त के ज़ोर से दबाने की कोशिश करनी चाहिए। इस हदीस में यह बात नहीं बताई गई है कि "ज़िना करने के लिए आदमी मजबूर है, क्योंकि तक़दीर में ऐसा लिख दिया गया है और तक़दीर के लिखे को कौन मिटा सकता है।" बात यह बताई गई है कि इंसान यदि असावधान रहे और ईमान के तक़ाज़ों के तहत अपनी तरबियत न करे तो ज़िना, ज़िना पर उभारनेवाली बातों और अन्य क़िस्म के अपराधों से नहीं बच सकता। ध्यान रहे कि बुरे विचारों को मन में जगह देने और उन्हें पालने पर ख़ुदा के यहाँ पकड़ होगी।

किसी का राज़ न खोलो

(218) नबी (सल्ल०) ने फ़रमाया : जब कोई व्यक्ति तुमसे बात करे और इधर-उधर मुड़कर देखे तो उसकी बात को अमानत समझो (यानी वह राज़दाराना बात है; कहनेवाला उसे राज़ रखना चाहता है जब ही तो वह इधर-उधर मुड़कर देखता है।) (हदीस : अबू दाऊद)

बदकारी

(219) अल्लाह के रसूल (सल्ल०) ने फ़रमाया : क़ुरैश के जवानो ! तुम अपनी शर्मगाहों की हिफ़ाज़त करना, ज़िना मत कर बैठना। जो लोग पाकदामनी के साथ ज़िन्दगी गुज़ारेंगे, वे जन्नत के हक़दार होंगे।

(हदीस : अल-मुंज़िरी)

व्याख्या : एक दूसरी हदीस में है :

जिसकी जवानी, जवानी की बुराइयों से महफ़ूज़ रही वह जन्नत का हक़दार है।

नक़्क़ाली करने की मनाही

(220) हज़रत इब्ने अब्बास (रज़ि०) ने कहा : अल्लाह के रसूल (सल्ल०) ने उन मर्दों पर लानत भेजी है जो औरतों की (वेश-भूषा, चाल-ढाल और स्वभाव में) नक़ल करें। इसी प्रकार आप (सल्ल०) ने उन औरतों पर भी लानत भेजी है जो मर्दों के से रंग-ढंग अपनाएँ।

(हदीस : बुख़ारी, अबू दाऊद व नसई)

(221) हज़रत अबू हुरैरा (रज़ि०) ने कहा : अल्लाह के रसूल (सल्ल०) ने उस मर्द पर लानत भेजी जो औरतों का वेष धारण करे और उस औरत पर लानत की जो मर्दाना लिबास पहने।

(हदीस : तर्ग़ीब, अबू दाऊद व नसई)

(222) हज़रत अबू हुरैरा (रज़ि०) कहते हैं कि अल्लाह के रसूल (सल्ल०) के पास एक हिजड़ा लाया गया, जिसने अपने दोनों हाथों और पैरों में मेंहदी लगा रखी थी। (यानी हाथ-पैर लाल थे।) नबी (सल्ल०) ने पूछा : यह कैसा आदमी है? हाथ और पैर क्यों लाल कर रखे हैं? लोगों ने बताया : यह औरतों की तरह बनना चाहता है। अतएवं उसे आप (सल्ल०) के आदेश से शहर से निकालकर 'नक़ी' नामक स्थान में भेज दिया गया. . . . .।

(हदीस : अबू दाऊद)

मजलिस के आदाब

(223) अल्लाह के रसूल (सल्ल०) ने फ़रमाया : कोई व्यक्ति, दूसरे को उसकी जगह से उठाकर, जहाँ वह पहले से बैठा हुआ है, ख़ुद न बैठ जाए बल्कि मजलिस में मौजूद लोगों को चाहिए कि आनेवालों के लिए गुंजाइश निकालें और बैठने की जगह दें।

(हदीस : मुसनद-अहमद)

(224) अल्लाह के रसूल (सल्ल०) ने फ़रमाया : जब तुम तीन व्यक्ति किसी स्थान पर बैठे हो तो दो व्यक्ति आपस में राज़दाराना बातें तीसरे की अनदेखी करके न करें (क्योंकि यह बर्ताव तीसरे व्यक्ति के लिए दुख का सबब बनेगा)।

जब यह हदीस अब्दुल्लाह इब्ने-उमर (रज़ि०) ने सुनाई तो उनके शागिर्द अबू सालेह ने पूछा : यदि मजलिस में चार व्यक्ति हों तो क्या ऐसी हालत में दो व्यक्ति आपस में राज़ की बातें कर सकते हैं? अब्दुल्लाह इब्ने-उमर (रज़ि०) ने कहा : ऐसी हालत में कोई हरज नहीं। (हदीस : मुसनद-अहमद)

(225) अम्र इब्ने-शुऐब (रज़ि०) की रिवायत है कि नबी (सल्ल०) ने फ़रमाया : किसी व्यक्ति के लिए यह जायज़ नहीं है कि पास बैठे हुए दो आदमियों के बीच उनकी इजाज़त के बग़ैर आकर बैठ जाए।

(हदीस : अबू दाऊद, तिरमिज़ी)

पहनावा किस क़ीमत का हो?

(226) अबू याफ़ूर कहते हैं कि एक व्यक्ति ने मेरे सामने अब्दुल्लाह इब्ने-उमर (रज़ि०) से पूछा : मैं किस प्रकार के कपड़े पहनूँ? उन्होंने कहा : ऐसे कपड़े पहनो कि बेवक़ूफ़ लोग तुम्हें उन कपड़ों की वजह से तुच्छ न समझें और अक़्लमंद लोग तुमपर एतराज़ न करें। उसने पूछा: वह किस क़ीमत का हो? उन्होंने कहा : पाँच दिरहम से लेकर बीस दिरहम क़ीमत तक हो। (हदीस : तरग़ीब, तबरानी के हवाले से)

व्याख्या : हज़रत अब्दुल्लाह इब्ने-उमर (रज़ि०) के समय में पाँच दिरहम बहुत होते थे। उस ज़माने में (यानी अब से 1400 वर्ष पूर्व) पाँच दिरहम में पूरी पोशाक तैयार हो जाती थी। हालात में आए इस अंतर को ध्यान में रखना ज़रूरी है।

घमंड की पहचान

(227) अबू सईद ख़ुदरी (रज़ि०) कहते हैं कि मैंने अल्लाह के रसूल (सल्ल०) को यह कहते सुना है कि मोमिन का तहबंद (पाजामा) उसकी आधी पिंडली तक रहता है और अगर उसके नीचे टख़ने तक रहे तो कोई हरज नहीं, मगर जो टख़नों से नीचे हो तो उसका स्थान जहन्नम है (यानी गुनाह की बात है)। यह बात आप (सल्ल०) ने तीन बार कही, और फिर कहा : क़ियामत के दिन अल्लाह उन लोगों को (रहमत की नज़र से) नहीं देखेगा जो घमंड की वजह से अपने तहबंद (पाजामे) ज़मीन पर घसीटते चलते हैं। (हदीस : अबू दाऊद)

(228) नबी (सल्ल०) ने फ़रमाया : जो व्यक्ति अपना कपड़ा (तहबंद, धोती, पाजामा, पतलून) घमंड में आकर ज़मीन से घसीटते हुए चलेगा। अल्लाह उसकी ओर (नफ़रत और ग़ुस्से की वजह से) नहीं देखेगा। यह सुनकर अबू बक्र (रज़ि०) ने कहा: मेरा तहबंद टख़ने से नीचे सरक जाता है, यदि मैं उसे न संभालता रहूँ (तो क्या मैं भी अपने रब की रहमत की नज़र से महरूम हो जाऊँगा ?) आप (सल्ल०) ने कहा : आप तो जान-बूझकर, घमंड की वजह से ऐसा नहीं करते ? फिर आप ख़ुदा की रहमत की नज़र से क्यों महरूम हो जाएँगे।

(हदीस : बुख़ारी)

(229) हज़रत इब्ने अब्बास (रज़ि०) ने कहा : जो चाहो खाओ, और जो चाहो पहनो बशर्तेकि तुम्हारे अंदर घमंड न हो, और फ़ुजूलख़र्ची से बचो। (हदीस : बुख़ारी)

क़ियामत में ज़ुल्म का अंधेरा

(230) नबी (सल्ल०) ने फ़रमाया : क़ियामत के दिन ज़ालिम के लिए ज़ुल्म बड़ा अंधेरा बनकर ज़ाहिर होगा। (हदीस : बुख़ारी, मुस्लिम)

ज़ालिम से सहयोग करना इस्लाम के ख़िलाफ़

(231) औस इब्ने शुरहबील (रज़ि०) कहते हैं कि मैंने अल्लाह के रसूल (सल्ल०) को यह कहते सुना है कि जो व्यक्ति किसी ज़ालिम का साथ देकर उसे ताक़त पहुँचाए, जबकि वह जानता भी हो कि वह जिसे सहयोग दे रहा है, वह ज़ालिम है तो वह इस्लामियत के दायरे से बाहर

हो गया। (यानी जान-बूझकर किसी ज़ालिम का साथ देना मुसलमानों का काम नहीं है।) (हदीस : मिशकात)

ज़ुल्म का बुरा अंजाम

(232) अल्लाह के रसूल (सल्ल०) ने लोगों से पूछा : क्या तुम जानते हो, दिवालिया कौन है? लोगों ने कहा : हमारे यहाँ दिवालिया उस व्यक्ति को कहते हैं जिसके पास न दिरहम (रुपया-पैसा) हो और न कोई और सामान। आप (सल्ल०) ने फ़रमाया : मेरी उम्मत (यानी मुस्लिम समुदाय) में दिवालिया वह है जो क़ियामत के दिन अपनी नमाज़, रोज़ा और ज़कात के साथ अल्लाह के सामने हाज़िर होगा। (यह नेक काम एक ओर होंगे। दूसरी ओर) दुनिया में उसने किसी को गाली दी होगी, किसी पर लांछन (तोहमत) लगाया होगा, किसी का माल हड़प कर लिया होगा, किसी को क़त्ल किया होगा और किसी को मारा होगा—इन सभी उत्पीड़ित (मज़लूम) लोगों में उसकी नेकियाँ बाँट दी जाएँगी। फिर यदि उसकी नेकियाँ (सत्कर्म) ख़त्म हो जाएँगी और उत्पीड़ित लोगों का हक़ बाक़ी रह जाएगा तो उनकी ग़लतियाँ उसके खाते में डाल दी जाएँगी। फिर उसे नरक में डाल दिया जाएगा। (हदीस : मुस्लिम)

व्याख्या : इस हदीस से बन्दों के हक़ की अहमियत का अंदाज़ा लगाया जा सकता है। अल्लाह का हक़ अदा करनेवालों को चाहिए कि वे बन्दों का हक़ न मारें, वरना यह नमाज़, रोज़ा और दूसरे नेक-भले काम सब ख़तरे में पड़ जाएँगे।

मज़लूम की फ़रियाद

(233) अल्लाह के रसूल (सल्ल०) ने फ़रमाया : मज़लूम (उत्पीड़ित) की बद्दुआ से बचो, क्योंकि वह अल्लाह से सिर्फ़ अपना हक़ माँगता है और अल्लाह किसी हक़दार को उसके हक़ से महरूम नहीं करता।

(हदीस : मिशकात)

व्याख्या : इस हदीस में मज़लूम की आह लेने से रोका गया है, क्योंकि उसकी आह ज़ालिम को भस्म कर डालती है। अतः जब मज़लूम की आह आकाश पर जाती है तो आकाशवाला ज़ालिम को तरह-तरह की मुसीबतों और परेशानियों में गिरफ़्तार करके बेचैन कर देता है।

ग़ुस्से पर क़ाबू रखना

(234) अल्लाह के रसूल (सल्ल०) ने फ़रमाया : ताक़तवर वह नहीं है जो कुश्ती में दूसरों को पछाड़ दे। असल ताक़तवर वह है जो ग़ुस्से के समय अपने ऊपर क़ाबू रखता हो (यानी ग़ुस्से की हालत में कोई ऐसी हरकत नहीं करता जो अल्लाह और उसके रसूल सल्ल० को नापसन्द हो।) (हदीस : बुख़ारी)

ग़ुस्से का इलाज

(235) अल्लाह के रसूल (सल्ल०) ने फ़रमाया : ग़ुस्सा शैतानी असर का नतीजा है और शैतान आग से पैदा किया गया है और आग सिर्फ़ पानी से बुझती है तो जब तुममें से किसी को ग़ुस्सा आए तो वुज़ू कर ले। (हदीस : अबू दाऊद)

व्याख्या : शैतानी असरवाला ग़ुस्सा वह है जो ख़ुद अपने लिए आए। वह ग़ुस्सा जो एक मुसलमान को इस्लाम के दुश्मनों पर आता है वह तो बहुत अच्छी चीज़ है। यदि कोई तुम्हारे दीन को तबाह करने आ रहा है तो उस समय ग़ुस्सा न आना ईमान की कमज़ोरी और बेशर्मी की निशानी है।

(236) अल्लाह के रसूल (सल्ल०) ने फ़रमाया : जब तुममें से किसी को खड़े होने की हालत में गुस्सा आए तो चाहिए कि वह बैठ जाए। यदि इस प्रकार ग़ुस्सा ठंडा हो जाए तो ठीक, वरना लेट जाए (तो इससे ग़ुस्सा दूर हो जाएगा।) (हदीस : मिशकात)

नक़ल उतारना दुरुस्त नहीं

(237) अल्लाह के रसूल (सल्ल०) ने फ़रमाया : मुझे किसी की नक़ल उतारना अच्छा नहीं लगता, चाहे उसके बदले मुझे कितनी ही दौलत मिले। (हदीस : तिरमिज़ी)

दूसरों की मुसीबत पर ख़ुश नहीं होना चाहिए

(238) अल्लाह के रसूल (सल्ल०) ने फ़रमाया : तू अपने भाई की मुसीबत पर ख़ुश न हो वरना होगा यह कि अल्लाह उसपर दया करेगा और तुझे मुसीबत में डाल देगा। (हदीस : तिरमिज़ी)

इस्लामी अख़्लाक़

(239) अल्लाह के रसूल (सल्ल०) ने फ़रमाया : तीन बातें इस्लामी अख़्लाक़ के अंग हैं : एक यह कि जब मोमिन को ग़ुस्सा आता है तो उसका ग़ुस्सा उसे ग़लत राह अपनाने पर नहीं उभारता। दूसरी यह कि जब वह ख़ुश होता है तो ख़ुशी उसको हक़ की सीमा से बाहर नहीं निकलने देती। तीसरी बात यह कि जब वह ताक़तवर होता है तो दूसरों की चीज़ नहीं छीनता। (हदीस : मिशकात)

झूठ

झूठ, निफ़ाक़ की पहचान

(240) नबी (सल्ल०) ने फ़रमाया : चार बुरी आदतें जिसमें पाई जाएँगी वह पक्का मुनाफ़िक़ (कपटाचारी) होगा, और जिस व्यक्ति में इनमें से कोई एक बुरी आदत होगी उसमें निफ़ाक़ की एक खसलत मौजूद होगी जब तक कि उसे छोड़ न दे। वे चारों बुरी आदतें ये हैं :

(1) जब उसके पास कोई अमानत रखी जाए तो उसमें ख़ियानत करे।

(2) जब बात करे तो झूठ बोले।

(3) जब वादा करे तो पूरा न करे।

(4) जब किसी से झगड़ा करे तो गाली-गलौच पर उतर आए और हक़ और न्याय से हट जाए। (हदीस : बुख़ारी, मुस्लिम)

सबसे बड़ा झूठ–आँखों का झूठ

(241) नबी (सल्ल०) ने फ़रमाया : सबसे बड़ा झूठ यह है कि आदमी अपनी दोनों आँखों को वह ख़्वाब दिखाए जो उन्होंने नहीं देखा।

(हदीस : बुख़ारी)

व्याख्या : मतलब यह कि उसने ख़्वाब देखा ही नहीं और सुबह उठकर लोगों से कहता है कि आज मैंने इतने अच्छे-अच्छे ख़्वाब देखे हैं। ऐसा करने का मतलब यह है कि वह अपनी आँखों से अनायास ही झूठ बुलवा रहा है। दूसरे शब्दों में, वह अपनी आँखों पर तोहमत लगाता है। उनकी ओर वह बात जोड़ता है जो उन्होंने की ही नहीं।

बड़ी ख़यानत

(242) सुफ़यान हज़्रमी (रज़ि०) कहते हैं कि मैंने अल्लाह के रसूल (सल्ल०) को यह कहते सुना : इससे बड़ी ख़यानत और क्या होगी कि तुम अपने भाई से कोई बात कहो और वह तुम्हारी बात को सच जाने जबकि तुमने उससे झूठ बोला। (हदीस : अबू दाऊद)

बच्चों से झूठ बोलना

(243) अब्दुल्लाह इब्ने आमिर (रज़ि०) कहते हैं कि एक दिन जबकि अल्लाह के रसूल (सल्ल०) हमारे घर मौजूद थे, मेरी माँ ने मुझे पुकारा: यहाँ आ, तुझे एक चीज़ दूँगी। आप (सल्ल०) ने पूछा : तुम उसे क्या देना चाहती हो? उन्होंने कहा : मैं उसे खजूर देना चाहती थी। आप (सल्ल०) ने कहा : यदि तुम उसे कुछ न देतीं तो तुम्हारे आमालनामे में एक झूठ लिख लिया जाता। (हदीस : अबू दाऊद)

व्याख्या : माँ-बाप और सरपरस्तों को यह हदीस याद रखनी चाहिए।

(244) अब्दुल्लाह इब्ने मसऊद (रज़ि०) कहते हैं : झूठ बोलना किसी हाल में जायज़ नहीं—न संजीदगी के साथ और न हँसी-मज़ाक़ में। यह बात भी जायज़ नहीं कि तुममें से कोई अपने बच्चे से वादा करे, फिर उसे पूरा न करे। (हदीस : इमाम बुख़ारी)

हँसी-मज़ाक़ में झूठ

(245) अल्लाह के रसूल (सल्ल०) ने फ़रमाया : महज़ हँसने-हँसाने के लिए जो झूठी बातें कहे उसके लिए तबाही है; उसके लिए तबाही है, उसके लिए तबाही है। (हदीस : तिरमिज़ी)

दोरुख़ापन

(246) अल्लाह के रसूल (सल्ल०) ने फ़रमाया : क़ियामत के दिन उस व्यक्ति का बड़ा बुरा हाल होगा जो दुनिया में दो चेहरे रखता था। कुछ लोगों से एक चेहरे के साथ मिलता और कुछ लोगों से दूसरे चेहरे के साथ। (हदीस : बुख़ारी, मुस्लिम)

व्याख्या : दो व्यक्तियों या दो दलों के बीच जब रंजिश हो जाती है तो हर जगह कुछ ऐसे लोग भी पाए जाते हैं जो दोनों के पास पहुँचते हैं। दोनों की हाँ में हाँ मिलाते और उनकी आपसी रंजिश को और हवा देते हैं, मेल-मिलाप कराने की कोशिश नहीं करते, बल्कि दुश्मनी की आग को ख़ूब भड़काने की फ़िक्र में लगे रहते हैं।

गन्दी बातें और बदज़बानी

(247) अल्लाह के रसूल (सल्ल०) ने फ़रमाया : क़ियामत के दिन एक सच्चे मुसलमान (मोमिन) के मीज़ान (पल्ले) में जो चीज़ सबसे

वज़नदार होगी वह उसका अच्छा अख़्लाक़ (उम्दा सीरत और किरदार) होगा। और अल्लाह उस व्यक्ति से नफ़रत करता है जो बेहयाई की बात मुँह से निकालता और बदज़बानी करता है। (हदीस : तिरमिज़ी)

व्याख्या : हदीस में मूल अरबी शब्द 'ख़ुल्क़ुन हसनुन' का प्रयोग हुआ है जिसकी व्याख्या हदीस के मशहूर आलिम अब्दुल्लाह इब्ने मुबारक (रह०) ने इन शब्दों में की है : अच्छा अख़्लाक़ यह है कि आदमी हँसते हुए चेहरे के साथ मिले, मुहताज लोगों पर माल ख़र्च करे और किसी को तकलीफ़ न दे।

आग की दो ज़बानें

(248) अल्लाह के रसूल (सल्ल०) ने फ़रमाया : जो व्यक्ति दुनिया में दोमुँहापन का रवैया अपनाएगा, आख़िरत में उसके मुँह में आग की बनी हुई दो ज़बानें होंगी। (हदीस : अबू दाऊद)

व्याख्या : आख़िरत में उसके मुँह में आग की दो ज़बानें इसलिए होंगी, क्योंकि दुनिया में उसके मुँह से आग निकलती थी जो दो व्यक्तियों के आपसी ताल्लुक़ात को जलाती थीं।

मरे हुए लोगों की ग़ीबत (बुराई) न करो

(249) अल्लाह के रसूल (सल्ल०) ने फ़रमाया : जो लोग इस दुनिया से जा चुके हैं उन्हें बुरा-भला न कहो, क्योंकि वे अपने आमाल के साथ अपने रब के पास जा चुके हैं। (हदीस : अदबुल-मुफ़रद)

ग़ीबत और तोहमत

(250) अल्लाह के रसूल (सल्ल०) ने सहाबा किराम (रज़ि०) से पूछा : तुम्हें पता है, ग़ीबत किसे कहते हैं? लोगों ने कहा : अल्लाह और उसके रसूल ज़्यादा बेहतर जानते हैं। आप (सल्ल०) ने बताया : 'ग़ीबत' यह है कि तू अपने भाई की चर्चा ऐसे ढंग से करे जिसे वह ना पसंद करे। लोगों ने आप (सल्ल०) से कहा : यदि यह बात वास्तव में मेरे भाई में पाई जाती हो, जो मैं कह रहा हूँ, क्या तब भी यह ग़ीबत होगी? आप (सल्ल०) ने कहा : यदि वह बात उसमें पाई जाती हो तो यह ग़ीबत हुई और यदि नहीं, तो वह तोहमत (लाँछन) हुआ।

(हदीस : मिशकात)

ग़ीबत, ज़िना (व्यभिचार) से भी बुरा जुर्म है

(251) अल्लाह के रसूल (सल्ल०) ने फ़रमाया : ग़ीबत ज़िना से भी अधिक बड़ा जुर्म है। सहाबा (रज़ि०) ने पूछा : ऐ अल्लाह के रसूल! ग़ीबत, ज़िना (व्यभिचार) से बड़ा जुर्म कैसे हो सकता है? आप (सल्ल०) ने बताया : एक व्यक्ति ज़िना करने के बाद जब तौबा करता है तो उसका गुनाह माफ़ कर दिया जाता है, मगर ग़ीबत करनेवाले की माफ़ी उस वक़्त तक नहीं होती जब तक कि वह व्यक्ति उसको माफ़ न कर दे जिसकी पीठ पीछे बुराई (ग़ीबत) उसने की है।

(हदीस : मिशकात)

ग़ीबत का कफ़्फ़ारा (प्रायश्चित)

(252) अल्लाह के रसूल (सल्ल०) ने फ़रमाया : पीठ पीछे किसी की बुराई (ग़ीबत) करने का कफ़्फ़ारा यह है कि तू अल्लाह से उस व्यक्ति के लिए जिसकी तूने ग़ीबत की है, माफ़ी (मग़फ़िरत) की दुआ इन शब्दों में करे : ऐ अल्लाह! तू उसे और मुझे माफ़ कर दे। (यह उस सूरत में है जब उस व्यक्ति से माफ़ी माँगना मुमकिन न रह गया हो जैसे—वह मर गया हो या दूर के इलाक़े में चला गया हो।)

(हदीस : मिशकात)

दूसरों की दुनिया बनाने के चक्कर में अपनी आख़िरत बर्बाद न करो

(253) अल्लाह के रसूल (सल्ल०) ने फ़रमाया : क़ियामत के दिन वह व्यक्ति बड़ी बुरी हालत में होगा जिसने दूसरों की दुनिया बनाने के लिए अपनी आख़िरत (पारलौकिक-जीवन) बर्बाद कर डाली।

(हदीस : मिशकात)

क़ौमी तास्सुब (पक्षपात)

(254) अबू फ़सीला (रज़ि०) फ़रमाते हैं कि मैंने अल्लाह के रसूल (सल्ल०) से पूछा : क्या अपने लोगों से प्रेम करना तास्सुब है? आप (सल्ल०) ने फ़रमाया : नहीं, यह तास्सुब नहीं है। तास्सुब और फ़िरक़ापरस्ती यह है कि व्यक्ति अपने लोगों की ज़ालिमाना कार्रवाइयों में उनकी मदद करने लगे। (हदीस : मिशकात)

बेजा तरफ़दारी का अंजाम तबाही है

(255) अल्लाह के रसूल (सल्ल०) ने फ़रमाया : जो व्यक्ति ग़लत और नाजायज़ कामों में अपने क़बीले (कुनबा, ख़ानदान और क़ौम) का साथ देता है, उसकी मिसाल उस ऊँट की-सी है जो कुएँ में गिर रहा हो और यह उसकी दुम पकड़कर लटक गया और वह भी ऊँट के साथ कुएँ में जा गिरा। (हदीस : अबू दाऊद)

(256) अल्लाह के रसूल (सल्ल०) ने फ़रमाया : वह व्यक्ति हममें से नहीं जो तास्सुब की दावत दे। वह भी हममें से नहीं जो तास्सुब की भावना लिए जंग करे और वह भी हममें से नहीं जो तास्सुब की हालत में मरे। (हदीस : अबू दाऊद)

व्याख्या : पक्षपात का अर्थ है "मेरी जाति चाहे सत्य पर हो या असत्य पर", मुझे हर हाल में उसकी तरफ़दारी करनी है और उसका साथ देना है। यह शैतानी और अज्ञान पर आधारित पक्षपात है। इस नज़रिए की ओर बुलाना, इस जज़्बे के साथ युद्ध करना, और इसी मानसिकता के लिए मर जाना मुसलमान का काम नहीं। ऐसे लोगों से अल्लाह के नबी (सल्ल०) ने बे ताल्लुक़ी का एलान किया है।

मुँह पर बेजा तारीफ़ करना सही नहीं

(257) अल्लाह के रसूल (सल्ल०) ने फ़रमाया : जब तुम (बेजा) तारीफ़ करनेवालों को देखो तो उनके मुँह पर मिट्टी डाल दो।

(हदीस : मुस्लिम)

व्याख्या : 'तारीफ़' करनेवालों से मुराद वे लोग हैं जिनका पेशा ही तारीफ़ के पुल बाँधना होता है। ये लोग आते हैं और 'बख़्शिश' की लालच में ज़मीन-आसमान के क़ुलाबे मिलाने लगते हैं। इस क़िस्म के लोग जाहिलियत (अज्ञान-काल) में भी थे और आज भी पाए जाते हैं। ऐसे लोगों के बारे में आप (सल्ल०) ने फ़रमाया : उनके मुँह पर मिट्टी डालो यानी उन्हें बख़्शिश न दो, बैरंग वापस कर दो।

फ़ासिक़ की तारीफ़ ख़ुदा के ग़ज़ब का सबब है

(258) अल्लाह के रसूल (सल्ल०) ने फ़रमाया : जब किसी फ़ासिक़ (दुराचारी) की तारीफ़ की जाती है तो अल्लाह का गुस्सा भड़क उठता है और उसकी वजह से अर्श (अल्लाह का सिंहासन) हिलने लगता है। (हदीस : मिशकात)

व्याख्या : जो व्यक्ति अल्लाह के आदेशों का आदर नहीं करता बल्कि खुल्लम-खुल्ला उनको तोड़ता है, ऐसा व्यक्ति कुछ भी इज़्ज़त और एहतिराम के लायक़ नहीं। अब यदि मुस्लिम समाज में ऐसे लोग सिर-आँखों पर बैठाए जाते हैं, उनका अभिनंदन किया जाता है तथा देश की बागडोर उनके हाथ में सौंपी जाती है तो इसके मायने ये हैं कि इस समाज के लोगों को अल्लाह के दीन से लगाव नहीं है और यदि है भी तो सिर्फ़ नाम के लिए! जबकि हक़ीक़त यह है कि सिर्फ़ प्रेम अल्लाह की सामूहिक दया-कृपा का हक़दार नहीं बनाता।

मुँह पर तारीफ़ करना नापसन्दीदा है

(259) हज़रत अबू बक्र (रज़ि०) फ़रमाते हैं कि एक व्यक्ति ने नबी (सल्ल०) की मजलिस में एक व्यक्ति की तारीफ़ की (वह व्यक्ति भी उस मजलिस में मौजूद था)। आप (सल्ल०) ने तारीफ़ करने वाले व्यक्ति से कहा : तुमने तो अपने भाई का गला काट दिया। यह वाक्य आप (सल्ल०) ने तीन बार दोहराया। (फिर आप सल्ल० ने कहा :) तुममें जो कोई किसी की तारीफ़ करे, और ऐसा करना ज़रूरी भी हो तो यूँ कहे : फ़लाँ व्यक्ति को मैं ऐसा समझता हूँ, हालाँकि हक़ीकत का तो अल्लाह ही को पता है। यह उस हालत में है जबकि उसे वह वैसा ही समझता हो। मगर ऐसा होते हुए भी कोई किसी को अल्लाह के मुक़ाबले में पाकीज़ा न ठहराए। (हदीस : बुख़ारी, मुस्लिम)

व्याख्या : नबी (सल्ल०) की मजलिस में एक व्यक्ति की तारीफ़ की गई तो आप (सल्ल०) को लगा कि उसके फ़ितने में पड़ जाने का अंदेशा है। अतः आप (सल्ल०) ने टोककर बताया कि यदि किसी के बारे में कुछ कहना ही हो तो यूँ कहो : मैं फ़लाँ व्यक्ति को भलामानुष समझता हूँ या फ़लाँ व्यक्ति को 'जन्नती' या 'वली' समझता हूँ। यह न कहे कि 'बेशक फ़लाँ आदमी जन्नत में जाने का हक़दार है। इस प्रकार कहने का किसी को हक़ नहीं है। क्या पता, आज जिसे वह जन्नती कह रहा है, वह अल्लाह की नज़र में जन्नत में जाने का हक़दार है या नहीं। इंसान जब तक ज़िन्दा है, वह लगातार ईमान की आज़माइश में है। क्या पता, कब आदमी का दिल पलट जाए और वह सही रास्ते से भटक जाए। सही बात यह है कि मरने के बाद भी किसी को 'जन्नती' कहना ठीक नहीं है।

उलमा ने कहा है कि यदि किसी व्यक्ति के फ़ितने में पड़ने का अन्देशा न हो और मौक़ा आ पड़े तो उसके मुँह पर तारीफ़ की जा सकती है।

झूठी गवाही

(260) ख़ुरैम बिन फ़ातिक (रज़ि०) कहते हैं कि अल्लाह के रसूल (सल्ल०) ने सुबह की नमाज़ पढ़ाई और सलाम फेरने के बाद आप (सल्ल०) सीधे खड़े हो गए और बोले : झूठी गवाही देना और शिर्क करना दोनों समान हैं। यह वाक्य आप (सल्ल०) ने तीन बार दोहराया। फिर आप (सल्ल०) ने (क़ुरआन की आयत "फ़ज्तनिबुर्रिज्स मिनल् औसानि" (आयत के अंत तक) पढ़ी, जिसका मतलब है कि गंदगी से यानी मूर्ति-पूजा से दूर रहो और झूठी बात कहने से। अल्लाह के लिए यकसू हो जाओ, बहुत से ख़ुदाओं की पूजा छोड़कर एक ख़ुदा की बंदगी अपनाओ।

व्याख्या : नबी (सल्ल०) ने क़ुरआन की सूरा हज की जो आयत पढ़ी उसमें "क़ौलज़्ज़ूर" शब्द आया है जिसके मायने झूठ कहने के हैं। झूठी बात कहना हर जगह बुरा है चाहे कचहरी में जज के सामने हो या किसी और जगह।

बुरा मज़ाक़, वादाख़िलाफ़ी, झगड़ा और मुनाज़िरा (तर्क-वितर्क)

(261) अल्लाह के रसूल (सल्ल०) ने फ़रमाया : तू अपने भाई से मुनाज़िरा (तर्क-वितर्क) न कर, न उससे मज़ाक़ कर और न उससे वादाख़िलाफ़ी कर। (हदीस : तिरमिज़ी)

व्याख्या : यहाँ जिस बहस-तकरार से रोका गया है वह यह है कि मुनाज़िरा करनेवाला पहले से यह तय कर लेता है कि अपनी बात पर जैसे भी हो, अड़े रहना है। दूसरे की बात चाहे कितनी ही हक़ हो उसकी काट करनी है। जिस मज़ाक़ से यहाँ रोका गया है, उससे मुराद ऐसा मज़ाक़ है जो दिल दुखानेवाला हो; तफ़रीह और शरीफ़ाना मज़ाक़ से नहीं रोका गया है।

वादा निभाना

(262) नबी (सल्ल०) ने फ़रमाया : यदि किसी ने अपने भाई से वादा किया कि मैं फलाँ जगह पर फ़लाँ वक़्त आऊँगा, साथ ही इस वादे को पूरा करने की नीयत भी थी, मगर किसी मजबूरी की वजह से वह वादा पूरा न कर सका तो वह गुनाहगार न होगा। (हदीस : अबू दाऊद)

दूसरों के ऐब टटोलना

(263) हज़रत आइशा (रज़ि०) कहती हैं कि मैंने नबी (सल्ल०) से कहा : सफ़ीया का यह ऐब कि वह ऐसी और ऐसी है, आपके लिए बहुत है (मतलब यह कि वह ठिगनी है और यह बड़ा ऐब है।) आप (सल्ल०) ने फ़रमाया : आइशा ! तुमने ऐसी बात मुँह से निकाली है कि यदि उसे समुद्र में घोल दिया जाए तो पूरे समुद्र को गंदा कर दे।

(हदीस : मिशकात)

व्याख्या : नबी (सल्ल०) की बीवियाँ आपस में सौतन होते हुए भी बड़े मेल-मिलाप से रहती थीं, मगर कभी असावधानी में किसी से चूक हो ही जाती। ऐसी ही चूक हज़रत आइशा (रज़ि०) से हुई कि उन्होंने अपनी सौतन हज़रत सफ़ीया (रज़ि०) के ठिगनेपन को निशाना बनाया (सफ़ीया छोटे क़द की थीं)। नबी (सल्ल०) ने सुनते ही इस पर अपनी नाराज़गी ज़ाहिर कर दी। फ़रमाया : तुमने बड़ी गंदी बात कह दी। फिर कभी हज़रत आइशा (रज़ि०) से ऐसी ग़लती नहीं हुई।

इस हदीस का यह पहलू याद रखने लायक़ है कि नबी (सल्ल०) अपनी प्यारी बीवी की ग़लत बात पर चुप नहीं रहे, बल्कि मुनासिब अंदाज़ में उस ग़लती पर टोका।

बिना छानबीन किए बात फैलाना

(264) अब्दुल्लाह इब्ने- मसऊद (रज़ि०) से रिवायत है कि नबी (सल्ल०) ने फ़रमाया : शैतान आदमी के रूप में आकर लोगों से झूठी बात कहता है। फिर लोग मजलिस से उठकर चले जाते हैं। फिर उनमें से कोई यूँ कहता है : एक आदमी की शक्ल व सूरत से तो मैं वाक़िफ़ हूँ, पर नाम नहीं जानता, वह यह बात कह रहा था।

(हदीस : मुस्लिम)

व्याख्या : इस हदीस में मुसलमानों को इस बात से मना किया गया है कि कोई बात बिना जाँचे-परखे न कही जाए, न फैलाई जाए। हो सकता है, जिसने यह बात कही हो, शैतान हो। इसलिए बात कहनेवाले के बारे में जाँच करो क्योंकि बेजाँचे-परखे बात फैलाने से समाज को गंभीर नतीजे भुगतने पड़ सकते हैं।

लगाई-बुझाई करना

(265) अल्लाह के रसूल (सल्ल०) ने फ़रमाया : लगाई-बुझाई करने वाला जन्नत में न जाएगा। (हदीस : बुख़ारी, मुस्लिम)

(266) इब्ने-अब्बास (रज़ि०) से रिवायत है कि नबी (सल्ल०) दो क़ब्रों से होकर गुज़रे। आप (सल्ल०) ने बताया : ये दोनों क़ब्रवालों को अज़ाब दिया जा रहा है और यह अज़ाब किसी ऐसे गुनाह पर नहीं दिया जा रहा है जिसे वे छोड़ न सकते थे। वे चाहते तो आसानी से उससे बच सकते थे। हाँ, ग़ाफ़िल और बेपरवाह लोगों के लिए उससे बचना मुश्किल है। होता यह था कि इनमें एक इधर की बात उधर जाकर लगाया करता था ताकि दोनों के संबंध बिगड़ जाएँ और दूसरा व्यक्ति पेशाब के छींटों से सावधानी नहीं बरतता था।

(हदीस : बुख़ारी)

ग़ीबत और चुग़ली की मनाही

(267) अल्लाह के रसूल (सल्ल०) ने चुग़ली करने, ग़ीबत करने और ग़ीबत सुनने से मना किया है। (हदीस : मिशकात)

ईर्ष्या (हसद) सब किए-धरे पर पानी फेर देती है

(268) अल्लाह के नबी (सल्ल०) ने फ़रमाया : ईर्ष्या (हसद) से बचो, क्योंकि यह नेकियों को इस प्रकार भस्म कर डालती है जिस प्रकार आग लकड़ी को। (हदीस : अबू दाऊद)

बुरी नज़र डालना

(269) जरीर इब्ने अब्दुल्लाह (रज़ि०) कहते हैं कि मैंने अल्लाह के रसूल (सल्ल०) से अजनबी औरत पर अचानक नज़र पड़ जाने के बारे में पूछा। आप (सल्ल०) ने फ़रमाया : तुम अपनी नज़र फेर लो।

(हदीस : मुस्लिम)

(270) अल्लाह के रसूल (सल्ल०) ने अली (रज़ि०) से फ़रमाया : ऐ अली ! पराई औरत पर दोबारा नज़र न डालो। पहली नज़र तो माफ़ है, मगर दूसरी नज़र डालना तुम्हारे लिए जायज़ नहीं।

(हदीस : अबू दाऊद)

अख़्लाक़ी ख़ूबियाँ

मुहम्मद (सल्ल०) को नबी बनाए जाने का मक़सद

(271) अल्लाह के रसूल (सल्ल०) ने फ़रमाया : मुझे अल्लाह की ओर से भेजा गया है ताकि अख़्लाक़ी अच्छाइयों को मुकम्मल कर दूँ।

(हदीस : मुवत्ता इमाम मालिक)

व्याख्या : हज़रत मुहम्मद (सल्ल०) को पैग़म्बर बनाए जाने का मक़सद यह है कि लोगों के अख़्लाक़ और मामलात को ठीक करें, उनके भीतर पाई जानेवाली बुराइयों को जड़ से उखाड़ फेंके तथा उनके स्थान पर अच्छे अख़्लाक़ और अच्छी बातें पैदा करें। लोगों का इस प्रकार सुधार करना आप (सल्ल०) को पैग़म्बर बनाने का मक़सद है। आप (सल्ल०) ने अल्लाह की रहनुमाई में सारे अच्छे अख़्लाक़ की तफ़्सील बयान की तथा उसे ज़िन्दगी के सभी पहलुओं तक फैलाया और उसे लागू किया और मुस्लिम समाज को हर हाल में उससे चिमटे रहने की हिदायत दी।

अच्छे अख़्लाक़ का दायरा कितना फैला हुआ है, इसका अंदाज़ा अब्दुल्लाह इब्ने मुबारक (रह०) के इन शब्दों से कीजिए। वे कहते हैं :

"अच्छा अख़्लाक़ यह है : मुसकुराते चेहरे के साथ लोगों से मिलना, ग़रीबों पर माल ख़र्च करना, और किसी को तकलीफ़ न देना।"

अच्छे अख़्लाक़ का दायरा कितना फैला हुआ है, इसका अन्दाज़ा पिछली और आगे आनेवाली हदीसों से कीजिए।

अच्छे अख़्लाक़ की नसीहत

(272) मुआज़ इब्ने जबल (रज़ि०) कहते हैं कि अल्लाह के रसूल (सल्ल०) ने मुझे यमन (का गर्वनर बनाकर) भेजते समय जो आख़िरी नसीहत की थी जबकि मैं रिकाब में पांव रखने जा रहा था, वह यह थी :

ऐ मुआज़ ! लोगों के साथ अच्छा सुलूक करना।

(हदीस : मुवत्ता इमाम मालिक)

वक़ार और संजीदगी

(273) नबी (सल्ल०) ने क़बीला अब्दुल क़ैस के प्रतिनिधि मण्डल

(वफ़्द) के नेता मुंज़िर बिन आइज़ से फ़रमाया : तुम्हारे अन्दर दो बातें ऐसी हैं जो अल्लाह को पसंद हैं : (1) सहनशीलता, और (2) वक़ार और संजीदगी। (हदीस : मुस्लिम)

व्याख्या : सन् 9 हिजरी में क़बीला अब्दुल क़ैस का जो प्रतिनिधिमंडल बहरैन से मदीना आया था, उसके नेता मुंज़िर बिन आइज़ थे।जिन्हें नबी (सल्ल०) ने 'अशज्ज' का ख़िताब दिया था।, इस प्रतिनिधिमंडल के अन्य लोग तो मदीना पहुँचते ही नबी (सल्ल०) से मुलाक़ात के लिए दौड़ पड़े। न नहाया, न धोया, न अपने सामानों को ठीक से रखा और न अपने ऊँटों को घास-पानी दिया। हालाँकि वे लम्बे सफ़र से आए थे और गर्द-ग़ुबार से अटे हुए थे। इसके बरख़िलाफ़ मुंज़िर ने ज़रा भी जल्दबाज़ी नहीं दिखाई। वे अपनी सवारी से इत्मीनान से उतरे। अपना सामान एवं प्रतिनिधिमंडल के अन्य लोगों का सामान सलीक़े से रखा। सवारियों को चारा-पानी दिया, फिर नहा-धोकर कपड़े बदलकर इत्मीनान से नबी (सल्ल०) की ख़िदमत में हाज़िर हुए।

बन-ठनकर रहने से बचिए

(274) अल्लाह के रसूल (सल्ल०) ने फ़रमाया : सादगी, ईमान का तक़ाज़ा है। (हदीस : अबू दाऊद)

व्याख्या : अस्ल हदीस में 'बज़ाज़ः' शब्द इस्तेमाल हुआ है, जिसका तर्जुमा 'सादगी' से किया गया है। मगर इसका मतलब यह है कि मोमिन हर वक़्त बनने-सँवरने के चक्कर में नहीं रहता। इसका यह मतलब हरगिज़ नहीं कि आदमी अपनी हैसियत के मुताबिक़ न अच्छा पहने, न अच्छा खाए। उलमा ने इसका मतलब यह बताया है : 'हर समय बनाव-सिंगार की आदत को छोड़ना।'

(लिसानुल-अरब)

सलीक़ा और सफ़ाई

(275) हज़रत जाबिर (रज़ि०) कहते हैं कि नबी (सल्ल०) हमारे यहाँ मुलाक़ात के लिए तशरीफ़ लाए तो देखा कि एक व्यक्ति धूल मिट्टी में अटा हुआ है, बाल बिखरे हुए हैं। आप (सल्ल०) ने फ़रमाया : क्या इसके पास कंघा नहीं है जिससे यह अपने बालों को ठीक कर ले?

एक और व्यक्ति को आप (सल्ल०) ने देखा जो मैले कपड़े पहने हुए था। आप (सल्ल०) ने कहा : क्या इसके पास कोई ऐसी चीज़ नहीं है जिससे यह अपने मैले कपड़े धो ले? (हदीस : मिशकात)

बिखरे हुए और गन्दे बाल रखना शैतानी तरीक़ा है

(276) अल्लाह के रसूल (सल्ल०) मस्जिदे-नबवी में बैठे हुए थे कि इतने में एक आदमी (मस्जिद में) दाख़िल हुआ। जिसके सिर और दाढ़ी के बाल बिखरे हुए थे। आप (सल्ल०) ने अपने हाथ से उसकी ओर इशारा किया, जिसका मतलब यह था कि जाकर अपने सिर और दाढ़ी के बालों को ठीक करो। चुनाँचे वह गया और बालों को ठीक करके लौटा। आप (सल्ल०) ने फ़रमाया : क्या यह बेहतर नहीं है इस बात से कि आदमी के बाल उलझे और बिखरे हुए हों, ऐसा मालूम होता हो मानो शैतान है। (हदीस : मिशकात)

धन होते हुए भी फटे हाल रहना

(277) अबुल अह्वस अपने बाप से रिवायत करते हैं कि उन्होंने (मेरे बाप से) कहा : मैं अल्लाह के रसूल (सल्ल०) की ख़िदमत में इस हाल में हाज़िर हुआ कि मेरे कपड़े बहुत घटिया और मामूली क़िस्म के थे। आप (सल्ल०) ने पूछा : क्या तुम्हारे पास माल है? मैंने कहा : हाँ। आप (सल्ल०) ने पूछा : किस तरह का माल है? मैंने कहा : हर प्रकार का माल अल्लाह ने दे रखा है, ऊँट हैं, गायें और घोड़ें भी हैं, ग़ुलाम भी हैं। आप (सल्ल०) ने कहा : जब अल्लाह ने तुम्हें इतना माल दे रखा है तो उसकी मेहरबानी और एहसान का असर तुम्हारे ऊपर ज़ाहिर होना चाहिए। (हदीस : मिशकात)

व्याख्या : मतलब यह है कि जब अल्लाह ने सब कुछ दे रखा है तो अपनी हैसियत के मुताबिक़ खाओ और पहनो। यह क्या बात हुई कि अपने पास हो तो सब कुछ, मगर सूरत ऐसी बनाए रखे कि घर में कुछ भी नहीं। यहाँ यह बात याद रखने की है कि नबी (सल्ल०) ऐशो-इशरत और भोग-विलास की तालीम नहीं दे रहे हैं बल्कि दरमियानी ज़िन्दगी गुज़ारने की हिदायत दे रहे हैं।

सलाम करने की अहमियत

(278) हज़रत अब्दुल्लाह इब्ने उमर (रज़ि०) ने कहा कि एक व्यक्ति ने अल्लाह के रसूल (सल्ल०) से पूछा : इस्लामी नज़रिए से कौन-सा अमल सबसे ज़्यादा अच्छा है? आप (सल्ल०) ने बताया : ग़रीबों, मिस्कीनों (मुहताज लोगों) को खाना खिलाना और हर व्यक्ति को

सलाम करना, चाहे तुम उसे पहचानते हो या न पहचानते हो।
(हदीस : बुख़ारी, मुस्लिम)

(279) अल्लाह के रसूल (सल्ल०) ने फ़रमाया : तुम जन्नत में नहीं जा सकते जब तक कि तुम सच्चे मुसलमान नहीं बनते, और उस समय तक सच्चे मुसलमान नहीं हो सकते जब तक कि आपस में एक दूसरे से प्रेम न करने लगो। क्या मैं तुम्हें वह गुर न बताऊँ जिसे यदि तुम अपना लो तो आपस में प्रेम करने लगो? सुनो, वह गुर यह है कि आपस में ख़ूब सलाम किया करो। (हदीस : मुस्लिम)

व्याख्या : यानी ईमान और इस्लाम का खुला तक़ाज़ा है कि आपस में मुहब्बत हो और मुहब्बत जगाने का अचूक नुस्ख़ा यह है कि आपस में सलाम को रिवाज दो, शर्त यह है कि लोगों को 'सलाम' के मायने-मफ़हूम का पता हो तथा वे 'अस्सलामु अलैकुम' की रूह को समझते हों।

ज़बान और शर्मगाह की हिफ़ाज़त

(280) अल्लाह के रसूल (सल्ल०) ने फ़रमाया : यदि कोई व्यक्ति अपनी ज़बान और शर्मगाह की गारंटी मुझे दे दे (कि मैं इन दोनों की हिफ़ाज़त करूँगा और इनसे गुनाह न होने दूँगा) तो मैं उसके लिए जन्नत की गारंटी ले लूँगा। (हदीस : बुख़ारी)

व्याख्या : यही दो कमज़ोर चीज़ें हैं, जहाँ से शैतान को हमला करने का अवसर मिलता है और ज़्यादातर गुनाह इन्हीं चीज़ों से होते हैं। यदि किसी ने इन चीज़ों पर पहरा बिठा दिया तो उसके जन्नती होने में क्या शक रहा?

ग़ैर-ज़िम्मेदाराना बातें

(281) अल्लाह के रसूल (सल्ल०) ने फ़रमाया : बन्दा एक बात अपनी ज़बान से कहता है जो ख़ुदा को खुश करनेवाली होती है, वह उसे कोई अहमियत नहीं देता मगर अल्लाह उस बात की वजह से उसके दर्जे बुलन्द कर देता है। इसी प्रकार बन्दा अल्लाह को नाख़ुश करनेवाली एक बात कह जाता है और वह इस बात की कोई परवाह नहीं करता (कि इसका क्या अंजाम होगा) हालाँकि वही बात उसे जहन्नम में ले जाकर गिराती है। (हदीस : बुख़ारी)

व्याख्या : इस हदीस का मतलब यह है कि इंसान अपनी ज़बान को बेलगाम न होने दे, ऐसी बात न बोले जो उसे जहन्नम में ले जानेवाली हो।

इस्लाम की दावत और उससे संबंधित चीज़ें

इस्लाम धर्म क्या है ?

(282) हज़रत मुआविया इब्ने-हैदा क़ुशैरी (रज़ि०) अपने इस्लाम लाने का क़िस्सा बयान करते हुए कहते हैं कि मैं अल्लाह के रसूल (सल्ल०) के पास (मक्का) पहुँचा। मैंने पूछा : अल्लाह ने आपको क्या चीज़ देकर भेजा है ? आप (सल्ल०) ने फ़रमाया : मैं दीन (इस्लाम धर्म) के साथ भेजा गया हूँ। मैंने पूछा : इस्लाम धर्म क्या है और उसकी तालीमात क्या हैं ? आप (सल्ल०) ने फ़रमाया : इस्लाम यह है कि तुम अपने पूरे वुजूद को अल्लाह के हवाले कर दो और अपनी हर चीज़ से दामन झाड़ लो तथा नमाज़ क़ायम करो और ज़कात दो।

(हदीस : अल-इस्तीआब)

व्याख्या : इस घटना का संबंध मक्का के दावती दौर से है। इसमें यह हक़ीक़त वाज़ेह की गई है कि तन-मन-धन के साथ अपनी सारी क़ुव्वतों और क़ाबिलियतों यानी अपनी हर चीज़ को अल्लाह के हवाले करने का नाम इस्लाम है। यह तो एक पहलू हुआ। इसका दूसरा पहलू यह है कि व्यक्ति ख़ुद को, अपने जिस्म और अपनी जान को तथा अपनी सारी ताक़त और सलाहियत को, मतलब यह कि अपनी पूरी ज़िन्दगी को दूसरों के सुपुर्द करने से इंकार कर दे। दूसरे लोगों को अपनी किसी चीज़ में तनिक भी भागीदार न बनाए। दूसरे शब्दों में इसे यूँ समझिए कि अपनी किसी चीज़ को "अपनी" न समझे बल्कि ख़ुदा की अमानत समझे। इसी का दूसरा नाम 'तौहीद' है और तौहीद (एकेश्वरवाद) की ही अमली शक्ल नमाज़ है। नमाज़ क़ायम करने का मतलब यह है कि किसी पहलू से इसमें टेढ़ न रहे, साथ ही अपना माल ख़ुदा के मुहताज बंदों पर ख़र्च करे।

कलिमा-ए-तैयबा (ला इला-ह इल्लल्लाह) की व्यापकता

(283) हज़रत अब्दुल्लाह इब्ने-अब्बास (रज़ि०) से रिवायत है कि अल्लाह के रसूल (सल्ल०) ने अपने चचा से कहा : ऐ चचा ! मैं लोगों से केवल एक 'कलिमा' (बात) मान लेने का मुतालबा करता हूँ। वह कलिमा ऐसा है जिसे यदि ये लोग मान लें तो पूरा अरब देश इनके अधीन हो जाएगा और अन्य देश इन्हें जिज़िया (टैक्स) देंगे। लोग यह

बात सुनकर चौंक पड़े और बोले : तुम एक कलिमे की बात करते हो, हम ऐसे दस कलिमे मानने को तैयार हैं। बताओ, वह कलिमा है क्या? चचा अबू तालिब ने भी यही बात दोहराई : भतीजे ! बताओ, वह क्या कलिमा है?

आप (सल्ल०) ने कहा : वह कलिमा "ला इला-ह इल्लल्लाह" है। (यानी ख़ुदा के सिवा कोई इबादत के लायक़ नहीं है।)

(हदीस : मुसनद अहमद, नसई)

व्याख्या : इस हदीस का संबंध भी मक्का के दावती दौर से है। नबी (सल्ल०) की यह बातचीत उस समय हुई जब क़ुरैश के सरदार अबू तालिब के पास यह उम्मीद लेकर आए थे कि वे अपना व्यक्तिगत प्रभाव और राजनीतिक दबाव डालकर इस नई दावत को बंद करा देंगे। एक ऐसे ही अवसर पर आप (सल्ल०) ने अबू तालिब से कहा था : यदि मेरे दाएँ हाथ में सूरज और बाएँ हाथ में चाँद भी रख दिया जाए तब भी मैं अपनी दावत बंद नहीं कर सकता, जब तक कि अल्लाह इस दावत को ग़ालिब कर दे या मैं इसकी चाह में मर जाऊँ।

सच तो यह है कि तौहीद (एकेश्वरवाद) का यह बोल (ला-इला-ह इल्लल्लाह) सिर्फ़ एक कलिमा नहीं है, बल्कि एकेश्वरवाद (तौहीद) का पूरा विधान (System) इसमें आ गया है जो मानव-जीवन के समस्त पहलुओं को समेट लेता है। यहाँ केवल नमाज़, रोज़ा क़ायम करना ही मक़सद नहीं है बल्कि उसकी बुनियाद पर पूरी सामाजिक व्यवस्था खड़ी करनी है।

इस्लाम दुनिया और आख़िरत की कामयाबी दिलाता है।

(284) हज़रत इब्ने अब्बास (रज़ि०) से रिवायत है कि अल्लाह के रसूल (सल्ल०) ने क़ुरैश के सरदारों की बात सुनकर कहा : जो प्रस्ताव तुम लेकर आए हो, मुझे उसका कोई लालच नहीं है, मैं जो दावत (पैग़ाम) तुम्हारे सामने रख रहा हूँ, उससे मेरा मक़सद यह हरगिज़ नहीं है कि मैं माल जमा करना चाहता हूँ, या इज़्ज़त और बड़ाई चाहता हूँ, या तुमपर शासन या हुकूमत क़ायम करना चाहता हूँ। हक़ीक़त यह है कि मुझे अल्लाह ने तुम्हारे पास नबी बनाकर भेजा है, मुझपर किताब नाज़िल (अवतरित) की है तथा मुझे हुक्म दिया है कि मैं ग़लत जीवन-व्यवस्था के बुरे अंजाम से तुम्हें बाख़बर कर दूँ और जो लोग इसे मान लें, उन्हें मैं कामयाबी की ख़ुशख़बरी दूँ। तो सुन लो ! मैंने अपने रब का संदेश तुमको पहुँचा दिया और ख़ैरख़्वाही के साथ

समझाया। अब यदि तुम मेरी दावत को अपना लो तो यह तुम्हारी ख़ुशनसीबी होगी—इस दुनिया में भी और आख़िरत में भी।

(हदीस : अल-बिदाया वन्निहाया)

व्याख्या : इस हदीस का संबंध भी मक्का के दावती-दौर से है और इसका अंतिम वाक्य बहुत अहम है। यदि नबी (सल्ल०) की दावत केवल इबादत तक सीमित थी और जीवन की सारी समस्याओं और मामलों से इसका कुछ लेना-देना नहीं था, केवल आख़िरत संवारने के लिए थी तो आख़िरत के साथ दुनिया का यह कैसा जोड़ है ?

अल्लाह की बन्दगी की दावत

(285) नबी (सल्ल०) की पाक बीवी हज़रत उम्मे-सलमा (रज़ि०) हबंशा (इथौपिया) में होनेवाली घटना बयान करते हुए कहती हैं कि जाफ़र इब्ने अबी-तालिब मुसलमानों के नुमाइन्दे के रूप में नज्जाशी (हबशा के बादशाह) के दरबार में पहुँचे और उन्होंने इस्लाम का परिचय कराते हुए यह तक़रीर की :

ऐ बादशाह ! हम लोग अज्ञानता और असत्य का जीवन व्यतीत कर रहे थे। (अपने ही हाथों की तराशी हुई) मूर्तियाँ हम पूजते थे, मुर्दार खाते थे, हर प्रकार की बेहयाई और बदकारी करते, रिश्तेदारों के हक़ मारते, पड़ोसियों से बुरा सुलूक करते थे और ताक़तवर कमज़ोर को खा जाता था। इसी हाल में रहते हुए एक लम्बी मुद्दत गुज़र गई। इसी हालत में अल्लाह ने हमारे ही अंदर के एक व्यक्ति को नबी बनाकर हमारे पास भेजा, जिसकी ऊँची नस्ल से, सच्चाई अमानत और ईमानदारी तथा जिसकी नेकचलनी और पाकदामनी से हम भली-भाँति परिचित थे। उसने हमें अल्लाह की ओर बुलाया कि हम सिर्फ़ एक ख़ुदा की बन्दगी करें तथा इन पत्थरों और देवी-देवताओं को छोड़ दें जिनकी हम और हमारे बाप-दादा पूजा कर रहे थे। इस नबी ने हमें सच्ची बात कहने, अमानत में ख़ियानत न करने, रिश्तेदारों का हक़ अदा करने, पड़ोसियों के साथ अच्छा सुलूक करने, हराम (निषिद्ध) कामों से बचने तथा ख़ून-ख़राबा न करने की तालीम दी। उसने हमें बदकारी से, झूठी गवाही देने से, यतीम का माल हड़प करने से और पाकदामन औरतों पर तोहमत (लांछन) लगाने से मना किया। उसने हमें आदेश दिया कि उस एक ख़ुदा की बन्दगी करो जिसका कोई

साझी नहीं। नमाज़ पढ़ो और अल्लाह के मुहताज बन्दों को आर्थिक सहारा दो। (हदीस : मुस्नद-अहमद)

व्याख्या : इस्लामी पैग़ाम का यह किसी हद तक तफ़सीली परिचय है जिसे जाफ़र इब्ने-अबी तालिब ने हबशा के बादशाह नज्जाशी और उसके दरबारियों के सामने पेश किया। यदि इस्लाम की दावत इतनी ही सादा और अनजानी-सी होती तो इतनी तफ़्सील में जाने की ज़रूरत न थी; सिर्फ़ इतना कह देना काफ़ी होता कि हम अपने तौर पर अल्लाह-अल्लाह करने वाले लोग हैं; हमें ज़िन्दगी के दूसरे मामलों से कुछ लेना-देना नहीं है, बिला वजह ही क़ुरैशी सरदार हमारे दुश्मन बन गए हैं। उनके ज़ुल्म-ज़्यादती से तंग आकर हम यहाँ पनाह लेने को मजबूर हुए हैं फिर भी इन लोगों ने पीछा न छोड़ा और यहाँ तक चले आए।

यहाँ यह बात सामने रहे कि हबशा (इथोपिया) देश के ज़्यादातर लोग हज़रत ईसा (अलै०) को ख़ुदा और ख़ुदा का बेटा मानते थे, लेकिन नज्जाशी और कुछ थोड़े से लोग, जो सच्चे ईसाई थे, वे हज़रत ईसा (अलै०) की अस्ल तालीम पर अमल कर रहे थे। नबी (सल्ल०) को यह बात मालूम थी, इसी लिए ईमान लानेवाले इस मज़लूम गिरोह को आप (सल्ल०) ने हबशा चले जाने की सलाह दी।

इस्लाम उम्दा अख़्लाक़ और भले कामों की ओर बुलाता है

(286) हज़रत अली इब्ने-अबी तालिब (रज़ि०) कहते हैं कि मफ़रूक़ शैबानी ने नबी (सल्ल०) से पूछा : ऐ क़ुरैशी! आप किस बात की ओर बुलाते हैं? नबी (सल्ल०) ने फ़रमाया : मैं इस बात की ओर बुलाता हूँ कि लोग इस बात को मान लें कि अल्लाह के सिवा कोई उपास्य (माबूद) नहीं, और यह कि मैं अल्लाह का रसूल हूँ (यानी एक ख़ुदा की बन्दगी और इताअत करें तथा मेरी रहनुमाई में ज़िन्दगी गुज़ारें।) मफ़रूक़ ने पूछा : और किस बात की ओर आप बुलाते हैं? आप (सल्ल०) ने क़ुरआन मजीद की आयतें : "क़ुल तआलौ, अत्लू मा हर्रम अलैकुम रब्बुकुम" से लेकर "लअल्लकुम तत्तक़ून" तक पढ़ीं। मफ़रूक़ ने फिर पूछा : और किस बात की दावत आप देते हैं। आप (सल्ल०) ने "इन्नल्लाह यामुरु बिल्अद्ल. . ." वाली पूरी आयत सुनाई। यह सब सुनकर मफ़रूक़ ने कहा : ख़ुदा की क़सम! आपने उम्दा अख़्लाक़ और भले कामों की ओर बुलाया।

(अल-बिदाया वन्निहाया, खंड 3, पृ० 195)

व्याख्या : इस घटना का संबंध भी मक्का के उस दौर से है जब आप (सल्ल०) लोगों को इस्लाम की ओर बुला रहे थे। हज करने के ज़माने में नबी (सल्ल०) एक काम यह करते थे कि आप अकेले या हज़रत अबू बक्र (रज़ि०) और हज़रत अली (रज़ि०) को साथ लेकर हर क़बीले के पड़ाव पर जाते और उनके सामने इस्लाम का पैग़ाम रखते। किसी साल क़बीला शैबान के लोग हज के लिए आए हुए थे। आप (सल्ल०) हज़रत अबू बक्र (रज़ि०) और हज़रत अली (रज़ि०) को साथ लेकर शैबानी के डेरे पर पहुँच गए। उनके सरदार का नाम मफ़रूक़ था। वह हज़रत अबू बक्र (रज़ि०) से वाक़िफ़ था और उन्हीं के पास बैठा था। शुरूआती बातचीत इन्हीं दोनों के बीच हुई। हज़रत अबू बक्र (रज़ि०) ने मफ़रूक़ और दूसरे लोगों से नबी (सल्ल०) का परिचय कराया। उन्हें बताया कि ये अल्लाह के रसूल हैं जिनकी चर्चा तुमने सुनी होगी। उन लोगों ने कहा : हाँ, हमने इनकी चर्चा सुनी है। इसके बाद मफ़रूक़ ने नबी (सल्ल०) से पूछा : ऐ क़ुरैशी ! आप किस चीज़ की ओर बुलाते हैं? तब आप (सल्ल०) ने क़ुरआन की सूरा 'अल-अनआम' की आयत 151-153 पढ़कर सुनाई। इन आयतों में ख़ालिस तौहीद तथा माँ-बाप के साथ अच्छे सुलूक की तालीम दी गई है। साथ ही ग़रीबी की वजह से औलाद को मारने की मनाही की गई है तथा खुले और छिपे गन्दे कामों से रोका गया है। यतीम के माल को हड़प करने और नाप-तौल में कमी करने से रोका गया है। यह निर्देश भी दिया गया है कि कोई बात कहो तो इंसाफ़ की कहो चाहे उसकी चोट तुम्हारे निकट सगे-संबंधियों पर ही क्यों न पड़ती हो; और यह बात कि अल्लाह से किए गए बन्दगी के वचन को पूरा करो।

देखने की बात यह है कि क़ुरआन की सूरा अल-अनआम मक्का-काल में नाज़िल (अवतरित) हुई है। यही वजह है कि इसमें इस्लाम की बुनियादी तालीम सिमट कर आ गई है। और इसमें अज्ञान-काल की जीवन-व्यवस्था की आलोचना की गई है। उन्हें बताया गया है कि समाज की स्थापना किन बुनियादों पर की जाए, जिससे इंसान को हर प्रकार की सुख, शांति और भलाई हासिल हो जाए। सवाल यह है कि यदि इस्लाम केवल नमाज़ रोज़े तक सीमित होता तो ये तमाम बुनियादी उसूल क्यों बयान किए जाते। जबकि आगे चलकर राजनीतिक व्यवस्था इन्हीं बुनियादी उसूलों पर क़ायम हुई है। ज़्यादा तफ़्सील के लिए क़ुरआन की सूरा बनी इसराईल के तीसरे और चौथे रुकूअ (3 : 21-41) को पढ़ना चाहिए।

दूसरी आयत जो नबी (सल्ल०) ने शैबानियों के सामने पढ़ी, वह क़ुरआन की सूरा 16 अन्-नह्ल की आयत 90 है। इस आयत में इस्लामी दावत के

बुनियादी बिंदुओं को बड़े ही व्यापक रूप में बयान किया गया है। मफ़रूक़ शैबानी ने सोच-विचार के लिए समय माँगा और कहा : आपकी यह दावत, जिसकी ओर आप लोगों को बुला रहे हैं, शायद बादशाहों को पसंद न आएगी।

सवाल यह है कि इस्लामी दावत, व्यक्तिगत रूप में यदि महज़ 'अल्लाह-अल्लाह' करने की दावत है तो बादशाहों और हुकूमत में बैठे लोगों के नज़दीक नापसन्दीदगी की आख़िर क्या वजह हो सकती हैं? मालूम हुआ कि इस्लाम की दावत का मक़सद यह है कि ख़ुदा के निज़ाम से हटकर जो भी निज़ाम है उसे हटाकर ख़ुदा का बेहतरीन निज़ाम क़ायम किया जाए।

(287) हज़रत अम्र इब्ने-अबसा (रज़ि०) कहते हैं कि मैं नबी (सल्ल०) के पास मक्का में आप (सल्ल०) की नुबूवत के शुरूआती दिनों में हाज़िर हुआ। मैंने पूछा : आपका परिचय? आप (सल्ल०) ने कहा : मैं नबी हूँ। मैंने पूछा : नबी क्या होता है? आप (सल्ल०) ने कहा : मुझे ख़ुदा ने भेजा है। मैंने पूछा : क्या चीज़ लेकर आपको ख़ुदा ने भेजा है? आप (सल्ल०) ने बताया : मुझे ख़ुदा ने इसलिए भेजा है ताकि मैं लोगों को रिश्तेदारों का हक़ अदा करने और उनके साथ अच्छा सुलूक करने की तालीम दूँ, मूर्तिपूजा ख़त्म हो और एक ख़ुदा को बिना साझीदार के माबूद माना जाए। (हदीस : मुस्लिम)

ख़ुदा की बंदगी

(288) अल्लाह के रसूल (सल्ल०) ने नजरान के नागरिकों को (जो कि ईसाई थे) यह ख़त लिखा :

"मैं आप लोगों को बंदों की बन्दगी और उनकी पूजा छोड़कर ख़ुदा की बन्दगी और इबादत करने की दावत देता हूँ, साथ ही इस बात की भी दावत देता हूँ कि बन्दों की ग़ुलामी से निकलकर ख़ुदा की ग़ुलामी और उसकी मातहती में आ जाओ।"

(तफ़्सीर इब्ने-कसीर, भाग : 1)

'सिला-रहमी' का मतलब

(289) (हिरक़्ल [हीरोसोदस] ने अबू सुफ़ियान से पूछा :) वे (मुहम्मद सल्ल०) तुम्हें किस बात की तालीम देते हैं? अबू सुफ़ियान ने कहा : वे हमसे कहते हैं कि अल्लाह को माबूद मानो और उसके माबूद होने

में किसी को तनिक भी साझेदार न बनाओ; अपने पूर्वजों और बुज़ुर्गों के ग़लत अक़ीदों और रस्मों को छोड़ो। (मुहम्मद सल्ल०) हमें नमाज़ पढ़ने, सच्चाई अपनाने, पाकदामनी की ज़िन्दगी गुज़ारने और रिश्तेदारों का ख़याल रखने की तालीम देते हैं। (हदीस : बुख़ारी)

व्याख्या : यह एक लम्बी हदीस का अंश है जो 'हदीसे-हिरक़्ल' के नाम से जानी जाती है। इसका ख़ुलासा यह है कि रोम का बादशाह 'हिरक़्ल', 'बैतुल-मक़्दिस' में ठहरा हुआ था। इसी दौरान उसे नबी (सल्ल०) का वह ख़त मिला, जिसमें आप (सल्ल०) ने उसे इस्लाम क़बूल करने की दावत दी थी। तब उसे खोज हुई कि मक्के का कोई नागरिक मिले ताकि उससे कुछ जानकारी हासिल कर सके। इत्तिफ़ाक़ से सीरिया ही में उसे अबू सुफ़ियान और उनके साथी मिल गए, जो व्यापार के लिए यहाँ आए थे। अबू सुफ़ियान अभी ईमान नहीं लाए थे बल्कि इस्लाम के कट्टर विरोधी थे उसने अबू सुफ़ियान से बहुत से सवाल किए। इन्हीं सवालों में से एक वह सवाल भी है जो ऊपर बयान किए अंशों में आया है।

इस हदीस में और इससे पहले कई हदीसों में 'सिला-रहमी' (रिश्तेदारों का ख़याल रखने) की चर्चा हुई है। इस शब्द का प्रयोग बड़े व्यापक अर्थ में हुआ है जिसमें मानव-जाति के सभी लोग आ जाते हैं। 'अबू दाऊद' की एक हदीस में नबी (सल्ल०) का यह कथन मिलता है : मानव-जाति के सारे लोग आपस में भाई-भाई हैं, क्योंकि वे सब एक बाप और माँ (आदम और हव्वा) की औलाद हैं। इसके बाद आप (सल्ल०) ने कहा : मैं इसपर गवाह हूँ और इसका एलान करता हूँ।

इसी हक़ीक़त का एलान हज़रत मुग़ीरा बिन शोबा (रज़ि०) ने ईरानी कमांडर इन-चीफ़ रुस्तम और उसके सैनिक कमांडरों के सामने किया। उन्होंने सबसे पहले ईरानियों की ग़लतफ़हमी दूर की और कहा : हम लोग व्यापारी नहीं हैं, हमारा मक़सद अपने लिए नई मंडियाँ तलाश करना नहीं है, हमारा मक़सद दुनिया नहीं है बल्कि आख़िरत (परलोक) है, और सिर्फ़ आख़िरत ! हम हक़ के अलमबरदार हैं और इसी की ओर लोगों को बुलाना हमारा असल मक़सद है।

यह सुनकर रुस्तम ने कहा : यह सच्चा दीन क्या है ? इसका बारे में बताओ। तब मुग़ीरा (इस्लामी सेना के कमांडर) बोले : हमारे दीन की बुनियाद और उसका मूल मंत्र, जिसके बिना इस दीन का कोई हिस्सा ठीक नहीं होता यह है कि व्यक्ति इस हक़ीक़त का एलान करे कि अल्लाह के अलावा कोई माबूद नहीं और यह कि मुहम्मद (सल्ल०) अल्लाह के रसूल हैं (यानी एकेश्वरवाद [तौहीद] को अपनाए और मुहम्मद (सल्ल०) को अपना रहनुमाँ तस्लीम करे)।

ईरानी कमांडर ने कहा : यह तो बड़ी अच्छी तालीम है। क्या इस दीन की कुछ और भी तालीम है ? हज़रत मुग़ीरा (रज़ि०) बोले : इस दीन की तालीम यह भी है कि इंसानों को इंसान की बंदगी से निकालकर ख़ुदा की बंदगी में लाया जाए।

ईरानी कमांडर ने कहा : यह भी अच्छी तालीम है। क्या तुम्हारा दीन कुछ और भी कहता है ? हज़रत मुग़ीरा (रज़ि०) बोले : हाँ, हमारा दीन यह भी कहता है कि सारे इंसान आदम की औलाद हैं। इस नाते वे सबके सब आपस में भाई हैं—सगे भाई—एक बाप से पैदा !

यह है इस दीन की बुनियादी तालीम जो इस्लामी कमांडर मुग़ीरा (रज़ि०) ने ईरानी कमांडर-इन-चीफ़ के सामने पेश की थी और इसी कमांडर के सामने हज़रत रिब्ई बिन आमिर (रज़ि०) ने अपना मक़सद इस तरह रखा : अल्लाह ने हमें इस काम पर लगाया है कि जिस व्यक्ति पर उसकी मेहरबानी हो जाए उसे हम इंसानों की बंदगी से निकालकर अल्लाह की बन्दगी में लाएँ और तंग और महदूद दुनिया से निकालकर उसे कुशादा दुनिया में लाएँ, साथ ही उसे ज़ालिमाना जीवन व्यवस्थाओं से निकालकर इस्लाम के न्याय और इंसाफ़ की छाया में बसाएँ। यानी अल्लाह ने हमें अपना दीन देकर अपनी मख़्लूक़ के पास भेजा है ताकि लोगों को उसके दीन की ओर बुलाएँ। (अलबिदाया वन्निहाया, भाग 7, पृ० 39)

हमने उपरोक्त पुस्तक से यह लम्बी बात दो बातें के मद्देनज़र लिखी है। एक, इस्लाम में 'सिला-रहमी' यानी रिश्तेदारों का ख़याल रखने का दायरा पूरी मानव-जाति पर फैला हुआ है।

दूसरी अहम बात वह है, जिसका एलान रिब्ई बिन आमिर (रज़ि०) ने किया है, जिसका मतलब यह है कि मुस्लिम उम्मत (विश्व-मुस्लिम समुदाय) का मक़सद यह है कि वह अल्लाह के बन्दों को बंदों की ग़ुलामी से निकाले तथा इस्लाम की न्याय पर आधारित जीवन-व्यवस्था क़ायम करे ताकि ज़ुल्म और नाइंसाफ़ी की सताई हुई दुनिया न्यायपूर्ण व्यवस्था की छाँव में सुख-शान्ति से रह सके।

न्याय और इंसाफ़ की बुनियाद पर आधारित यही वह जीवन-व्यवस्था है जो हज़रत मुहम्मद (सल्ल०) की रहनुमाई में आप (सल्ल०) पर जान न्योछावर करनेवाले सहाबियों (अनुयायियों) की 23 साल की अनथक जिद्दोजुहद के नतीजे में क़ायम हुई थी, जिसे आगे चलकर 'ख़िलाफ़ते-राशिदा' का नाम दिया गया। दूसरे शब्दों में हम इसे 'मानव-जाति की संरक्षक संस्था' (मुहाफ़िज़ इदारा) कह सकते हैं। इस संरक्षक संस्था को नबी (सल्ल०) के इन्तिक़ाल के बाद यह ख़तरा पैदा हुआ कि कहीं इतनी मेहनतों और क़ुरबानियों के बाद यह क़ायम हुआ निज़ाम

छिन्न-भिन्न न हो जाए। इस ख़तरे को भाँपकर हज़रत अबू बक्र सिद्दीक़ (रज़ि०) ने लोगों को इकट्ठा किया। नबी (सल्ल०) के इन्तिक़ाल से लोगों पर निराशा और मायूसी तारी थी कि जब नबी हमारे बीच न रहे तो अब क्या होगा ! इस माहौल में हज़रत अबू बक्र सिद्दीक़ (रज़ि०) ने यह तक़रीर की :

"ऐ लोगो ! जो व्यक्ति मुहम्मद (सल्ल०) को अपना उपास्य (माबूद) बनाए हुए था, उसे पता होना चाहिए कि मुहम्मद (सल्ल०) का इन्तिक़ाल हो गया; और जो व्यक्ति अल्लाह को अपना माबूद बनाए हुए था, उसे समझ लेना चाहिए कि अल्लाह ज़िन्दा है, उसे मौत नहीं आती। अल्लाह अपने दीन की हिफ़ाज़त का तुम्हें हुक्म दे चुका है, तो नबी के इन्तिक़ाल के ग़म में इस दीन की हिफ़ाज़त न छोड़ बैठो। अल्लाह ने यह चाहा कि नबी को तुम्हारे बीच से उठाकर अपने पास बुला ले ताकि उन्हें अपने पास नुबूवत के मिशन के पूरा करने का इनाम दे। (फिर यह देखो कि) अल्लाह ने तुम्हारे बीच अपनी किताब और नबी (सल्ल०) की सुन्नत (तरीक़ा) छोड़ी तो जो व्यक्ति इन दोनों पर अमल करेगा वह भलाई की राह अपनाएगा और जो इन दोनों में फ़र्क़ करेगा वह बुराई का रास्ता अपनाएगा। (याद करो !) अल्लाह ने तुम्हें मुख़ातब करके कहा था : "ऐ ईमान लानेवालो हमारी भेजी हुई न्याय-व्यवस्था (निज़ामे-अद्ल) पर पूरे तौर से जमे रहना।"

सावधान ! नबी के इन्तिक़ाल के ग़म में शैतान तुम्हें उलझा न दे, तुम्हें अपने दीन से हटा न दे। तो तुम शैतान के मुक़ाबले में जल्द से जल्द कोई तदबीर करके उसकी चालों को नाकाम बना दो और उसे अपना काम करने की मोहलत न दो, वरना वह तुमपर हमला कर बैठेगा और तुम्हारे दीनी निज़ाम को चौपट करके रख देगा।

यह है उस निज़ामे-तौहीद (एकेश्वरवादी जीवन-व्यवस्था) की अहमियत और उसकी क़द्रो-क़ीमत जिसे इस उम्मत ने आहिस्ता-आहिस्ता खो दिया। अब जो लोग इस दीनी निज़ाम को ज़िन्दा करना चाहते हैं उनपर चारों ओर से आलोचनाओं की बौछार हो रही है और वे टीका-टिप्पणी का निशाना बने हुए हैं।

इस्लाम की दावत और उससे सम्बन्धित बातें

जमाअत बनाना

(290) नबी (सल्ल०) ने फ़रमाया : जब तीन व्यक्ति सफ़र पर निकलें तो उन्हें चाहिए कि अपने में से किसी को अमीर (नेता) बना लें।

(हदीस : अबू दाऊद)

व्याख्या : शेख़ुल-इस्लाम इब्ने तैमिया (रह०) फ़रमाते हैं कि जब सफ़र की हालत में 'जमाअत' बनना लोगों के लिए ज़रूरी ठहराया गया है तो यह बात तो और भी ज़्यादा ज़रूरी है कि ईमानवाले एक जमाअत बनकर रहें जबकि उनका जमाअती निज़ाम छिन्न-भिन्न हो गया हो। मुसलमानों के लिए जायज़ नहीं कि वे व्यक्तिगत रूप में अलग-अलग ज़िन्दगी गुज़ारें।

(291) हज़रत अब्दुल्लाह इब्ने उमर (रज़ि०) कहते हैं कि नबी (सल्ल०) ने फ़रमाया : तीन व्यक्ति जो किसी रेगिस्तान या जंगल में रहते हों, जब तक वे अपने में से किसी को मुखिया (अमीर) न चुन लें, उनके लिए वहाँ रहना जायज़ नहीं। (हदीस : अल-मुंतक़ा)

(292) अल्लाह के रसूल (सल्ल०) ने फ़रमाया : मैं तुम्हें पाँच बातों का हुक्म देता हूँ : जमाअत (संगठन) बनाने का, सुनने का, मानने का, हिजरत का और जिहाद का। (हदीस : तिरमिज़ी, मुस्नद अहमद)

व्याख्या : नबी (सल्ल०) अपनी उम्मत को पाँच बातों का आदेश दे रहे हैं : (1) जमाअती ज़िन्दगी गुज़ारो (2) जमाअत के ज़िम्मेदारों की बात ध्यान से सुनो (3) और उनकी बात पर अमल करो (4) हिजरत यानी दीन की माँग यह हो कि अपना वतन/देश छोड़ दो, तो वतन की मुहब्बत पर कैंची चला दो। जो ताल्लुक़ भी दीन की राह में रोड़ा बने, उसे तोड़ दो (5) जिहाद—यानी अल्लाह के बताए हुए मार्ग में अपनी सारी कोशिश झोंक दो। दीन को ज़िन्दा और ताक़तवर बनाने के लिए पूरा ज़ोर लगा दो। जैसा अवसर हो और जो साधन भी उपलब्ध हों, उनसे काम लो।

हदीस में 'अल-जमाअः' शब्द आया है। इससे मुराद वह हालत है जब ताक़त

इस्लाम के हाथ में हो और एक 'अमीर' (नेता) पर मुसलमान सहमत हों। अगर यह हालत न हो तो मुस्लिम उम्मत क्या करे? यह बहुत अहम सवाल है। इसका जवाब यह है कि जमाअती ज़िन्दगी गुज़ारो और मिल जुलकर ऐसी जमाअत तैयार करो और ऐसे ढंग से इस्लाम की दावत का काम करो कि 'अल-जमाअः' (सारे मुसलमानों की एक जमाअत जो सही मायनों में सब की जमाअत हो) वुजूद में आ जाए। अल्लाह की मेहरबानी के बिना कोई काम सफल और कोई कोशिश कामयाब नहीं होती। और यह नेमत भी ख़ुदा से चिमटे बग़ैर नहीं मिलती!!!

इज्तिमा, इज्तिमाई काम और उसका अंजाम

(293) अम्र इब्ने अबसा (रज़ि०) कहते हैं कि मैंने अल्लाह के रसूल (सल्ल०) को यह फ़रमाते सुना : क़ियामत के दिन मेहरबान ख़ुदा के दायीं ओर कुछ ऐसे व्यक्ति होंगे जो न तो नबी हैं और न शहीद; मगर उनके चहरों का नूर देखनेवालों की नज़र को चकाचौंध करता होगा। उनका मक़ाम और दर्जा देखकर नबी और शहीद लोग बेहद ख़ुश हो रहे होंगे। लोगों ने पूछा : ये कौन लोग होंगे ऐ अल्लाह के रसूल! आप (सल्ल०) ने फ़रमाया : ये अनेक क़बीलों और बस्तियों के लोग होंगे जो 'अल्लाह के ज़िक्र' (स्मरण) के लिए दुनिया में इकट्ठे होते थे, उसका ज़िक्र करने के लिए पाकीज़ा और उम्दा कलाम चुनते थे, जिस तरह खजूर खानेवाला उम्दा और लज़ीज़ खजूरों को चुनता है।

(हदीस : अल-मुंज़िरी)

व्याख्या : इस हदीस में उन लोगों के लिए बहुत बड़ी ख़ुशख़बरी है जो अलग-अलग बस्तियों और इलाक़ों के रहनवाले हैं, लेकिन इस्लाम और इस्लाम की दावत ने उन्हें इकट्ठा कर दिया है। वे सब मिलकर नमाज़, विर्द-वज़ीफ़ा और क़ुरआन पढ़ने-पढ़ाने तथा इस्लाम का संदेश दूसरों तक पहुँचाने की सरगर्मियों में इज्तिमाई तौर पर मशग़ूल होते हैं।

इस हदीस में 'ज़िक्रुल्लाह' शब्द आया है जिसका मतलब है अल्लाह की याद मगर यह शब्द क़ुरआन और हदीस में बड़े व्यापक अर्थों में इस्तेमाल हुआ है। इससे क़ुरआन का पढ़ना, नमाज़ में तल्लीन होना, विर्द-वज़ीफ़े पढ़ना और इस्लाम की तब्लीग़ में लगना—सभी कुछ मुराद है।

अमीरे-जमाअत की ज़िम्मेदारी

(294) अल्लाह के रसूल (सल्ल०) ने फ़रमाया : तुममें हर शख़्स मुहाफ़िज़ (रक्षक) और निगराँ है तथा उससे उन लोगों के बारे में पूछगछ होगी जो उसकी निगरानी में हैं; तो अमीर, जो लोगों का निगराँ है, उससे उन लोगों के बारे में पूछगछ होगी जो उसके मातहत थे।

(हदीस : बुख़ारी)

(295) हज़रत माक़िल बिन यसार (रज़ि०) कहते हैं कि मैने सुना, नबी (सल्ल०) कह रहे थे कि जिस किसी व्यक्ति ने मुसलमानों के इज्तिमाई मामलों की कोई ज़िम्मेदारी क़बूल की और उनके साथ ख़ैरख़ाही नहीं की और न उनके काम को पूरा करने के लिए कोशिश की, जैसे अपनी भलाई को सामने रखता है और जिस तरह अपने निजी कामों में पूरी कोशिश करता है, तो अल्लाह ऐसे ज़िम्मेदार को मुँह के बल जहन्नम में ढकेल देगा।

(इमाम अबू यूसुफ़ किताबुल-ख़िराज)

भाई-भतीजावाद

(296) हज़रत यज़ीद इब्ने अबू सुफ़ियान (रज़ि०) कहते हैं : हज़रत अबू बक्र (रज़ि०) ने मुझे सेनापति बनाकर सीरिया की ओर रवाना किया। इस मौक़े पर उन्होंने मुझे यह नसीहत की :

ऐ यज़ीद ! (वहाँ) तुम्हारे कुछ रिश्तेदार हैं; हो सकता है, तुम उन्हें ज़िम्मेदारी सौंपने में दूसरों के मुक़ाबले तरजीह दो; यह तुम्हारे बारे में बड़ा अंदेशा है जो मुझे लग रहा है। सुनो ! अल्लाह के रसूल (सल्ल०) ने फ़रमाया है : जो व्यक्ति मुसलमानों के सामूहिक मामलों का ज़िम्मेदार हो और वह किसी को सिर्फ़ रिश्तेदारी या दोस्ती की बुनियाद पर मुसलमानों का अधिकारी बना दे तो उसपर अल्लाह की फिटकार होगी; उसकी ओर से वह कोई फ़िदिया क़बूल न करेगा और आख़िरकार उसे जहन्नम में डाल देगा।

(इमाम अबू यूसुफ़ —किताबुल-ख़िराज)

अमीर अपने आप पर दूसरों को तरजीह दे

(297) असमा बिन्त उमैस (रज़ि०) कहती हैं कि हज़रत अबू बक्र (रज़ि०) ने हज़रत उमर (रज़ि०) से फ़रमाया : ऐ उमर ! मैंने जनता के साथ तुम्हारी हमदर्दी को देखते हुए तुम्हें ख़लीफ़ा बनाया है। तुम अल्लाह के रसूल (सल्ल०) के साथ रह चुके हो। तुम देख चुके हो कि नबी (सल्ल०) किस प्रकार हमें अपने आप पर और हमारे घरवालों को अपने घरवालों पर तरजीह देते थे। हालत यह थी कि हमको जो कुछ आपकी ओर से मिलता, वह इतना ज़्यादा होता कि हम उसे नबी (सल्ल०) के घर बतौर तोहफ़ा भेजा करते थे।

(इमाम अबू यूसुफ़—किताबुल-ख़िराज)

सहनशील अमीर

(298) अमीरुल-मोमिनीन हज़रत उमर इब्ने ख़त्ताब (रज़ि०) ने जनता और हुकूमत के अधिकारियों के एक साझे इज्तिमा में बयान देते हुए कहा : ऐ लोगो ! तुमपर हमारा यह हक़ बनता है कि पीठ पीछे हमारी भलाई चाहो, भलाई कें कामों में हमारी मदद करो। (फिर बोले :)

ऐ हुकूमत चलानेवाले अधिकारियो ! अधिकारी की सहनशीलता और नरमी से ज़्यादा फ़ायदेमंद कोई सहनशीलता और नरमी नहीं। इसी प्रकार अमीर (अधिकारी) की भावुकता (जज़्बातियत) और फूहड़पन/बेढंगेपन से ज़्यादा नुक़्सानदेह अल्लाह के नज़दीक कोई भावुकता और बेढंगापन नहीं।

(इमाम अबू यूसुफ़ —किताबुल-ख़िराज)

मातहत लोगों की ज़िम्मेदारी

(299) अल्लाह के रसूल (सल्ल०) ने फ़रमाया : अमीरे-जमाअत की बात को ध्यान से सुनना और उसपर अमल करना ज़रूरी है चाहे वह अच्छा लगे या बुरा, शर्त यह है कि वह गुनाह न हो; लेकिन अगर वह हुक्म शरीअत के ख़िलाफ़ हो तो फिर उसे न सुनो, न मानो।

(हदीस : बुख़ारी, मुस्लिम)

(300) हज़रत तमीम दारी (रज़ि०) से रिवायत है कि नबी (सल्ल०) ने फ़रमाया : 'दीन' नाम है वफ़ादारी और ख़ैरख़ाही का। यह बात आप

(सल्ल०) ने तीन बार दोहराई। हमने पूछा : किससे वफ़ादारी और किसकी ख़ैरख़ाही ? आप (सल्ल०) ने फ़रमाया : अल्लाह से, रसूल से, अल्लाह की किताब से, मुस्लिमों की इज्तिमाई कामों के अधिकारियों से और आम मुसलमानों से। (हदीस : मुस्लिम)

व्याख्या : अरबी भाषा में 'नसीहत' शब्द ख़ियानत, बेईमानी, खोट और मिलावट के विलोम के रूप में प्रयोग होता है जिसका तर्जुमा निष्ठापूर्ण वफ़ादारी तथा निष्ठापूर्ण ख़ैरखाही से किया जाता है। अल्लाह के लिए निष्ठापूर्ण वफ़ादारी का मतलब तो एकदम स्पष्ट है, जिसे 'अल्लाह पर ईमान' शीर्षक के अंतर्गत हम बयान कर चुके हैं। इसी प्रकार 'किताब' और 'रसूल' से निष्ठापूर्ण वफ़ादारी का मतलब 'क़ुरआन और नबी (सल्ल०) पर ईमान' शीर्षक के अंतर्गत इससे पहले बयान किया जा चुका है। 'आम मुसलमानों के साथ ख़ैरख़ाही' का क्या मतलब है—इसके लिए 'मुसलमानों का हक़' शीर्षक देखना चाहिए। रही बात 'मुसलमानों के इज्जिमाई कामों के अधिकारियों के साथ ख़ैरख़ाही' तो इसका मतलब यह है कि उनके साथ मुहब्बत का ताल्लुक़ हो; यदि वे हुक्म दें तो पूरी वफ़ादारी के साथ उनका पालन होना चाहिए, इस्लाम की दावत और संगठन संबंधी कामों में ख़ुशी-ख़ुशी सहयोग देना चाहिए, आपके ख़याल में यदि वे किसी ग़लत दिशा में जा रहे हों तो प्यार भरे अंदाज़ में उन्हें बताना चाहिए। यदि कोई नहीं बताता तो इसका मतलब यह हुआ कि वह अपनी जमाअत के साथ विश्वासघात और ख़ियानत कर रहा है और वह अपनी जमाअत के ज़िम्मेदार का ख़ैरख़ाह नहीं है। लेकिन ऐसा उसी समय हो सकता है जब जमाअत के पदाधिकारी निष्ठापूर्ण आलोचना सहन करें; न सिर्फ़ सहन करें बल्कि लोगों को यह आभास दें कि उनका ज़िम्मेदार ग़लती पर टोकने को पसंद करता है। हाँ, बेतुके ढंग से आलोचना नहीं होनी चाहिए और जहाँ तक हो सके, आलोचना एकांत में होनी चाहिए। यहाँ हम इतिहास से हज़रत उमर (रज़ि०) के दो नमूने पेश करना चाहेंगे, जिनसे उपरोक्त आशय की और अधिक पुष्टि हो जाएगी। पहला नमूना यह है कि हज़रत उमर (रज़ि०) को किसी व्यक्ति ने किसी बात पर टोका तो मजलिस में से किसी ने टोकनेवाले को दबाना या चुप करना चाहा। हज़रत उमर (रज़ि०) ने कहा : उसे कह लेने दो, यदि लोग हमसे इस तरह की बातें न करें तो फिर उनमें कोई भलाई नहीं; और अगर हम इस प्रकार की ख़ैरख़ाही को क़बूल न करें तो हमारे अंदर कोई भलाई नहीं। (इमाम अबू यूसुफ़—किताबुल-ख़िराज)

दूसरा नमूना वह ख़त है, जो हज़रत उमर (रज़ि० के ख़लीफ़ा बनने के बाद

अबू उबैदा (रज़ि०) और मुआज़ इब्ने जबल (रज़ि०) ने उन्हें साझे रूप में लिखा। इस ख़त के एक-एक शब्द से ख़ैरख़ाही टपकती है। फिर हज़रत उमर (रज़ि०) ने जो जवाब दिया उससे यह स्पष्ट होता है कि जमाअत के मुखिया (अमीर) को कैसा होना चाहिए। इन दोनों ख़तों का तर्जुमा यहाँ दिया जा रहा है : (मूल अरबी पाठ के लिए अरबी पत्रिका 'अल-मुस्लिमून' फ़रवरी 1954 ई० देखना चाहिए।)

"यह ख़त अबू उबैदा इब्ने जर्राह और मुआज़ इब्ने जबल की ओर से अमीरुल मोमिनीन उमर इब्ने ख़त्ताब के नाम है।

आप पर सलामती हो !

हमने आपको इस हाल में देखा है कि आप अपने व्यक्तिगत जीवन में सुधार और अपनी तरबियत के लिए फ़िक्रमंद रहा करते थे; और अब तो आप पर पूरी मुस्लिम उम्मत की तरबियत और निगरानी का भार आ पड़ा है। ऐ अमीरुल मोमिनीन ! आपकी मजलिस में ऊँचे दर्जे के लोग बैठेंगे और निचले दर्जे के लोग भी; दुश्मन भी आपके पास आएँगे और दोस्त भी। न्याय पाने का हक़ हरेक को है; तो आपको सोचना है कि आप कैसा रवैया अपनाएँ। हम आपको उस दिन से डराते हैं जब सारे लोग सर्वशक्तिमान ख़ुदा के सामने सिर झुकाए खड़े होंगे, दिल ख़ौफ़ से काँप रहे होंगे और सर्वशक्तिमान, प्रभुत्वशाली ख़ुदा के सामने सबकी दलीलें धरी रह जाएँगी। उस दिन सारे लोग मजबूर और बेबस होंगे और आख़िरकार उसकी रहमत की आस लगाए और उसके अज़ाब से डर रहे होंगे।

हमारे सामने यह हदीस रखी गई है कि इस उम्मत (समुदाय) के लोग आख़िर ज़माने में देखने में एक-दूसरे के दोस्त होंगे मगर अंदर-अंदर वे एक-दूसरे के दुश्मन होंगे। हम इस बात से अल्लाह की पनाह माँगते हैं कि आप हमारे इस ख़त को वह हैसियत न दें जो वाक़ई उसकी हैसियत है। हमने यह ख़त निष्ठा के भाव से ख़ैरख़ाही के साथ लिखा है। वस्सलामुअलैक

जब यह ख़त अमीरुल-मोमिनीन हज़रत उमर (रज़ि०) के पास पहुँचा तो उन्होंने उसका यह जवाब दिया :

उमर इब्ने ख़त्ताब की ओर से अबू उबैदा और मुआज़ के नाम।

तुम दोनों पर ख़ुदा की सलामती हो। तुम दोनों का साझा-ख़त मिला, जिसमें लिखा है कि अब से पहले मैं केवल अपने व्यक्तिगत सुधार के लिए फ़िक्रमंद रहता था, मगर अब तो पूरी जनता की निगरानी और हिफ़ाज़त का भार मेरे ऊपर आ पड़ा है। मेरे सामने ऊँचे दर्जे के लोग बैठेंगे और निचले दर्जे के लोग भी; दोस्त भी मेरे सामने आएँगे और दुश्मन भी, और प्रत्येक व्यक्ति इस बात का

अधिकारी है कि उसके साथ न्याय किया जाए। आगे तुमने लिखा है कि 'ऐ उमर ! विचार करो, ऐसी हालत में क्या करोगे?' मैं इसके जवाब में और क्या कहूँ कि उमर के पास न तो कोई उपाय है और न ताक़त। अगर उसे ताक़त मिल सकती है तो केवल अल्लाह की ओर से मिल सकती है। फिर आप दोनों ने उस अंजाम से मुझे डराया है जिससे हमारे पूर्वज (बुज़ुर्ग) डराए गए थे। यह दिन-रात का चक्कर जो हमारे जीवन का अभिन्न अंग है, उस चीज़ से हमें लगातार क़रीब किए जा रहा है जो दूर है और यह हर नई चीज़ को जर्जर किए जा रहा है, साथ ही हर उस चीज़ को सामने ला रहा है जिसका वादा किया गया है। ऐसे ही एक दिन यह संसार अपनी उम्र पर पहुँचकर ख़त्म हो जाएगा और आख़िरत सामने होगी, जिसमें प्रत्येक व्यक्ति (अपने-अपने कामों के मुताबिक़) जन्नत या जहन्नम में पहुँच जाएगा। फिर तुमने उस हदीस को भी लिखा है कि इस उम्मत के लोग आख़िरी ज़माने में देखने में एक-दूसरे के दोस्त होंगे मगर अंदर-अंदर एक दूसरे के दुश्मन होंगे। अत: याद रखो, तुम वे लोग नहीं हो जिनके बारे में यह ख़बर दी गई है; और न यह वह ज़माना है जब मुनाफ़िक़त (कपटाचार, दोमुँहापन) ज़ाहिर होगी। वह तो वह ज़माना होगा जब लोग अपने दुनियावी फ़ायदों के लिए एक दूसरे से मुहब्बत करेंगे और अपने दुनियावी फ़ायदों को बचाने के लिए एक दूसरे से डरेंगे। फिर तुमने यह भी लिखा है कि 'ख़ुदा की पनाह ! मैं तुम्हारे ख़त से कोई ग़लत मतलब निकालूँ।' बेशक, तुम सच कहते हो, तुमने निष्ठापूर्वक भलाई के जज़्बे से यह ख़त लिखा है। आगे भी ख़त लिखना बंद न करना, मैं आप दोनों के सुझावों से बेनियाज़ नहीं हो सकता। वस्सलाम।

इस्लाम की दावत के अहम उसूल

(301) हज़रत अब्दुल्लाह इब्ने मसऊद (रज़ि०) हर जुमेरात (बृहस्पति) के दिन लोगों को नसीहत किया करते थे। एक व्यक्ति ने उनसे कहा : ऐ अबू अब्दुर्रहमान ! मेरी इच्छा है कि आप रोज़ाना नसीहत किया करें। उन्होंने कहा: रोज़-रोज़ तक़रीर करने से जो चीज़ मुझे रोकती है वह यह अन्देशा है कि तुम लोग उकता जाओगे। मैं जान-बूझकर नाग़ा देकर नसीहत करता हूँ, क्योंकि ख़ुद नबी (सल्ल०) भी हमें नाग़ा देकर नसीहत किया करते थे कि कहीं हम लोग उकता न जाएँ।

(हदीस : बुख़ारी, मुस्लिम)

व्याख्या : अल्लाह के रसूल (सल्ल०) और हज़रत अब्दुल्लाह बिन मसऊद (रज़ि०) के अमल से जो बात साबित होती है वह यह है कि इस्लाम की तबलीग़

लोगों के सिर पर सवार होकर नहीं करनी चाहिए बल्कि हालात पर नज़र रखनी चाहिए, लोग सुनने का मन बना चुके हों, तब अपनी बात कहनी चाहिए। और अधिक व्याख्या आगे आनेवाली हदीसों से हो रही है।

(302) हज़रत अब्दुल्लाह इब्ने अब्बास (रज़ि०) ने अपने शागिर्द इकरमा को यह नसीहत की :

हर हफ़्ते एक बार जुमे के दिन नसीहत करो। दो बार भी कर सकते हो; मगर हफ़्ते में तीन बार से ज़्यादा नसीहत मत करना। सावधान ! बार-बार नसीहत करके लोगों को क़ुरआन से न बिदकाना; और ऐसा कभी न हो कि तुम लोगों के पास पहुँचो और वे अपनी किसी बातचीत में मशग़ूल हों और तुम उनकी बात काटकर नसीहत करना शुरू कर दो। यदि ऐसा करोगे तो वे नसीहत और उपदेश से बिदक जाएँगे। बल्कि ऐसे अवसरों पर चुप ही रहा करो। हाँ, जब उन्हें नसीहत सुनने की चाह हो और वे तुमसे इसके लिए कहें तो अपनी बात कहो।

हाँ, देखो। दुआ करते वक़्त शब्द बना बनाकर बोलने से बचना क्योंकि मैंने नबी (सल्ल०) और आपके साथियों को देखा है कि वे तकल्लुफ़ (बनावट) के साथ इबारतें बना-बनाकर दुआ नहीं माँगते थे।

(हदीस : बुख़ारी)

व्याख्या : एक अन्य हदीस में है कि नबी (सल्ल०) ने फ़रमाया : ऐसा ढंग न अपनाओ कि अल्लाह की बन्दगी से लोग नफ़रत करने लगें।

(303) हज़रत अली (रज़ि०) ने फ़रमाया : मन की कुछ अभिरुचियाँ और रुझान होते हैं, कभी वे बात सुनने के लिए तैयार होते हैं और कभी नहीं। उनके मन में बात उतर जाए, इसके लिए उनकी रुचियों और रुझानों का ध्यान रखो। उस वक़्त अपनी बात कहो जब वे सुनने के लिए तैयार हों। क्योंकि ज़ोर-ज़बरदस्ती करके अपनी बात सुनाने पर दिल उसे मानने से इंकार कर देता है तथा उसे समझने की ताक़त खो बैठता है। (इमाम अबू यूसुफ़—किताबुल-ख़िराज)

(304) नबी (सल्ल०) का यह तरीक़ा था कि जब आप कोई बात कहते तो उसे तीन बार दोहराते ताकि वह समझ ली जाए।

(हदीस : बुख़ारी)

व्याख्या : हर ज़बान में बात करने और तक़रीर करने का ढंग होता है। असल मक़सद तो मन में बात बिठाना होता है। जहाँ ज़रूरत समझें, अपनी बात दो बार, तीन बार अंदाज़ बदल-बदल कर कहें; बिना ज़रूरत हर बात को दोहराना बेतुकापन है। सुननेवालों की सलाहियत को ध्यान में रखकर ज़बान और बयान का चयन करें। अनपढ़ लोगों और कम पढ़े लोगों के सामने मुश्किल ज़बान का इस्तेमाल करने और फ़लस्फ़ियाना (दार्शनिक) बारीक बातें बयान करने से इस्लामी दावत का काम बे असर हो जाता है। नबी (सल्ल०) के बारे में हज़रत आइशा (रज़ि०) कहती हैं : आप (सल्ल०) की तक़रीर साफ़ और वाज़ेह होती थी; जो सुनता था, समझ जाता था।

दीन में आसानियाँ

(305) जब ज़कात अदा करनी फ़र्ज़ हो गई और नबी (सल्ल०) को ख़ुदा की ओर से हुक्म हुआ कि वे लोगों से ज़कात की उगाही करें तो आप (सल्ल०) ने ज़कात उगाहने के लिए एक व्यक्ति को मुक़र्रर किया और उसे हिदायत की कि ज़कात की मद में लोगों के बेहतरीन माल न लेना। बूढ़ी ऊँटनियाँ, कम उम्र ऊँटनियाँ जिनके अभी बच्चे न हुए हों, और ऐबदार ऊँटनियाँ लेना। अतः ज़कात वुसूलनेवाला गया और नबी (सल्ल०) की हिदायत के मुताबिक़ मवेशी लेता रहा। जब वह एक देहाती के पास पहुँचा और उसे बताया कि अल्लाह ने अपने रसूल को सदक़ा (ज़कात) उगाहने का हुक्म दिया है ताकि उसके ज़रिए अख़्लाक़ी गंदगी दूर हो, ईमान में तरक़्क़ी हो और किरदार पाकीज़ा बने। उसने कहा : जाओ, अल्लाह का हक़ ले लो। तहसीलदार गया और नबी (सल्ल०) की हिदायत के मुताबिक़ उसने मवेशी ले लिए। उसने कहा : मेरे मवेशियों में अल्लाह का हक़ वुसूल करने के लिए तुमसे पहले कोई नहीं आया, और तुमने छाँटकर ख़राब मवेशी अल्लाह के लिए वुसूल किए। यह नहीं चलेगा, ख़ुदा की क़सम ! तुम्हें उम्दा मवेशी छाँटकर लेने होंगे। भला ख़ुदा को ख़राब मवेशी कैसे दिए जाएँगे। (इमाम अबू यूसुफ़, किताबुल-ख़िराज)

व्याख्या : अगर नबी (सल्ल०) पहले ही दिन से उम्दा माल ज़कात की मद में वुसूल करते तो बहुत मुमकिन था कि लोग बग़ावत कर देते; लेकिन आहिस्ता-आहिस्ता तालीम व तरबियत देने का नतीजा यह हुआ कि ईमान ने

दिलो-दिमाग़ में अपनी जड़ें गहरी जमा लीं। तब जाकर मदीने से दूर देहात के बाशिंदों की यह हालत हो गई कि उम्दा माल उगाहने के लिए तहसीलदार से ज़िद करने लगे।

समझदारी की बात

(306) बेहतरीन आलिम वह है जो लोगों को (अपनी तक़रीर और तहरीर में) अल्लाह की रहमत से मायूस नहीं करता, न ही अल्लाह की नाफ़रमानी पर उन्हें ढीठ और बेबाक बनाता है, और न अल्लाह की पकड़ से निडर बनाता है। (इमाम अबू यूसुफ़—किताबुल-ख़िराज)

व्याख्या : मतलब यह है कि ऐसे अन्दाज़ में नसीहत करनी सही नहीं है जिसकी वजह से लोग अल्लाह की रहमत से मायूस हो जाएँ, न यह सही है कि लोगों को अल्लाह के मेहरबान और माफ़ करनेवाला होने तथा मुहम्मद (सल्ल०) की सिफ़ारिश का ग़लत मतलब बताकर अल्लाह की नाफ़रमानी के लिए खुला छोड़ दिया जाए। सही तरीक़ा यह है कि दोनों पहलू सामने लाए जाएँ ताकि नजात और अल्लाह की रहमत से मायूसी न हो, न ही अल्लाह की नाफ़रमानी करने में लोग ढीठ ओर बेबाक हो जाएँ।

कथनी और करनी में समानता

(307) हज़रत अब्दुल्लाह इब्ने मसऊद (रज़ि०) ने फ़रमाया : अल्लाह की फिटकार हो उन औरतों पर जो गोदने गोदती हैं, और उनपर भी जो गोदना गोदवाती हैं, और उन औरतों पर जो फ़ैशन के लिए बाल कटवाती हैं, ख़ूबसूरती बढ़ाने के लिए दाँतों के बीच दूरी पैदा करती हैं और अल्लाह की बनाई हुई जिसमानी बनावट को बिगाड़ती हैं।

हज़रत अब्दुल्लाह इब्ने मसऊद (रज़ि०) की इस बात की ख़बर एक परदानशीन औरत उम्मे-याक़ूब को हुई तो वे उनके पास आईं और कहा : मुझे पता चला है कि आपने यह और यह कहा है, (मतलब यह कि फ़्लाँ-फ़्लाँ काम करनेवाली औरतों पर फिटकार की है?) हज़रत अब्दुल्लाह इब्ने मसऊद (रज़ि०) बोले : मैं क्यों न उन औरतों पर फिटकार करूँ, जिन्हें अल्लाह के रसूल (सल्ल०) ने अल्लाह की किताब में फिटकारा है? उम्मे-याक़ूब ने कहा : मैं पूरा क़ुरआन पढ़ती हूँ, मुझे तो क़ुरआन में इस तरह की कोई बात नहीं मिली। इब्ने-मसऊद बोले : यदि तुम ध्यान से पढ़तीं तो क़ुरआन में यह बात

तुम्हें ज़रूर मिलती। क्या तुमने क़ुरआन में यह आयत नहीं पढ़ी : मा आताकुमुर्रसूलु . . . (रसूल जो कुछ तुम्हें दे उसे लो और जिस चीज़ से मना करे उससे रुक जाओ।) उम्मे-याक़ूब ने कहा : हाँ, यह आयत मैंने पढ़ी है। इब्ने-मसऊद (रज़ि०) बोले : जो बातें मैंने कही हैं, नबी (सल्ल०) ने उनसे मना किया है—यह बात तुम्हें नोट कर लेनी चाहिए। उम्मे-याकूब ने कहा : मेरा ख़याल है कि आपकी बीवी भी ऐसे काम करती है? उन्होंने कहा : अन्दर जाओ, देख आओ। वे अंदर गईं और फिर आकर उन्हें बताया : मेरा सोचना ग़लत था, आपकी बीवी ये सब काम नहीं करतीं। इब्ने-मसऊद ने कहा : यदि मेरी बीवी यह सब काम करती तो वह मेरे साथ नहीं रह सकती थी।

एक अन्य रिवायत में यह बात कुछ इस तरह आई है :

उम्मे-याक़ूब ने (घर के अंदर से) आकर बताया : आपकी बीवी इस प्रकार की साज-सज्जा (मेकअप) से दूर है, तो अब्दुल्लाह इब्ने मसऊद ने कहा : क्या तुम्हें अल्लाह के उस नेक बन्दे शुऐब (अलैहि०) की बात याद नहीं, जो उन्होंने अपनी क़ौम से कही थी? यानी "मैं तुम्हें नाप-तोल में कमी करने से रोकता हूँ तो ऐसा नहीं है कि तुम्हें तो ऐसा करने से मना करूँ और ख़ुद वही काम करने लगूँ।" (सूरा हूद : 11/88) (हदीस : मुसनद अहमद)

दावत की शुरूआत अपने से

(308) एक व्यक्ति ने हज़रत अब्दुल्लाह इब्ने अब्बास (रज़ि०) से कहा : मैं इस्लाम की दावत और तबलीग़ का काम करना चाहता हूँ। लोगों को भलाई की सीख दूँगा और बुराई से रोकूँगा। उन्होंने पूछा : क्या तुमने यह मक़ाम हासिल कर लिया है? उसने कहा : हाँ, उम्मीद तो है। हज़रत इब्ने अब्बास (रज़ि०) ने कहा : यदि यह अंदेशा न हो कि क़ुरआन की तीन आयतें तुम्हें रुसवा कर देंगी तो ज़रूर इस्लाम की दावत का काम करो। उसने पूछा : वे आयतें क्या हैं? इब्ने अब्बास (रज़ि०) ने कहा : पहली आयत यह है : "क्या तुम लोगों को नेकी की नसीहत करते हो और ख़ुद को भूल जाते हो?" (सूरा अलबक़रा : 2/44) बताओ, क्या इसपर अच्छी तरह अमल कर लिया है? उसने कहा : नहीं।

इब्ने-अब्बास (रज़ि०) ने कहा : दूसरी आयत यह है : "तुम वह बात क्यों कहते हो जिस पर ख़ुद अमल नहीं करते ?" (सूरा अस्सफ़ : 61/2) बताओ, क्या इसपर अच्छी तरह अमल कर लिया है ? उसने कहा : नहीं।

हज़रत इब्ने अब्बास (रज़ि०) ने कहा : तीसरी बात वह है जो शुऐब (अलैहि०) ने अपनी क़ौम के लोगों से कही थी : "जिन बुरी बातों से मैं तुम्हें रोकता हूँ, तो मेरा इरादा यह बिलकुल नहीं कि तुम्हें उससे रोककर ख़ुद आगे बढ़ूँ और बुरे काम करने लगूँ।" (सूरा हूद : 11/88) इब्ने-अब्बास (रज़ि०) ने फ़ौरन पूछा : बताओ, क्या इसपर अच्छी तरह अमल कर लिया है ? उसने कहा : नहीं। इसपर इब्ने-अब्बास (रज़ि०) ने कहा : जाओ, दावतो-इस्लाह (प्रचार व समाज-सुधार) के काम की शुरूआत अपने आप से करो।

(ख़ुल्कुल-मुस्लिम)

व्याख्या : यह व्यक्ति अपने सुधार की ओर से बेफ़िक्र और दूसरों को नसीहत करने का "शौक़ीन" था। हज़रत इब्ने-अब्बास (रज़ि०) ने सही सूरते-हाल का अन्दाज़ा करके उसे सही सलाह दी।

दूसरों को नेकी की नसीहत और ख़ुद उसपर अमल न करना

(309) अल्लाह के रसूल (सल्ल०) ने फ़रमाया : एक व्यक्ति अल्लाह के सामने क़ियामत के दिन लाया जाएगा और उसे जहन्नम में फेंक दिया जाएगा। उसकी आँतें बाहर निकल पड़ेंगी। वह उन्हें लिए आग में इस तरह फिरेगा जैसे गधा चक्की में घूमता है। दूसरे जहन्नमी लोग उसके इर्द-गिर्द इकट्ठे हो जाएँगे। पूछेंगे : ऐ फ़लाँ ! तेरा यह क्या हाल है ? तुम यहाँ कैसे आ गए ? तुम तो हमें नेकियों का हुक्म देते थे और बुराइयों से रोकते थे। वह कहेगा : हाँ, मैं तुम्हें नेकी की नसीहत करता था और ख़ुद उसपर अमल नहीं करता था। तुम्हें बुराइयों से रोकता था और मगर ख़ुद बुराइयों में पड़ा हुआ था।

(हदीस : बुख़ारी)

आग की कैंचियाँ

(310) अल्लाह के रसूल (सल्ल०) ने फ़रमाया : जिस रात मुझे आसमानों की सैर कराई गई (यानी मेराज की रात), मैंने देखा कि कुछ

लोगों के होंठ आग की कैंचियों से काटे जा रहे हैं। मैंने जिबरील (अलै०) से पूछा : ये कौन लोग हैं? उन्होंने कहा : ये आपकी उम्मत (समुदाय) के वे लोग हैं जो नसीहतें और तक़रीरें किया करते थे। ये दूसरों को तो नेकी की तालीम देते थे मगर ख़ुद उस पर अमल नहीं करते थे। (हदीस : मिशकात)

करने के लायक़ काम

(311) हज़रत हर्मुला (रज़ि०) कहते हैं कि मैंने अल्लाह के रसूल (सल्ल०) से अर्ज़ किया कि आप मुझे किन बातों पर अमल करने का आदेश देते हैं? आप (सल्ल०) ने फ़रमाया : नेक काम करो और बुराई से बचो, तुम जिन ख़ूबियों को पसन्द करते हो कि मजलिस से तुम्हारे चले जाने के बाद लोग तुम्हें उन्हीं ख़ूबियों से याद करें तो ऐसी ही ख़ूबियाँ अपने अंदर पैदा करो और जो बातें तुम्हें नापसन्द हैं कि मजलिस से उठ जाने के बाद लोग उन बातों के साथ तुम्हारा नाम न लें तो ऐसी बातों से दूर रहो। (हदीस : बुख़ारी)

इल्म और अमल

(312) हज़रत हसन बसरी (रह०) ने कहा : इल्म दो प्रकार के हैं। एक इल्म तो वह है जो दिल में उतर जाता है; यही इल्म क़ियामत के दिन बन्दे के काम आएगा। दूसरा इल्म वह है जो केवल ज़बान तक सीमित रहता है, दिल में नहीं उतरता। यह इल्म अल्लाह की अदालत में आदमी को नीचा दिखाएगा। (हदीस : मुसनद-दारमी)

इस्लाम की तालीम और दावत की अहमियत

(313) अल्लाह के रसूल (सल्ल०) ने एक दिन तक़रीर की। आप (सल्ल०) ने कुछेक व्यक्तियों की तारीफ़ की (कि ये लोग दूसरों को इस्लाम की बातें बताते है) आप (सल्ल०) ने फिर फ़रमाया : ऐसा क्यों है कि कुछ लोग अपने पड़ोसियों में दीन (इस्लाम) की सूझ-बूझ नहीं पैदा करते? उन्हें तालीम क्यों नहीं देते? उन्हें नसीहत क्यों नहीं करते? बुरी बातों से क्यों नहीं रोकते? ऐसा क्यों है कि कुछ लोग दीन की बातें नहीं सीखते? अपने अंदर इस्लाम की समझ क्यों नहीं पैदा करते? इस्लाम को न जानने का अंजाम क्या होगा, इसका पता क्यों नहीं करते। ख़ुदा की क़सम! लोगों को आस-पास की आबादी

को इस्लाम की तालीम देनी होगी, दीन का शऊर पैदा करना होगा, नसीहत करनी होगी तथा साथ ही लोगों को अपने क़रीबी लोगों से लाज़िमी तौर पर दीन सीखना होगा। अपने अंदर इस्लाम की सूझ-बूझ पैदा करनी होगी और वाज़-नसीहत क़बूल करनी होगी वरना मैं उन्हें इस दुनिया में जल्द सज़ा दूँगा। यह कहकर आप मेंबर (स्टेज) से उतर आए। लोग आपस में कानाफूसी करने लगे कि आप (सल्ल०) का इशारा किन लोगों की ओर था। कुछ लोगों ने कहा कि आप (सल्ल) का इशारा क़बीला 'अशअर' की तरफ़ था। ये लोग इस्लाम का इल्म रखते हैं और इनके क़रीब ही इस्लाम से नावाक़िफ़ और लापरवाह देहाती बसते हैं; और अशअरी लोग इनको इस्लाम की ओर बुलाने तथा इनके अंदर इस्लाम की तबलीग़ करने की ओर ध्यान नहीं दे रहे हैं। जब अशअरी लोगों को नबी (सल्ल०) की इस तक़रीर का पता चला तो वे लोग आप (सल्ल०) के पास आए और बोले : हुज़ूर ! हमसे क्या क़ुसूर हुआ कि आप हमारे ऊपर ग़ुस्सा हुए? आप (सल्ल०) ने फ़रमाया : लोग लाज़िमी तौर पर अपने पास-पड़ोस वालों को इस्लाम की तालीम दें, उन्हें वाज़-नसीहत करें और बुरी बातों से रोकें। इसी प्रकार लोगों को अपने पड़ोसियों से दीन-इस्लाम सीखना होगा, वाज़-नसीहत क़बूल करनी होगी, वरना मैं लोगों को इसी दुनिया में जल्द सज़ा दूँगा। अशअरी लोगों ने पूछा : क्या इस्लाम की तालीम देना और उसकी तबलीग़ करना भी हमारी ज़िम्मेदारी है?आप (सल्ल०) ने फ़रमाया : हाँ, यह भी तुम्हारी ज़िम्मेदारी है? इन लोगों ने अर्ज़ किया कि हमें एक साल की मुहलत दी जाए (जिसमें वे दावत व तबलीग़ का काम करेंगे।) अतएव आप (सल्ल०) ने उन्हें एक साल का समय दे दिया। फिर आप (सल्ल०) ने क़ुरआन की यही आयतें पढ़ीं (जिनका तर्जुमा है) : यहूदियों में से जिन लोगों ने इंकार का रवय्या अपनाया उनपर दाऊद से लेकर ईसा की ज़बान से फिटकार पड़ी, क्योंकि उन्होंने सिर उठाया और ज़्यादतियाँ करने लगे। उन्होंने एक-दूसरे को बुरे कामों से रोकना छोड़ दिया था। बुरा रवय्या था जो उन्होंने अपनाया। (हदीस : तबरानी)

व्याख्या : नबी (सल्ल०) ने क़ुरआन की जो आयत (अल-माइदा : 5/78-79 पढ़ी, उससे यह बताना चाहा है कि बनी इसराईल (यहूदियों) ने उन लोगों को नहीं

टोका जो नाफ़रमान थे और जिसके सबब अल्लाह उनपर नाराज़ हुआ। अब यदि मुसलमानों ने भी उन्हीं की नीति अपनाई और उन्हीं की तरह उन्होंने नाफ़रमानों का हाथ न पकड़ा और उन्हीं जैसी रवादारी दिखाई तो वे भी उस अंजाम से न बच सकेंगे जिसके हक़दार यहूदी हुए।

बुरी बातों से रोकना मुसलमानों की ज़िम्मेदारी है

(314) नोमान इब्ने बशीर (रज़ि०) कहते हैं कि अल्लाह के रसूल (सल्ल०) ने फ़रमाया : जो लोग अल्लाह की नाफ़रमानी करते हैं तथा वे लोग जो ख़ुदा की नाफ़रमानी करनेवालों को टोकते नहीं, बल्कि नज़रें बचा जाते हैं, उनकी मिसाल नाव के मुसाफ़िरों की है। नाव दो मंज़िली है। लाटरी के ज़रिए कुछ लोग ऊपरी मंज़िल में बैठे और कुछ निचली मंज़िल में। निचले तले के लोग ऊपरी तले पर जाते ताकि डोल लटकाकर नदी से पानी ले सकें तो ऊपरी तलेवालों को तकलीफ़ होती थी और बुरा मानते थे। अतः निचले तले के लोगों ने कुल्हाड़ी ली और नाव के तख़्ते उखाड़ना शुरू कर दिए। ऊपरवालों ने पूछा : तुम यह क्या कर रहे हो? उन्होंने कहा : हमें पानी चाहिए। यदि हम ऊपर पानी लेने जाते हैं तो तुम्हें तकलीफ़ होती है, इसलिए नाव के तख़्ते तोड़कर नदी से पानी लेंगे। नबी (सल्ल०) ने यह मिसाल देकर कहा : यदि ऊपरवाले नीचेवालों का हाथ पकड़कर तख़्ता तोड़ने से रोक देते हैं तो उन्हें भी डूबने से बचा लेंगे और अपने आपको भी बचा ले जाएँगे; लेकिन अगर उन्हें उनकी हरकत से नहीं रोकेंगे तो उन्हें भी डुबोएँगे और ख़ुद भी डूबेंगे। (हदीस : बुख़ारी)

इस्लाम की दावत में आधुनिक साधनों का इस्तेमाल

(315) हज़रत ज़ैद इब्ने साबित (रज़ि०) कहते हैं कि मुझे अल्लाह के रसूल (सल्ल०) ने सुरियानी ज़बान सीखने का हुक्म दिया। और एक अन्य रिवायत में है : मुझे अल्लाह के रसूल (सल्ल०) ने यहूदियों की लिपि सीखने का आदेश दिया और फ़रमाया : मुझे यहूदियों की किसी तहरीर पर भरोसा नहीं है। अतएव मैंने केवल 15 दिन में यहूदियों की इबरानी ज़बान सीख ली। चुनाँचे जब आप (सल्ल०) यहूदियों को कुछ लिखना चाहते तो मैं इबरानी ज़बान (Hebrew) में लिखता और

जब यहूदियों की कोई तहरीर आपके पास आती तो मैं आपको पढ़कर सुनाता। (अल-मुंज़िरी)

व्याख्या : सुरियानी ज़बान ईसाइयों की धार्मिक ज़बान है। मुमकिन है, हज़रत ज़ैद (रज़ि०) को, नबी (सल्ल०) ने सुरियानी और इबरानी दोनों ज़बानें सीखने का हुक्म दिया हो। सारी ज़बानें अल्लाह की मेहरबानी की देन हैं। हक़ की दावत देने का काम जिस देश में हो रहा हो, वहाँ की ज़बानें सीखनी पड़ेंगी ताकि उस देश के नागरिकों को उनकी अपनी ज़बान में हक़ का पैग़ाम पहुँचाया जा सके। इसी प्रकार, प्रचार-प्रसार के वे सारे साधन जो सांइस और सांस्कृतिक उन्नति ने उपलब्ध कराए हैं, हक़ के अलमबरदारों को उनसे काम लेना होगा।

इस्लाम की दावत देनेवाले के लिए सब्र ज़रूरी है

(316) हज़रत अम्मार इब्ने यासिर (रज़ि०) कहते हैं कि मुझे अल्लाह के रसूल (सल्ल०) ने क़बीला क़ैस के पास इस्लामी शरीअत की तालीम व तरबियत देने के लिए भेजा। वहाँ पहुँचा तो तजुर्बे से यह बात सामने आई कि जैसे ये लोग बिदके हुए ऊँट हों। इंतिहाई लालची, जिनका कोई मक़सद नहीं; उनकी सारी दिलचस्पी बस अपनी बकरियों और ऊँटों से है। जब वहाँ से लौटकर नबी (सल्ल०) के पास आया तो आप (सल्ल०) ने फ़रमाया : ऐ अम्मार! काम की रिपोर्ट दो। मैंने आप (सल्ल०) को बताया :

"वे लोग इस्लाम की ओर से एकदम लापरवाह हैं।"

आप (सल्ल०) ने फ़रमाया : उनसे ज़्यादा ताज्जुब तो उन लोगों पर है जिन्होंने जानने को तो सब कुछ जाना लेकिन उन्हीं की तरह वे भी बेफ़िक्र और बेपरवाह हो गए। (अल-मुंज़िरी)

व्याख्या : यानी ये लोग दीन-इस्लाम को तो जानते नहीं; एक लम्बी मुद्दत से जाहिलियत की ज़िन्दगी गुज़ारते आए हैं। यदि ये लोग दीन की ओर से बेफ़िक्र और लापरवाह हैं तो इसमें न तो कोई ताज्जुब होना चाहिए और न इस्लामी दावत का काम करनेवालों को मायूस होने की ज़रूरत है

नबी (सल्ल०) की सीरत पर मशहूर किताब "सीरत-इब्ने हिशाम" की कुछ घटनाओं से, तथा इस हदीस से भी यह जान पड़ता है कि नबी (सल्ल०) इस्लाम की ओर आम लोगों को बुलाने के लिए लोगों को भेजते थे और उनसे रिपोर्ट लेते थे।

बनावटी ज़बान और चर्बज़बानी

(317) नबी (सल्ल०) ने फ़रमाया : बनावटी ज़बान बोलनेवाले और चर्बज़बानी करनेवालों पर फिटकार है। आप (सल्ल०) ने यह बात तीन बार दोहराई। (हदीस : मुस्लिम)

व्याख्या : तक़रीर करनेवाले बहुत-से लोग ऐसे होते हैं जो लोगों पर अपना रोब जमाने और अपनी क़ाबिलियत की धाक बिठाने के लिए धाराप्रवाह अलंकारिक भाषा का इस्तेमाल करते हैं। उन्हें नबी (सल्ल०) ने हिदायत दी है कि वे सरल भाषा का प्रयोग करें और आसान शब्दों का चयन करें जो बेतकल्लुफ़ ज़बान पर आ जाते हैं क्योंकि बोल-चाल में बनावटी अंदाज़ अपनाना अल्लाह को नापसंद है।

इस्लाम की तबलीग़ करनेवाले को सब्र और बर्दाश्त से काम लेना चाहिए

(318) हज़रत अब्दुल्लाह इब्ने अब्बास (रज़ि०) (क़ुरआन के आलिम) ने 'इद्फ़अ बिल्लती हिय अहसनु. . . (क़ुरआन, हा०मीम० अस्सज्दा : आयत 41/34) का मतलब बयान करते हुए फ़रमाया :

इस्लाम की दावत देनेवालों को सब्र करनेवाला और सहनशील होना चाहिए। यदि लोग उसे ग़ुस्सा दिलानेवाली हरकतें करने लगें तो ऐसे वक़्त इस्लाम की दावत देनेवाले को ग़ुस्सा नहीं करना चाहिए और उन्हें बुरे सुलूक पर माफ़ कर देना चाहिए। यदि इस्लाम की दावत का काम करनेवालों के पास ये दो ख़ूबियाँ मौजूद हों तो दुश्मन न केवल यह कि नर्म होकर झुक जाएँगे, बल्कि गहरे दोस्त और जोशीले हामी व मददगार भी बन जाएँगे। (हदीस : बुख़ारी)

इस्लाम की तरफ़ बुलाने का सही तरीक़ा

(319) हज़रत मुआज़ इब्ने जबल (रज़ि०) और अबू मूसा अशअरी (रज़ि०) को यमन (का गर्वनर बनाकर) भेजते समय नबी (सल्ल०) ने उन्हें यह नसीहत की कि इस्लाम को लोगों के लिए आसान बनाना; मुश्किल न बना देना। लोगों को अपने दीन से क़रीब करना। ऐसा तरीक़ा न अपनाना कि लोग दीन से बिदककर दूर भागें।

(जम्उल-फ़वाइद)

व्याख्या : यानी लोगों के सामने इस्लाम को इस अंदाज़ से रखा जाए कि उन्हें यह लगे कि यह आसान रास्ता है, इस पर चलना हमारे लिए सरल है। ऐसा तरीक़ा न अपनाया जाए कि लोग इस्लाम को पहाड़ समझने लगें, जिसपर चढ़ना उनके लिए मुमकिन न हो। साथ ही दावत देनेवाले का अपना निजी जीवन ऐसा हो जिससे लोग अपनाइयत का अहसास कर सकें और उसके नतीजे में दीन से भी क़रीब हो सकें। इस्लाम की दावत देनेवाले का ज़िन्दगी गुज़ारने का तरीक़ा ऐसा न हो कि उसके तरीक़े से लोग इस्लाम से ही बिदक जाएँ और उससे नफ़रत करने लगें।

यहाँ एक हदीस बयान करना मुनासिब होगा।

किसी ने नबी (सल्ल०) को गुस्ताख़ी भरे अपशब्द कहे। सहाबा (रज़ि०) को बड़ा गुस्सा आया। लगता था कि लोग अब उसे जान से मारकर दम लेंगे; मगर आप (सल्ल०) ने उन्हें रोका और तबलीग़ व दावत किस हिकमत से दी जाए यह बताते हुए फ़रमाया : मेरी और इस व्यक्ति की मिसाल ऐसी समझो जैसे किसी व्यक्ति के पास एक ऊँटनी थी जो किसी वजह से, बिदककर भाग खड़ी हुई। लोगों ने उसका पीछा किया और ताक़त इस्तेमाल करके उसे क़ाबू में करना चाहा तो वह और भी ज़्यादा बिदक गई और आख़ीरकार क़ाबू से बाहर हो गई। तब ऊँटनी का मालिक आगे बढ़ा और कहा : ऊँटनी से मुझे निपट लेने दो; मुझे पता है, वह कैसे क़ाबू में आएगी। अतः वह बजाए उसका पीछा करने के ऊँटनी के आगे गया, हाथ में घास ली और चुमकार कर उसकी ओर बढ़ा तो वह उसके पास आ गई और बैठ गई। मालिक ने उसपर काठी बाँधी और सवार हो गया।

इस्लाम के मामले में बेजा नर्मी का अंजाम

(320) नबी (सल्ल०) ने फ़रमाया : जब बनी इसराईल (यहूदी) अल्लाह की नाफ़रमानी करने लगे तो उनके आलिमों ने उन्हें रोका; मगर वे नहीं रुके तो उनके आलिमों ने (उनका बाइकाट करने के बजाय) उनकी मजलिसों में बैठने लगे और उनके साथ खाने-पीने लगे। जब ऐसी हालत हो गई तो अल्लाह ने उन सब के दिल एक जैसे कर दिए और फिर अल्लाह ने दाऊद (अलैहि०) और ईसा (अलैहि०) की ज़बान से उनपर फिटकार लगाई। ऐसा इसलिए हुआ कि उन्होंने नाफ़रमानी की राह अपनाई और इसी ढब पर आगे बढ़ते गए।

अब्दुल्लाह इब्ने मसऊद (रज़ि०), जो इस हदीस को बयान करनेवाले हैं, कहते हैं कि नबी (सल्ल०) टेक लगाए हुए बैठे थे, फिर सीधे बैठ गए और बोले : क़सम है उसकी जिसके क़ब्ज़े में मेरी जान है; तुम लोगों को लाज़िमी तौर पर नेकी का हुक्म देना होगा और बुराइयों से रोकना होगा। ज़ालिम (नाफ़रमान) के हाथ पकड़कर हक़ की ओर मोड़ना होगा; वरना तुम सबको एक-दूसरे के दिल की छूत लग जाएगी और फिर तुम सबको अल्लाह अपनी रहमत से दूर फैंक देगा जैसा कि इससे पहले वह बनी इसराईल (यहूदियों) के साथ कर चुका है। (हदीस : मिशकात)

हक़ के अलमबरदारों का रवय्या

(321) हज़रत अबू सईद ख़ुदरी (रज़ि०) कहते हैं कि अल्लाह के रसूल (सल्ल०) ने फ़रमाया : तुम में जो व्यक्ति समाज में बुराई होते देखे और ताक़त के ज़ोर से उसे मिटा दे तो वह अल्लाह की पकड़ से बच जाएगा; और जिसने ताक़त न होने की वजह से ज़बान से उस बुराई के ख़िलाफ़ आवाज़ उठाई वह भी बच जाएगा; और जो बुराई के ख़िलाफ़ आवाज़ न उठा सके और दिल में उस बुराई से नफ़रत करे, वह भी पकड़ से बच जाएगा। और यह ईमान का सबसे कमज़ोर दर्जा है। (हदीस : नसई)

व्याख्या : इस हदीस से पता चलता है कि जिसके मन में बुराई से नफ़रत न होगी वह अल्लाह की पकड़ से न बच सकेगा, चाहे वह अपने आपमें कितना ही नेक और सदाचारी क्यों न हो। यह हदीस बताती है कि जब बातिल और असत्य क़ा बोलबाला हो तो ऐसे हालात में हक़परस्तों को हक़ के सिलसिले में सावधान रहना चाहिए। ऐसी हालत में आराम की नींद सोना और इत्मीनान की सांस लेना इस बात का पता देता है कि न तो ग़ैरत नाम की कोई चीज़ रह गई है; और न ही हक़ से कोई लगाव बाक़ी रहा है।

हक़ से मुहब्बत का तक़ाज़ा

(322) हज़रत मुआज़ बिन जबल (रज़ि०) कहते हैं कि अल्लाह के रसूल (सल्ल०) ने फ़रमाया : तोहफ़े और बख़्शिश जब तक तोहफ़े और बख़्शिश के रूप में हों, तो उन्हें ले सकते हो, लेकिन जब ये तोहफ़े, बख़्शिश, रिश्वत का रूप ले लें और बेदीनी के काम करने के

लिए दिए जाएँ तो मत लेना; हालाँकि तुम उसे छोड़ने के नहीं, ग़रीबी और तंगी उसे लेने पर मजबूर कर सकती है। सुनो, इस समय इस्लामी निज़ाम क़ायम है, अतः तुम अल्लाह की किताब की पैरवी करो जैसा कि उसका हुक्म हो। सुनो, अल्लाह की किताब (क़ुरआन) और हुकूमत (जो आज एक साथ क़ायम हैं, भविष्य में) एक दूसरे से अलग हो जाएँगे (यानी इस्लामी हुकूमत बाक़ी न रहेगी) ऐसी हालत में तुम अल्लाह की किताब का साथ देना। सुनो, तुम्हारे ऊपर ऐसे हाकिम और अधिकारी मुसल्लत होंगे जो तुम्हारे लिए क़ानून बनाएँगे। यदि तुमने उनके क़ानूनों और फ़ैसलों को माना तो वे तुम्हें गुमराह कर देंगे और न माना तो क़त्ल कर देंगे।

सहाबियों (रज़ि०) ने पूछा : ऐसी हालत में हमें क्या करना चाहिए? आप (सल्ल०) ने कहा : तुम्हें वही कुछ करना चाहिए जो हज़रत ईसा (अलै०) के साथियों ने किया। उन्हें आरों से चीर दिया गया, सूली पर लटकाया गया (लेकिन वे बातिल के आगे न झुके) अल्लाह की इताअत में जान दे देना उस ज़िन्दगी से बेहतर है जो उसकी नाफ़रमानी में बीते। (अल-मोअजम अल-कबीर—तबरानी)

व्याख्या : हदीस की किताब 'जामिअ तिरमिज़ी' में एक हदीस आई है जो ज़ालिम हाकिमों के बारे में है और वह यह है :

"नबी (सल्ल०) ने काब बिन उजरह (रज़ि०) से फ़रमाया : ऐ काब! मैं तुम्हें ऐसे हाकिमों से, जो मेरे बाद हुकूमत करेंगे, अल्लाह की पनाह में देता हूँ। जो लोग इन ज़ालिम हाकिमों के दरवाज़े पर जाएँगे और उनकी ग़लत बातों की ताईद करेंगे तथा उनकी अन्यायपूर्ण कार्रवाइयों में उनका हाथ बटाएँगे, ऐसे लोगों से मेरा कोई सम्बन्ध नहीं और न उनका मुझसे कोई सम्बन्ध है। वे (आख़िरत के दिन) हौज़े-कौसर पर मुझसे मुलाक़ात से महरूम रहेंगे। हाँ, वे लोग जो इन हाकिमों के यहाँ नहीं जाएँगे, उनकी ग़लत बातों को सही नहीं कहेंगे और न उनकी ग़लत कार्रवाइयों में उनके मददगार बनेंगे, ऐसे लोग मेरे हैं, मैं उनका हूँ और बेशक वे हौज़े-कौसर पर मुझसे मिलेंगे और मैं अपने हाथ से हौज़े-कौसर का पानी उन्हें पिलाऊँगा जिसके बाद फिर कभी उन्हें प्यास न लगेगी।

(323) नबी (सल्ल०) ने फ़रमाया : उस समय तुम्हारी क्या हालत होगी

जब तुम्हारी औरतें सरकश और बेक़ाबू हो जाएँगी, नौजवान बदचलन हो जाएँगे तथा तुम जिहाद (यानी दीन क़ायम करने की जिद्दोजुहद और जान-माल की क़ुरबानी देना) छोड़ दोगे।

लोगों ने पूछा : ऐ अल्लाह के रसूल ! क्या मुस्लिम समाज में ये बुराइयाँ जन्म लेंगी ? नबी (सल्ल०) ने फ़रमाया : हाँ, अल्लाह की क़सम, जिसके क़ब्ज़े में मेरी जान है, इससे भी ज़्यादा सख़्त समय आनेवाला है। लोगों ने पूछा : ऐ अल्लाह के रसूल ! इससे ज़्यादा सख़्त समय और क्या होगा ? आप (सल्ल०) ने फ़रमाया : उस समय तुम्हारा क्या हाल होगा जब तुम न नेकी का हुक्म दोगे और न बुराई से रोकेगे ? लोगों ने कहा : ऐ अल्लाह के रसूल ! क्या ऐसा भी होनेवाला है ? आप (सल्ल०) ने फ़रमाया : हाँ, ख़ुदा की क़सम, जिसके क़ब्ज़े में मेरी जान है, इससे भी सख़्त मरहला सामने आनेवाला है ! लोगों ने पूछा : ऐ अल्लाह के रसूल ! इससे ज़्यादा सख़्त मरहला और क्या होगा ? आप (सल्ल०) ने फ़रमाया : उस समय तुम्हारी क्या हालत होगी जब तुम बुराई को नेकी और नेकी को बुराई समझने लगोगे ? लोगों ने पूछा : क्या यह भी होनेवाला है ? आप (सल्ल०) ने कहा : हाँ, अल्लाह की क़सम, जिसकी मुट्ठी में मेरी जान है, इससे भी सख़्त मंज़िल आनेवाली है। लोगों ने पूछा : ऐ अल्लाह के रसूल ! इससे भी ज़्यादा सख़्त मरहला क्या होगा ? आप (सल्ल०) ने कहा : उस वक़्त तुम्हारा क्या हाल होगा जब तुम बुराई का हुक्म दोगे और नेकी से रोकोगे ? लोगों ने पूछा : क्या मुस्लिम उम्मत पर यह मरहला भी आनेवाला है ?

नबी (सल्ल०) ने फ़रमाया : हाँ। अल्लाह की क़सम जिसकी मुट्ठी में मेरी जान है, इससे भी सख़्त मरहला आनेवाला है।

अल्लाह ख़ुद अपनी क़सम खाकर कहता है : मैं (इस आख़िरी मरहले में मुस्लिम उम्मत के क़दम रखने के बाद) ऐसी आज़माइशों में उन्हें डालूँगा कि उनके अक़्लमंद और समझबूझ रखनेवाले लोग भी चकरा जाएँगे। (उनकी समझ में कुछ न आएगा कि इन फ़ितनों से कैसे बचें, क्या करें, कहाँ भागकर पनाह लें।) (हदीस : तबरानी)

इसके बाद हज़रत अबू बक्र (रज़ि०) और इब्ने उमर (रज़ि०) की हदीसें पढ़िए जो 'फ़ितने' का मतलब बताती हैं।

दीनी जिद्दोजुहद से लापरवाही का नतीजा

(324) हज़रत अबू बक्र सिद्दीक़ (रज़ि०) कहते हैं कि अल्लाह के रसूल (सल्ल०) ने फ़रमाया : जो लोग जिहाद (यानी इस्लाम की सरबुलंदी के लिए जान खपाने, तन-मन-धन से लग जाने) से जी चुराएँगे ऐसे लोगों को अल्लाह अज़ाब में डाल देगा। (अल-मुंज़िरी)

व्याख्या : नबी (सल्ल०) ने इस हदीस में अज़ाब (यातना) का मतलब और शक्ल नहीं बताई। इसके आगे की हदीस में यह खोलकर बताया दिया गया है कि वह अज़ाब कैसा होगा।

(325) अल्लाह के रसूल (सल्ल०) ने फ़रमाया : जब तुम 'ईना' के साथ कारोबार करने लगोगे, जब तुम बैल की दुम थाम लोगे और खेतीबाड़ी में मग्न हो जाओगे और दीन को क़ायम करने की मुहिम में मेहनत-मशक़्क़त से जी चुराओगे तथा जान-माल की कुरबानी देने से पीछे हटोगे तो अल्लाह तुम्हें रुसवा कर देगा और रुसवाई कभी तुमसे हट न सकेगी जब तक कि तुम अपने दीन की ओर न लौट आओ।

(हदीस : अबू दाऊद)

व्याख्या : 'ईना' कई प्रकार का होता है। मुख़्तसर इसे यूँ समझिए कि सुंदर नामों से सूदी कारोबार करने का नाम 'ईना' है। क्योंकि मुसलमान खुले रूप में सूदी कारोबार करने में शर्म व झिझक महसूस करते हैं, अतः दूसरे खूबसूरत नामों की आड़ में यह कारोबार होता है। इस प्रकार ये लोग शरीअत से खिलवाड़ करते हैं, यह समझते हुए कि सारी बातों की ख़बर रखनेवाला ख़ुदा भी इन नामों से धोखा खा जाएगा।

इस हदीस में जिन ख़राबियों की निशानदेही की गई है, वे हमारे मुस्लिम समाज में आमतौर पर पाई जाती हैं और ये ही हमारी रुसवाई और पतन की असल वजह हैं। यह हालत तब तक नहीं बदल सकती जब तक 'दीन' का काम हमारे नज़दीक कारोबार, खेतीबाड़ी और दूसरे कामों से ज़्यादा अहम न हो जाए। जब हम इस्लाम को ज़िन्दा करने और उसे ताक़तवर बनाने के लिए जुट जाएँगे तब जाकर रुसवाई और पतन का अन्त होगा और ख़ुदा की राह के राही यह देखकर दंग रह जाएँगे।

ख़ुदा की ओर बुलानेवाले काम में बरकत और ताक़त देनेवाले साधन

1. क़ुरआन मजीद की तिलावत (पाठ)

(326) हज़रत अब्दुल्लाह इब्ने मसऊद (रज़ि०) ने फ़रमाया : यह क़ुरआन, अल्लाह का बिछाया हुआ दस्तरख़ान है तो उसके दस्तरख़ान पर जितनी बार भी पहुँच सको, पहुँचो। बेशक यह क़ुरआन अल्लाह तक पहुँचने का साधन है। अन्धेरों को दूर करनेवाली रोशनी है। अच्छा कर देनेवाली और फ़ायदेमंद दवा है। मज़बूती से थामनेवालों की हिफ़ाज़त करती है और पैरवी करनेवालों के लिए नजात का ज़रिया है। यह किताब बेरुख़ी नहीं करती कि उसकी मनौती करने की नौबत आए। इसमें कोई टेढ़ नहीं कि उसे सीधा करने की ज़रूरत पेश आए। उसके हैरतंगेज़ मायनों का ख़ज़ाना कभी ख़त्म नहीं होता। यह ऐसा लिबास है जो बार-बार पहने जाने के बावजूद पुराना नहीं होता।

(अल-मुंज़िरी)

व्याख्या : हजरत अब्दुल्लाह इब्ने मसऊद (रज़ि०) ने क़ुरआन को 'अल्लाह का दस्तरख़ान' क़रार देकर बड़ी अहम बात कही है। जिस प्रकार भौतिक ख़ुराक के बिना इंसान का जिसमानी वुजूद बाक़ी नहीं रह सकता और उसे जीवित रखने के लिए अल्लाह ने खाद्य-सामग्री उपलब्ध कराई है उसी प्रकार उसने रूहानी वुजूद बनाए रखने के लिए अपनी रहनुमाई और हिदायत नामा के रूप में यह दस्तरख़ान बिछाया है। जो लोग इस रूहानी भोजन से जितना ज़्यादा लाभ उठाएँगे उनकी रूह की तरक़्क़ी उतनी ही अधिक होगी।

(327) अल्लाह के रसूल (सल्ल०) ने फ़रमाया : क़ुरआन को साफ़-साफ़ और ठहर-ठहरकर पढ़ो और उसके 'ग़राइब' पर अमल करो। 'ग़राइब' से मुराद वे आदेश हैं जिनपर अमल करना अल्लाह ने ज़रूरी ठहराया है तथा वे काम जिनको करने से अल्लाह ने मना किया है। (हदीस : मिशकात)

(328) हज़रत अबू ज़र ग़िफ़ारी (रज़ि०) कहते हैं कि मैं नबी (सल्ल०) के पास पहुँचा, और कहा : कुछ नसीहत फ़रमाइए। आप (सल्ल०) ने

फ़रमाया : अल्लाह का तक़वा अपनाओ, यह चीज़ तुम्हारे हालात में सुधार लाएगी। मैंने कहा : कुछ और बताइए। आप (सल्ल०) ने कहा: क़ुरआन की तिलावत पाबन्दी से करो और अल्लाह को याद रखो। ख़ुदा तुम्हें आसमान पर याद रखेगा और दुनिया के अन्धेरों में ये रोशनी का काम देंगे। (हदीस : मिशकात)

(329) हज़रत नव्वास इब्ने सिमआन (रज़ि०) कहते हैं, मैंने अल्लाह के रसूल (सल्ल०) को यह कहते हुए सुना : क़ियामत के दिन क़ुरआन और उसपर अमल करनेवाले ख़ुदा के सामने लाए जाएँगे। सूरा बक़रा और आले—इमरान क़ुरआन की नुमाइन्दगी करती हुई अल्लाह से सिफ़ारिश करेंगी कि यह व्यक्ति आपकी मेहरबानी और माफ़ी का हक़दार है अतः इसे माफ़ कर दिया जाए। (हदीस : मुस्लिम)

(330) हज़रत अबीदा मुलैकी (रज़ि०) कहते हैं कि अल्लाह के रसूल (सल्ल०) ने फ़रमाया : ऐ क़ुरआन पढ़नेवालो ! क़ुरआन को तकिया न बनाना बल्कि दिन व रात के समय उसे उस तरह पढ़ना जैसा कि उसका हक़ है। उसको पढ़ने और पढ़ाने का चलन आम करना। क़ुरआन को छोड़कर किसी दूसरी चीज़ की ओर न लपकना। उसमें ग़ौर—फ़िक्र करना ताकि तुम कामयाब हो। इस किताब का सहारा लेकर दुनिया की सुख-सुविधा के तलबगार न बनना बल्कि सदा बाक़ी रहनेवाले इनाम के तलबगार बनना। (हदीस : मिशकात)

व्याख्या : 'क़ुरआन को तकिया न बनाना' का मतलब यह है कि क़ुरआन पढ़ने में लापरवाही न करना बल्कि हमेशा उसे पढ़ते रहना। तहज्जुद की नमाज़ में भी इसे पढ़ना और उसके अलावा भी मतलब समझकर इसकी तिलावत करते रहना। आख़िरी जुमले का मतलब यह है कि क़ुरआन को दुनिया की इज़्ज़त हासिल करने का ज़रिया न बनाना।

(331) अल्लाह के रसूल (सल्ल०) ने फ़रमाया : जिस प्रकार पानी में भीग जाने पर लोहे को ज़ंग लग जाता है उसी प्रकार दिल को भी ज़ंग लग जाता है। सवाल किया गया, ऐ अल्लाह के रसूल ! दिल का ज़ंग कैसे छुड़ाया जाए ? अल्लाह के रसूल (सल्ल०) ने फ़रमाया : मौत को ज़्यादा याद करके और क़ुरआन की तिलावत करके।

(हदीस : मिशकात)

व्याख्या : मौत को याद करने का मतलब यह है कि इंसान याद करे कि उसे एक दिन मरना है, एक दिन उसे इस संसार से सदा के लिए अलविदा लेना है।

इस संसार में किए गए सारे कामों की पूरी तरह जाँच-पड़ताल होगी। जाँचनेवाला ख़ुद अल्लाह होगा जो सारी बातों का इल्म रखता है और जिसे हर पल की ख़बर है। इस जाँच के नतीजे में व्यक्ति पास होगा या फ़ेल! पास होनेवाले के लिए हमेशा का सुख होगा और फ़ेल होनेवाले के लिए सदा का दुख! इस हक़ीक़त को जितना ज़्यादा याद रखा जाएगा उसी अनुपात में दिल का मैल और खोट भी दूर होता जाएगा। यह काम क़ुरआन की तिलावत करने से बहुत अच्छी तरह होता है। तिलावत के मायने अरबी ज़बान में, बेसोचे-समझे पढ़ने के नहीं आते बल्कि क़ुरआन के अल्फ़ाज़ पढ़ने, उसका मतलब समझने और उसपर अमल करने का नाम 'तिलावत' है। बड़े अफ़सोस की बात है कि मुस्लिम समाज के अधिकतर लोगों ने सिर्फ़ क़ुरआन के अल्फ़ाज़ पढ़ लेने को ही काफ़ी समझ लिया है।

2. तहज्जुद और नफ़्ल नमाज़ें

(332) अल्लाह के रसूल (सल्ल०) ने फ़रमाया कि अल्लाह फ़रमाता है : मेरा बन्दा अपने जिन कामों से मेरी क़ुर्बत (सान्निध्य) हासिल करता है उनमें सबसे ज़्यादा अच्छे वे काम हैं जिन्हें मैंने उसके लिए फ़र्ज़ (ज़रूरी) ठहराया है। मेरा बंदा बराबर नफ़्ल इबादतों के ज़रिए मुझसे क़रीब होता रहता है, यहाँ तक कि वह मेरा प्यारा बंदा बन जाता है। मैं उसका कान हो जाता हूँ जिससे वह सुनता है। उसकी आँख हो जाता हूँ जिससे वह देखता है। मैं उसका हाथ हो जाता हूँ जिससे वह पकड़ता है और मैं उसका पैर बन जाता हूँ जिससे वह चलता है।

(हदीस : बुख़ारी)

व्याख्या : कान, आँख, हाथ आदि बन जाने का मतलब यह है कि अल्लाह अपने उस बन्दे को, जिसका उल्लेख अभी हदीस में हुआ, अपनी हिफ़ाज़त और निगरानी में ले लेता है। अब उसकी सारी क़ुव्वतें और सलाहियतें ऐसे कामों में लग जाती हैं जिनसे अल्लाह ख़ुश होता है, जिसके नतीजे में शैतान उन क़ुव्वतों और सलाहियतों को अपने ग़लत कामों में इस्तेमाल नहीं कर पाता। भला अल्लाह किस प्रकार अपने किसी प्यारे बन्दे तक शैतान को पहुँचने देगा और किस तरह उसे दुश्मन के हवाले करेगा? कभी आप ने सुना है कि किसी प्रेमी ने अपने प्यारे को दुश्मन के हवाले किया हो?

(333) हज़रत अबू उमामा बाहिली (रज़ि०) कहते हैं कि अल्लाह के रसूल (सल्ल०) ने फ़रमाया : तुम लोग अपने को तहज्जुद का पाबन्द बनाओ, क्योंकि तुमसे पहले के भले लोगों का यही तरीक़ा रहा है।

यह तुम्हें अपने पालनहार से नज़दीक करनेवाली, पापों का नाश करने और उससे दूर रखनेवाली है। (हदीस : तिरमिज़ी)

(334) हज़रत अम्र बिन अबसह (रज़ि०) कहते हैं कि उन्होंने नबी (सल्ल०) को यह कहते सुना : रब अपने बन्दे से सबसे ज़्यादा उस समय क़रीब होता है जब रात का आख़िरी पहर होता है। यदि तुम रात के उस हिस्से में अल्लाह को याद करनेवालों में शामिल हो सको तो ऐसा ज़रूर करो। (हदीस : तिरमिज़ी)

व्याख्या : रात की आख़िरी घड़ियों में अल्लाह की रहमत बन्दों की ओर ज़्यादा मुतवज्जह होती है। इसलिए ख़ुदा को अपने से क़रीब करने और उससे क़रीब होने के लिए यह समय ज़्यादा मुनासिब है।

(335) हज़रत अबू हुरैरा (रज़ि०) कहते हैं कि अल्लाह के रसूल (सल्ल०) ने फ़रमाया : अल्लाह की रहमत हो उस शौहर पर जो रात के समय नींद से उठे, तहज्जुद की नमाज़ पढ़े और अपनी बीवी को भी जगाए ताकि वह भी तहज्जुद पढ़ ले। यदि नींद ग़ालिब होने की वजह से वह नहीं उठ रही हो तो उसके चेहरे पर पानी के छींटे देता है। अल्लाह उस बीवी को भी अपनी मेहरबानियों का हक़दार बनाए जो रात को नींद छोड़कर उठी, नमाज़ पढ़ी और अपने शौहर को भी जगाया कि वह भी तहज्जुद की नमाज़ पढ़ ले; और यदि वह नींद ग़ालिब होने की वजह से नहीं उठता है तो उसके मुँह पर पानी के छींटे देती है। (हदीस : अबू दाऊद, नसई)

व्याख्या : ध्यान रहे कि यहाँ ज़बरदस्ती की नमाज़ नहीं पढ़वाई जा रही है बल्कि मियाँ-बीवी दोनों तहज्जुद के आदी हैं और पहले से आपस में तय है कि न जाग सकने की हालत में उन्हें पानी के छींटे देकर जगाओ।

(336) हज़रत अब्दुल्लाह इब्ने अब्बास (रज़ि०) कहते हैं कि अल्लाह के रसूल (सल्ल०) ने फ़रमाया : दिन में रोज़ा रखने के लिए सेहरी से मदद लो और तहज्जुद की नमाज़ में दिन की नींद से मदद लो।

(हदीस : तरग़ीब, इब्ने-माजा)

व्याख्या : मतलब यह कि रोज़ा शुरू करने से पहले सेहरी खाओ ताकि दिन का समय आराम से गुज़र सके, सुस्ती और कमज़ोरी न सताए; और जो लोग रात को तहज्जुद के लिए उठना चाहें वे दिन में सो लिया करें।

(337) हज़रत समुरा (रज़ि०) कहते हैं कि हमें अल्लाह के रसूल

(सल्ल०) ने तहज्जुद की नमाज़ पढ़ने की नसीहत की—चाहे कम पढ़ें या ज़्यादा; और इस बात की नसीहत की कि नमाज़ के आख़िर में 'वित्र' पढ़ लिया करें। (हदीस : तरग़ीब, मुसनद बज़्ज़ाज, तबरानी)

व्याख्या : नबी (सल्ल०) तहज्जुद के समय आमतौर से आठ रक्अतें पढ़ते थे और कम से कम चार रक्अतें। यदि व्यक्ति रात को तहज्जुद के लिए उठने का आदी हो तो इशा की नमाज़ के बाद वित्र न पढ़े, तहज्जुद के वक़्त वित्र पढ़ना ज़्यादा अफ़ज़ल है।

(338) हज़रत अब्दुल्लाह इब्ने अम्र इब्ने आस (रज़ि०) कहते हैं कि मुझसे अल्लाह के रसूल (सल्ल०) ने फ़रमाया : ऐ अब्दुल्लाह ! तुम फ़लाँ जैसे न हो जाना, जो तहज्जुद पढ़ते थे, फिर छोड़ दिया (तुम ऐसा न करना)। (हदीस : बुख़ारी, मुस्लिम)

व्याख्या : 'फ़लाँ' का इशारा शायद अब्दुल्लाह इब्ने उमर (रज़ि०) की ओर है। अब्दुल्लाह इब्न उमर के बेटे सालिम का बयान है कि नबी (सल्ल०) की इस प्यार भरी चेतावनी के बाद अब्बाजान की नमाज़े-तहज्जुद कभी नहीं छूटी।

(339) हज़रत अली (रज़ि०) ने कहा कि एक बार रात में नबी (सल्ल०) हमारे यहाँ आए और मुझसे तथा फ़ातिमा (रज़ि०) से फ़रमाया : तुम दोनों तहज्जुद की नमाज़ नहीं पढ़ते ? (हदीस : बुख़ारी, मुस्लिम)

व्याख्या : इस हदीस तथा अन्य हदीसों से पता चलता है कि नबी (सल्ल०) रात के पिछले पहर में यह जायज़ा लेने के लिए निकलते थे कि कौन किस हाल में है ! पड़ा सो रहा है या अपने रब से माफ़ी माँगने और उसे मनाने में लगा हुआ है।

(340) अल्लाह के रसूल (सल्ल०) ने फ़रमाया : जब रात का एक तिहाई भाग रह जाता है तो हमारा रब सबसे निचले नज़र आनेवाले आकाश पर आता है और पुकारता है : कौन है जो मुझे अपना संकट दूर करने के लिए पुकारे कि मैं उसका संकट दूर करूँ ? कौन है जो मुझसे माँगता है कि मैं उसे दूँ ? कौन मुझसे गुनाहों की माफ़ी चाहता है कि मैं उसके गुनाह माफ़ कर दूँ ? (हदीस : बुख़ारी, मुस्लिम)

(341) हज़रत जाबिर (रज़ि०) से रिवायत है कि अल्लाह के रसूल (सल्ल०) ने फ़रमाया : जब तुममें से कोई मस्जिद में जमाअत के साथ नमाज़ पढ़ ले तो उसे चाहिए कि अपने घर में भी मस्जिद से वापसी पर सुन्नत और नफ़्ल नमाज़ें पढ़े। यदि वह ऐसा करे तो अल्लाह

उसके घर में नमाज़ पढ़ने की वजह से ख़ैर व बरकत नाज़िल करेगा।
(हदीस : मुस्लिम)

(342) नबी (सल्ल०) ने फ़रमाया : यह दीन (धर्म) आसान है, और इस दीन (इस्लाम) से जब भी मुक़ाबला किया जाएगा, वह मुक़ाबला करनेवालों को शिकस्त दे देगा। अत: तुम लोग सीधे रास्ते पर चलो; शिद्दतपसंदी और इन्तिहापसंदी से बचो और अपनी नजात की ओर से मायूस न हो, ख़ुश रहो कि अल्लाह ने चाहा तो तुम्हें ज़रूर नजात मिलेगी, अत: कुछ देर सुबह को चल लो, कुछ शाम को और कुछ देर रात में (तो तुम मंज़िल पर पहुँच जाओगे)। (हदीस : बुख़ारी)

व्याख्या : "दीन आसान है" का मतलब यह है कि उसके आदेश आसान हैं। हर आदमी आसानी के साथ इस दीन पर अमल कर सकता है। दीन से मुक़ाबला करने का मतलब यह है कि दीन ने जो आसानियाँ दी हैं, उसी पर बस न करते हुए जो व्यक्ति शिद्दतपसंदी अपनाएगा वह अंतत: खुद ही तंग आ जाएगा और जो पाबंदियाँ अपने ऊपर लाज़िम कर ली हैं, उन्हें नहीं निभा सकेगा। इसी लिए नबी (सल्ल०) ने शिद्दतपसंदी से बचाने के लिए नसीहत की कि दीन के सीधे रास्ते पर चलो, शिद्दतपसंदी और इन्तिहापंसदी से बचो। अपनी नजात से मायूस क्यों होते हो? फ़र्ज़ नमाज़ों के अलावा सुबह, शाम और रात के आख़िरी पहर में कुछ नफ़्ल नमाज़ें पढ़ लिया करो।

यहाँ देखने की बात यह है कि नबी (सल्ल०) ने इस बात को बड़े प्रभावी ढंग से रखा क्योंकि एक सच्चे मुसलमान का हाल मुसाफ़िरों जैसा है। जो मुसाफ़िर ठंडे समय में शाम और सुबह सफ़र करता है और कुछ रात में रास्ता तय करता है वह ख़ैरियत और आराम से अपनी मंज़िल पर पहुँच जाता है और जो मुसाफ़िर रास्ता तय करने में दिन और रात एक कर देता है ऐसा मुसाफ़िर आख़िरकार थक-हारकर कहीं बैठ जाता है और फिर मंज़िल पर नहीं पहुँच पाता। इस मिसाल से इस बात की ओर ध्यान दिलाने की कोशिश की गई है कि मोमिन, संसार में रहते हुए आख़िरत (परलोक) के सफ़र में है; ऐसी हालत में मंज़िल (जन्नत) पर पहुँचने के लिए यह ज़रूरी है कि दिन-रात वह इबादत में लगा रहे—कुछ सुबह में, कुछ शाम को और कुछ रात के आख़िरी हिस्से में नफ़्ल नमाज़ें पढ़ ले तो अल्लाह ने चाहा तो वह मंज़िल पर पहुँच जाएगा। तहज्जुद, इशराक़ और चाश्त की ये नमाज़ें इसी की अमली शक्लें हैं जिन्हें नबी (सल्ल०) ने उम्मत के सामने रखा।

यहाँ यह बात याद रखने की है कि यह खुशख़बरी उन लोगों को दी जा रही है जो नेक काम करने के बावजूद अपनी नजात से मायूस हो रहे थे कि भला वे कामों की इतनी छोटी पूँजी के बलबूते जन्नत में कैसे जगह पा सकेंगे?

(343) अल्लाह के रसूल (सल्ल०) ने फ़रमाया : इस्लाम के जिस आदेश को अल्लाह ने सबसे पहले लाज़िमी (फ़र्ज़) ठहराया वह नमाज़ है और (मुसलमानों में) जो चीज़ आख़िर तक बाक़ी रह जाएगी वह नमाज़ है। और क़ियामत के दिन सबसे पहले नमाज़ ही के बारे में पूछगछ होगी। अल्लाह अपने फ़रिश्तों से कहेगा : मेरे इस बन्दे की फ़र्ज़ नमाज़ को देखो; यदि वह मुकम्मल है तो मुकम्मल लिखो और यदि वह अधूरी है तो देखो; मेरे उस बन्दे के आमालनामे में कुछ नफ़्ल नमाज़ें भी हैं? यदि नफ़्ल नमाज़ें हैं तो फ़र्ज़ नमाज़ की कमी को नफ़्ल नमाज़ों से पूरा किया जाएगा। फिर अल्लाह फ़रिश्तों से कहेगा : ज़रा देखो, मेरे बन्दे के आमालनामे में ज़कात मुकम्मल है? यदि मुकम्मल है तो मुकम्मल ज़कात का बदला मिलेगा और यदि उसकी ज़कात में कमी और कोताही रह गई है तो अल्लाह कहेगा : ज़रा देखो, इसके आमालनामे में नफ़्ली सदक़ा ख़ैरात भी है? यदि है तो फ़र्ज़ ज़कात की कमी को नफ़्ली सदक़ा ख़ैरात (दान) से पूरा किया जाएगा। (हदीस : अलमुंज़िरी मुस्नद अबू याला)

व्याख्या : इस हदीस में केवल नमाज़ और ज़कात का उल्लेख है। कहने का मतलब यह है कि इसी प्रकार सारी फ़र्ज़ इबादतों की जाँच होगी और फ़र्ज़ इबादतों में जो कमी रह गई होगी उसे नफ़्ल इबादतों से पूरा किया जाएगा।

इस हदीस से यह बात भी निकलती है कि लोगों को फ़र्ज़ इबादतों के बाद नफ़्ल इबादतों की फ़िक्र करनी चाहिए क्योंकि आदमी फ़ितरी तौर से कमज़ोर है। नमाज़ को कितना ही ठीक-ठाक क्यों न अदा की जाए, कुछ न कुछ कमी तो रह ही जाती है। यदि उसके खाते में नफ़्ल नमाज़ें नहीं हैं तो फ़र्ज़ नमाज़ों में जो कमी, कोताही रह जाती है उसे किस तरह पूरा किया जाएगा?

अल्लाह की राह में ख़र्च करना

(344) अल्लाह के रसूल (सल्ल०) ने फ़रमाया : बंदा कहता है, यह माल मेरा है, यह माल मेरा है जबकि सच्चाई यह है कि उसके माल के तीन हिस्से हैं : (1) जो खा लिया वह ख़त्म हुआ, (2) जो पहन लिया वह जर्जर हुआ, (3) और जो कुछ ख़ुदा की राह में दे दिया वही

असल में अपने लिए जमा किया। इसके अलावा जो माल है उसका मालिक तो क़ब्र में चला जाएगा और माल अपने वारिसों के लिए छोड़ जाएगा। (हदीस : मुस्लिम)

व्याख्या : ख़ुदा की राह में माल देने से मुराद यह है कि अपनी ज़रूरत से ज़्यादा माल को दीन क़ायम करने की मुहिम में लगाओ और ख़ुदा के बेसहारा बंदों पर ख़र्च करो जोकि तुम्हारे भाई हैं जैसा कि इससे पहले इस तरह की हदीस आ चुकी है।

(345) हज़रत उक़्बा इब्ने आमिर (रज़ि०) कहते हैं कि मैंने सुना, अल्लाह के रसूल (सल्ल०) फ़रमा रहे थे : क़ियामत के दिन कामों का हिसाब-किताब ख़त्म होने की मुद्दत तक आदमी अपने सदक़े (दान) की छाँव में रहेगा। (हदीस : मुस्नद अहमद)

व्याख्या : क़ियामत के मैदान में बड़ी सख़्त गर्मी होगी जिसका तसव्वुर करना भी मुमकिन नहीं। उस दिन सदक़े-ख़ैरात साए की शक्ल इख़्तियार कर लेंगे और इस तरह सदक़ा देनेवाला उस दिन की बेपनाह गर्मी से बचा रहेगा।

(346) हसन बसरी (रह०) का बयान है कि अल्लाह के रसूल (सल्ल०) ने अल्लाह का यह क़ौल नक़्ल किया : इज़्ज़त व जलालवाला अल्लाह कहता है : ऐ आदम के बेटे ! तू अपना माल मेरे ख़ज़ाने में जमा करके बेफ़िक्र हो जा और तसल्ली रख; न आग लगने का खतरा, न पानी में डूबने का अन्देशा और न किसी चोर की चोरी का डर ! जो माल मेरे पास रखा गया उसे मैं पूरा तुझे वापस कर दूँगा, उस दिन जबकि तुझे इसकी सबसे ज़्यादा ज़रूरत होगी। (हदीस : तबरानी)

व्याख्या : ख़ुदा के ख़ज़ाने में माल जमा करने का मतलब यह है कि ख़ुदा ने जिन कामों में माल लगाने का हुक्म दिया है, वहाँ बेझिझक माल ख़र्च किया जाए क्योंकि उसकी राह में ख़र्च किया गया माल हर प्रकार से महफ़ूज़ होता है, आग लगने, पानी में डूबने और चोरी-चकारी के अंदेशे से पूरे तौर पर महफ़ूज़ होता है तथा उसकी वापसी भी एक ऐसे दिन में होगी जब इंसान एक-एक पैसे का मुहताज होगा।

(347) नबी (सल्ल०) ने फ़रमाया : ख़ुदा की राह में देने से माल कम नहीं होता और जब कोई बन्दा माल देने के लिए हाथ बढ़ाता है तो माँगनेवाले के हाथ में पहुँचने से पहले ही ख़ुदा के हाथ में पहुँच जाता है। (हदीस : मुंज़िरी)

(348) नबी (सल्लं०) ने फ़रमाया : ग़रीब आदमी—जो रिश्तेदार न हो, की माली मदद करने से एक सवाब मिलता है; और अगर वह ग़रीब व्यक्ति रिश्तेदार हो तो दोहरा सवाब मिलेगा; एक सदक़ा करने का और दूसरा रिश्तेदारी का हक़ अदा करने का।

(हदीस : नसई, तिरमिज़ी)

(349) हज़रत हकीम इब्ने हिज़ाम (रज़ि०) कहते हैं कि एक व्यक्ति ने नबी (सल्ल०) से पूछा : कौन-सा सदक़ा (दान) सबसे अच्छा है ? आप (सल्ल०) ने फ़रमाया : वह सदक़ा जो आदमी अपने ग़रीब रिश्तेदार को देता है जबकि वह रिश्तेदार उससे दुश्मनी भी रखता हो।

(हदीस : तर्ग़ीब)

(350) अल्लाह के रसूल (सल्ल०) ने फ़रमाया : वह दीनार, दर्जा और सवाब के लिहाज़ से सबसे अच्छा है जिसे आदमी अपने बाल-बच्चों पर ख़र्च करता है; और वह दीनार भी अच्छा है जिसे ख़ुदा की राह में जिहाद (जिद्दोजुहद) करने के लिए सवारी आदि की ख़रीदारी और तैयारी में ख़र्च करता है; तथा वह दीनार भी अच्छा है जिसे कोई व्यक्ति जिहाद (जिद्दोजुहद) की मुहिम में लगे हुए अपने साथियों पर ख़र्च करता है। (हदीस : मुस्लिम)

(351) अल्लाह के रसूल (सल्ल०) ने फ़रमाया : ऐ आदम के बेटे ! यदि तू अपने पास ज़रूरत से ज़्यादा जमा माल को अल्लाह के मार्ग में ख़र्च करेगा तो यह तेरे हक़ में बेहतर होगा; और यदि न देगा, कंजूसी करेगा, तो यह तेरे हक़ में बुरा होगा। यदि तेरे पास अपनी जायज़ ज़रूरतों से अधिक माल न हो और तू अल्लाह की राह में न ख़र्च कर सके तो तुझपर कुछ गुनाह नहीं। हाँ, अपना माल सबसे पहले उन लोगों पर ख़र्च करो जो तुम्हारी सरपरस्ती में हैं।

(हदीस : तिरमिज़ी)

व्याख्या : यह हदीस, ऊपर वाली हदीस के पहले हिस्से का मतलब वाज़ेह करती है जिससे यह पता चलता है कि बीवी-बच्चों को भूखा रखकर ख़ुदा की राह में ख़र्च करना कोई नेकी नहीं है। ख़ुदा की राह में अपना सब कुछ न्योछावर कर देना उन हालात में न केवल जायज़ बल्कि बेहतर है जब उस तरह के हालत बन गए हों जिनमें अबू बक्र (रज़ि०) ने अपना घर लुटा दिया था क्योंकि उस समय ख़ुदा की राह में फ़ौरन माल देने की ज़रूरत थी। उन्हें यह यक़ीन था कि

ग़ल्ला आदि आ रहा है और इतनी-सी देर में बीवी-बच्चे भूख से मर नहीं जाएँगे। फिर, बीवी-बच्चे भी वे थे जो अल्लाह की राह में हर तरह की क़ुर्बानियाँ देनेवाले थे।

(352) हज़रत अब्दुल्लाह इब्ने मसऊद (रज़ि०) कहते हैं कि नबी (सल्ल०) ने एक तक़रीर में ख़ास तौर से फ़रमाया : औरतों से तुम सदक़ा-व-ख़ैरात (दान-पुण्य) किया करो, क्योंकि क़ियामत के दिन जहन्नम में तुम औरतों की तादाद अधिक होगी। इसपर एक आम औरत ने उठकर सवाल किया : वे कौन-सी बातें हैं, जिनके सबब ज़्यादातर औरतें जहन्नम में जाएँगी? आप (सल्ल०) ने फ़रमाया : क्योंकि औरतें बहुत कोसती रहती हैं और अपने शौहरों की नाशुक्री करती हैं। (हदीस : मुस्नद अहमद)

व्याख्या : यानी आम तौर पर औरतों की ज़बान कैंची की तरह चलती है। दूसरों पर कीचड़ उछालना, नुक्ताचीनी करना, ऐब लगाना, पीठ पीछे बुराई (ग़ीबत) करना और लाँछन लगाना उनका ख़ास काम होता है, साथ ही वे अपने शौहरों की नाशुक्री करती हैं। ज़रा मिज़ाज के ख़िलाफ़ कोई बात हो जाए तो शौहरों के सारे एहसानों पर पानी फेर देती हैं; कहती हैं, इस घर में कभी आराम नहीं मिला!

(353) नबी (सल्ल०) ने फ़रमाया : एक आदमी जंगल में जा रहा था। अचानक उसने ऊपर से आवाज़ सुनी। कोई कह रहा था : ऐ बादलो, फ़लाँ व्यक्ति के बाग़ पर बरसो, और इतना बरसो कि उसे सैराब (तर-ब-तर) कर दो। अतएव वे बादल एक ओर को गए और अपना पानी एक पहाड़ी ज़मीन पर उंडेल दिया। वहाँ एक नाला था, उसने सारा पानी अपने में समेट लिया और बह निकला। जब वहाँ से पानी आगे बढ़ा तो वह मुसाफ़िर भी उसके साथ-साथ चला। आगे क्या देखता है कि एक आदमी बाग़ में खड़ा बेलचे की मदद से पानी का रुख अपने बाग़ की ओर मोड़ रहा है ताकि उससे बाग़ सींचे। बाग़वाले से उस मुसाफ़िर ने पूछा : ऐ अल्लाह के बन्दे! तेरा क्या नाम है? तो उसने वही नाम बताया जो उसने ऊपर से आनेवाली आवाज़ से सुना था। बाग़वाले ने उससे पूछा : तूने मेरा नाम क्यों पूछा? मुसाफ़िर ने कहा : मैंने ऊपर से यह आवाज़ सुनी। कोई कह रहा था, ऐ बादलो! जाओ और फ़लाँ व्यक्ति के बाग़ को सींच दो। बताओ कि तुम बाग़ की पैदावार में क्या करते हो? जिसकी वजह से

ख़ुदा ने तुम्हारे ऊपर यह ख़ास मेहरबानी की। बाग़वाले ने कहा : जब तुम पूछ ही बैठे हो और सूरते-हाल से वाक़िफ हो गए हो, तो लो, मैं तुम्हें बताता हूँ। इस बाग़ से जो कुछ हासिल होता है, मैं उसमें तीन हिस्से करता हूँ। एक तिहाई ख़ुदा की राह में दे देता हूँ, एक तिहाई ख़ुद मैं और मेरे घरवाले खाते हैं तथा एक तिहाई ख़ुद इसी बाग़ की सिंचाई आदि में लगा देता हूँ। (हदीस : मुस्लिम)

(354) अल्लाह के रसूल (सल्ल०) ने फ़रमाया : मोमिन बन्दे के मरने के बाद उसकी कुछ नेकियों का फल उसे मिलता रहता है और वे ये हैं :

(1) किसी को इस्लाम की तालीम दी और उसको फैलाया, (2) नेक चलन बेटा या बेटी अपने पीछे छोड़ी (जो उसके लिए दुआ करे), (3) किसी को क़ुरआन दिया, (4) मस्जिद बनवा दी, (5) मुसाफ़िरखाना बनवा दिया (इसी में दीनी मदरसों और उनके लिए हास्टलों का बनवाना भी आता है।) (6) नहर खुदवाई, (7) कोई और नेक काम किया और उसमें अपनी रक़म लगाई—तो जब तक इन चीज़ों से फ़ायदा उठाया जाता रहेगा, उसके आमालनामे में सवाब लिखा जाता रहेगा। (हदीस : तरग़ीब व तरहीब)

व्याख्या : कुछ अन्य रिवायतों में कुँआ खुदवाने और बाग़ लगाने की बात भी मिलती है। इस तरह के सदक़ों को "सदक़-ए-जारिया" कहते हैं। इस हदीस में जिन कामों को बयान किया गया है, केवल वे ही काम 'सदक़ा-ए-ज़ारिया' नहीं हैं; इसके अलावा अन्य काम भी हो सकते हैं जैसे : दीनी मदरसों के लिए किताबें वक़्फ़ करना, अपनी जायदाद मदरसे के नाम लिखना आदि।

(355) हज़रत अबू ज़र ग़िफ़ारी (रज़ि०) कहते हैं कि मैं नबी (सल्ल०) की ख़िदमत में हाज़िर हुआ। उस समय आप (सल्ल०) काबा के साए में बैठे हुए थे। जब आप (सल्ल०) की नज़र मुझपर पड़ी तो फ़रमाया : वे लोग मुकम्मल तौर से बर्बाद होनेवाले हैं। मैंने पूछा : मेरे माँ-बाप आप पर क़ुर्बान, कौन लोग नेस्तनाबूद होनेवाले हैं? आप (सल्ल०) ने फ़रमाया : वे लोग तबाह बर्बाद होंगे जो मालदार होते हुए भी ख़ुदा की राह में खर्च नहीं करते।

कामयाब तो वह होगा जो अपनी दौलत (सदक़े में) लुटाए, सामनेवालों को दे, जो पीछे हैं, उन्हें दे, बाईं ओर के लोगों को भी

दे—मगर ऐसे मालदार बहुत कम हैं जिनमें यह ख़ूबी हो।

(हदीस : बुख़ारी, मुस्लिम)

व्याख्या : आदमी कंजूसी क्यों करता है, इसका एक बड़ा सबब औलाद की मुहब्बत है। उनके आर्थिक-भविष्य को सुधारने के लिए बचा-बचाकर रखता है और ख़ुदा की राह में ख़र्च नहीं करता, मगर इसके बावजूद हो सकता है कि उसकी औलाद ग़रीबी और तंगहाली में गिरफ़्तार हो जाए। ऐसी हालत में दुनिया संवारने की स्कीम से न उसकी औलाद का भला हो और न ख़ुद उसका अपना भला हो। इस बात को और अधिक स्पष्ट रूप से समझने के लिए अब्दुल्लाह इब्ने मसऊद (रज़ि०) की हदीस का तर्जुमा पढ़िए जिसे तबरानी ने बयान किया है। तर्जुमा है :

> अल्लाह अपने दो बन्दों को क़ियामत के दिन बुलाएगा। इन दोनों को अल्लाह ने ख़ूब माल और औलाद दी थी। उनमें एक से अल्लाह पूछेगा : ऐ फ़लाँ! वह कहेगा : बंदा हाज़िर है कहिए, क्या हुक्म है? अल्लाह कहेगा : क्या मैंने तुझे ख़ूब माल और औलाद नहीं दी थी? वह कहेगा : मेरे रब! बेशक आपने मुझे बहुत माल और औलाद दी थी। अल्लाह कहेगा : जो माल मैंने तुझे दिया था, तूने उसका क्या किया? कैसे-कैसे काम किए? वह कहेगा : ऐ मेरे रब! वह माल मैंने अपनी औलाद के लिए छोड़ा ताकि मेरे मरने के बाद वह तंगहाल न हो। अल्लाह कहेगा : यदि तुम्हें हक़ीक़त का पता चल जाता तो हँसना-मुस्कुराना छोड़ देते और सदा ग़मग़ीन रहते। आ, तुझे बताता हूँ कि तेरी औलाद तंगहाली की ज़िन्दगी गुज़ार रही है। (तेरी स्कीम तेरी औलाद के कुछ भी काम न आई) फिर अल्लाह दूसरे व्यक्ति को बुलाएगा और उससे भी वही सवाल करेगा। वह कहेगा : ऐ मेरे रब! मैंने तेरा दिया हुआ माल तेरी बन्दगी की राह में ख़र्च किया और अपनी औलाद के बारे में तेरी मेहरबानी पर भरोसा किया और इस यक़ीन के साथ उन्हें तेरी मेहरबानी के हवाले किया कि तू उन्हें बर्बाद न होने देगा। अल्लाह कहेगा : सुन! अपनी औलाद के सिलसिले में तूने जिस बात पर भरोसा किया था, तेरे मरने के बाद मैंने उन्हें वही चीज़ दी है; वे ख़ुशहाली और आराम की ज़िन्दगी गुज़ार रहे हैं।

तौबा-इस्तिग़फ़ार

अल्लाह की ओर बुलाना बड़ा ही नेक काम है। इस नेक काम में तौबा-इस्तिग़फ़ार, ज़िक्र और दुआ की ख़ास अहमियत है तथा इस काम में बढ़ोत्तरी

और बेहतरी लाने की दिशा में इसका बड़ा अहम रोल है। 'तौबा' के मायने हैं अल्लाह की ओर पलटना और बुरे काम से बचे रहने का अहद करना हैं। 'इस्तिग़फ़ार' के मायने अपने किए पर परदा डालने की दरख़्वास्त के हैं। 'ज़िक्र' का मतलब है, अल्लाह को उसके गुणात्मक नामों (अस्माए-सिफ़ाती) आदि के द्वारा याद करना, उसका स्मरण करना और दुआ का मतलब है, सर्वशक्तिमान अल्लाह से अपनी या किसी और की भलाई के लिए कुछ माँगना, दरख़्वास्त करना।

सच तो यह है कि अल्लाह की ओर पलटने, गुनाहों से तौबा करने तथा ऊपर बयान किए गए दूसरे साधन अपनाने से अल्लाह की बन्दगी का अहद (वचन) ताज़ा हो जाता है तथा इससे नई ताक़त और ऊर्जा मिलती है। इसी के बारे में कुछ हदीसें यहाँ दी जा रही हैं।

(356) अल्लाह के रसूल (सल्ल०) ने फ़रमाया : बंदा गुनाह करने के बाद जब माफ़ी माँगने के लिए अल्लाह की ओर पलटता है तो अल्लाह को अपने बन्दे के पलट आने पर बेहद ख़ुशी होती है; उस व्यक्ति से भी ज़्यादा ख़ुशी होती है जो किसी रेगिस्तान में सफ़र कर रहा था। एक स्थान पर ज़रा दम लेने के लिए उतरा और एक पेड़ के नीचे लेट गया। थका हुआ था, नींद आ गई। थोड़ी देर बाद आँख खुली तो क्या देखता है कि ऊँटनी ग़ायब! उसके ऊपर लदी काठी में खाना और पानी भी उसके साथ ग़ायब! हालत यह है कि वह रेगिस्तान में घिर गया जहाँ न खाना है न पानी, जहाँ सवारी का बस एक ही साधन ऊँट है और वह भी लापता! बेचारे मुसाफ़िर ने इधर-उधर छान मारा पर ऊँटनी न मिली। अंततः मायूस होकर उसी पेड़ के नीचे आकर लेट गया कि अब तो मरना ही है। जब दूसरी ओर करवट ली तो क्या देखता है कि ऊँटनी पास ही खड़ी है। बेहद ख़ुशी में ख़ुदा का शुक्र अदा करना चाहता है। कहना यह चाहता था कि "ऐ ख़ुदा! मैं तेरा शुक्र करता हूँ, तू मेरा रब है, मैं तेरा बंदा हूँ।" लेकिन बेहद ख़ुशी में उसके मुँह से ये शब्द निकल गए : "ऐ अल्लाह! मैं तेरा रब हूँ और तू मेरा बंदा है।"

नबी (सल्ल०) कहते हैं : जब कोई बंदा गुनाह करने के बाद शर्मिन्दा होता है और तौबा करता है तो ख़ुदा को ऊँट वाले उस रेगिस्तानी मुसाफ़िर से भी अधिक ख़ुशी होती है।

(हदीस : बुख़ारी, मुस्लिम)

व्याख्या : इस हदीस में बड़े संक्षेप में बात कही गई है। इस आशय की अन्य रिवायतों को सामने रखकर पूरी बात यहाँ पेश की जा रही है। इसी से अल्लाह के मेहरबान और रहीम होने का अंदाज़ा लगाया जा सकता है।

(357) अल्लाह के रसूल (सल्ल०) ने फ़रमाया : अल्लाह रात को अपना हाथ फैलाता है कि दिन में गुनाह करके जो अल्लाह से दूर हो गया है, तौबा करे और अल्लाह उसे अपने से क़रीब कर ले। इसी प्रकार वह अपना हाथ दिन में फैलाता है कि रात में गुनाह करके अल्लाह से दूर होने वाला बंदा तौबा करे और अल्लाह उसे अपने क़रीब करले (अल्लाह ऐसा इसलिए करता है कि भागे हुए बंदे को अपनी पनाह में ले ले और शैतान की कोई चाल उस पर कारगार न हो सके) यह सिलसिला उस वक़्त तक जारी रहेगा जब तक कि सूरज मग़रिब (पश्चिम) से निकलने न लगे (यानी क़ियामत तक)।

(हदीस : मुस्लिम)

(358) अबू ज़र ग़िफ़ारी (रज़ि०) कहते हैं कि नबी (सल्ल०) ने फ़रमाया : अल्लाह जो बड़ा बुलंद व बरतर और बड़े जलाल वाला है, कहता है :

ऐ मेरे बंदो ! मैंने अपने ऊपर ज़ुल्म व ज़्यादती को हराम ठहरा लिया है और तुम्हारे लिए भी इसे हराम कर दिया है अत: परस्पर एक दूसरे के साथ ज़ुल्म व ज़्यादती न करो।

ऐ मेरे बंदो ! तुममें से हर आदमी सच्चे रास्ते से भटका हुआ है सिवाय उस व्यक्ति के जिसको मैं सही रास्ता दिखा दूँ (हिदायत दे दूँ) अत: तुम मुझसे हिदायत माँगो तो मैं तुम्हें हिदायत दूँगा।

ऐ मेरे बंदो ! तुममें से हरेक भूखा है सिवाय उसके जिसे मैं खिलाऊँ। अत: तुम मुझसे खाना माँगो तो मैं तुम्हें खिलाऊँगा।

ऐ मेरे बंदो !तुममें से हरेक नंगा है सिवाय उसके जिसे मैं पहनाऊँ। तो तुम मुझसे कपड़े माँगों, मैं तुम्हें पहनाऊँगा।

ऐ मेरे बंदो ! तुममें से हरेक गुनाह करता है—दिन में भी और रात में भी, और मैं सारे गुनाह माफ़ कर सकता हूँ अत: तुम मुझसे माफ़ी माँगो, मैं तुम्हारे सारे गुनाह माफ़ कर दूँगा। (हदीस : मुस्लिम)

तौबा कब तक क़बूल होगी ?

(359) नबी (सल्ल०) ने फ़रमाया : अल्लाह बंदे की तौबा सांस उखड़ने से पहले तक क़बूल करता है। (हदीस : तिरमिज़ी)

व्याख्या: यदि किसी का सारा जीवन पाप और गुनाह करने में बीता हो लेकिन सांस उखड़ने से पहले होश व हवास की हालत में सच्चे दिल से अपने गुनाहों से तौबा कर ले तो अल्लाह उसके सभी गुनाह माफ़ कर देगा।

इस हदीस में यह नहीं कहा गया है कि शाबाश ! गुनाह करते रहो, सांस उखड़ने से पहले तौबा कर लेना, सब ठीक-ठाक हो जाएगा; बल्कि यह कहा जा रहा है कि किसी को नहीं पता कि मौत का फ़रिश्ता कब आ धमके इसलिए तुरंत तौबा करो, देर न करो, मौत के फ़रिश्ते का इंतिजार न करो। जो लोग तौबा के लिए मौत का इंतिज़ार करते हैं, आमतौर से वे तौबा किए बग़ैर ही मर जाते हैं !

अल्लाह का ज़िक्र और दुआ

(360) अल्लाह के रसूल (सल्ल०) ने फ़रमाया : अल्लाह फ़रमाता है, जब मेरा बंदा मुझे याद करता है, जब मेरी याद में उसके दोनों होंठ हिलते हैं तो मैं उसके साथ होता हूँ। (हदीस : बुख़ारी)

व्याख्या : "उसके साथ होता हूँ" का मतलब यह है कि अल्लाह, बन्दे को अपनी हिफ़ाज़त में ले लेता है और उसे बुराइयों से बचाता है। इस हदीस से स्पष्ट है कि अल्लाह की याद में जहाँ मन यकसू हो वहीं जीभ को भी उसका साथ देना चाहिए। नमाज़ के दौरान और नमाज़ के बाद जिन दुआओं, अज़कार और मुनाजातों (स्तुतियों) को पढ़ने का हुक्म दिया गया है, उन्हें ज़बान से अदा कीजिए, होंठ ज़रूर हिलने चाहिएँ। इस्लाम में ज्ञान-ध्यान की गुंजाइश नहीं है। अगर ऐसा होता तो फिर नबी (सल्ल०) दुआओं और ज़िक्र की सीख क्यों देते। अतः जिनके होंठ नमाज़ में नहीं हिलते और वे मन ही मन में पढ़ते हैं उन्हें इस बारे में सोचना चाहिए।

ज़िक्र ज़िन्दगी है

(361) अल्लाह के रसूल (सल्ल०) ने फ़रमाया : उस व्यक्ति की मिसाल जो अपने रब को याद करता है; ज़िन्दा आदमी की-सी है; और जो अपने रब को याद नहीं करता वह मुर्दे जैसा है।

(हदीस : बुख़ारी, मुस्लिम)

व्याख्या : इंसानी ज़िन्दगी खाने-पीने पर निर्भर करती है। यदि खाना न मिले तो यह ढाँचा बेजान हो जाता है। इस जिसमानी ढाँचे के भीतर जो रूह है, उसका खाना अल्लाह की याद है। यदि उसे यह खाना न मिले तो उसकी मौत हो जाती है, चाहे उसका ज़ाहिरी खोल (शरीर) कितना ही मज़बूत हो।

ज़िक्र की तालीम

(362) हज़रत साद इब्ने वक़्क़ास (रज़ि०) कहते हैं कि एक देहाती अरबवासी अल्लाह के रसूल (सल्ल०) के पास आया और कहा : मुझे एक 'ज़िक्र' बता दीजिए जिसमें मैं अल्लाह को याद करूँ। नबी (सल्ल०) ने उसे यह ज़िक्र बताया :

ला-इला-ह इल्लल्लाहु वह्दहू ला शरी-क-लहू, अल्लाहु अकबर कबीरा, वल्हम्दु लिल्लाहि कसीरा, व सुबहानल्लाहि रब्बिलआलमीन। लाहौ-ल वला-क़ुव्व-त इल्ला बिल्लाहिल अज़ीज़िल हकीम।

(हदीस : मुस्लिम)

व्याख्या : अल्लाह के सिवा और कोई हस्ती माबूद बनाने, उससे प्रेम करने तथा उसका अनुपालन करने के क़ाबिल नहीं। किसी एतबार से उसका कोई साझी नहीं। अल्लाह सबसे बड़ा है और सारे शुक्र और तारीफ़ें उसी के लिए हैं। वह हर नुक़्स व ऐब से पाक है। किसी के पास कोई क़ुव्वत और तदबीर नहीं है। यदि तदबीर और क़ुव्वत मिल सकती है तो केवल अल्लाह के सहारे मिल सकती है। वह मुकम्मल इक़्तिदार का मालिक तथा इल्म और न्याय के साथ अपने इक़्तिदार को इस्तेमाल करनेवाला है।

ज़िक्र : फ़र्ज़ नमाज़ के बाद

(363) अल्लाह के रसूल (सल्ल०) हर फ़र्ज़ नमाज़ के ख़त्म पर (सलाम फेरने के बाद) यह दुआ पढ़ते :

दुआ : ला इला-ह इल्लल्लाहु वह्दहू ला शरी-क लहू; लहुल्मुल्कु व लहुलहम्दु; व हु-व अला कुल्लि शय्यिन क़दीर। अल्लाहुम-म ला मानि-अ लिमा आतै-त वला मुअति-अ लिमा म-नअता वला यनफ़उ ज़लजद्दि मिनकल्जद्द। (हदीस : बुख़ारी)

व्याख्या : ऊपर जो ज़िक्र बयान किया गया है उसका तर्जुमा यह है : अल्लाह के सिवा कोई बन्दगी के लायक़ नहीं, वह अकेला है, उसका कोई साझी

नहीं। पूरा इक़्तिदार उसी के हाथ में है, सारी तारीफ़ उसी के लिए है। वह हर चीज़ पर क़ुदरत रखता है। ऐ अल्लाह ! तू अपने बन्दों में से किसी को यदि कुछ देना चाहे तो उसे कोई रोकनेवाला नहीं, और जिससे किसी को महरूम करना चाहे तो कोई ताक़त उसे दे नहीं सकती और तेरे सामने किसी क़ुदरतवाले की क़ुदरत कुछ काम नहीं आ सकती।

अल्लाह की याद एक मज़बूत क़िला है

(364) अल्लाह के रसूल (सल्ल०) ने फ़रमाया : मैं तुम्हें ज़्यादा से ज़्यादा अल्लाह को याद करने की नसीहत करता हूँ। अल्लाह के ज़िक्र को एक मिसाल से समझो, जैसे किसी व्यक्ति का पीछा उसके दुश्मन बड़ी तेज़ी से कर रहे हों और वह भागकर किसी मज़बूत क़िले में पनाह ले ले। इसी प्रकार बंदा भी शैतान से बच नहीं सकता जब तक कि ख़ुदा की याद का सहारा न ले। (हदीस : तिरमिज़ी)

व्याख्या : अल्लाह की याद का मतलब है, उसकी हस्ती तथा उसके गुणों (सिफ़ात) का ज़िक्र, उसकी बड़ाई, श्रेष्ठता तथा उसके सर्वोपरि होने का एहसास, उसकी रहमत, मेहरबानी का पुख़्ता शऊर होना और इस बात का पूरा एहसास होना कि अल्लाह किसी को सज़ा देने या किसी से बदला लेने की पूरी ताक़त रखता है। यह शऊर जितना ताक़तवर होगा, उतना ही वह शैतान और नफ़्स के हमलों से महफ़ूज़ रहेगा। ये फ़र्ज़ और नफ़्ल नमाज़ें, ये रात के पिछले पहर का तहज्जुद तथा ये 'अज़्कार' (अल्लाह को याद करने और उसकी तारीफ़ करने के शब्द) और दुआएँ जो नबी (सल्ल०) ने सिखाई हैं, दरअसल दिलो-दिमाग़ में अल्लाह की याद बराबर ताज़ा रखने के उपाय हैं बशर्ते कि उन्हें याद रखा जाए, उनका मतलब और मायने समझे जाएँ और उन्हें बार-बार पढ़ा जाए।

ज़िक्र की अहमियत अल्लाह की नज़र में

(365) अल्लाह के रसूल (सल्ल०) ने कहा, अल्लाह फ़रमाता है : मेरा मोमिन बन्दा मेरे बारे में जैसा यक़ीन रखता है वैसा ही वह मुझे पाएगा। जब वह मुझे याद करता है, मैं उसके साथ होता हूँ। यदि वह मुझे तन्हाई में याद करता है (चुपके-चुपके याद करता है) तो मैं भी उसे तन्हाई में याद करता हूँ। और यदि वह किसी मजलिस में याद करता है तो मैं इंसानों से भी बेहतर मजलिस में याद करता हूँ (यानी फ़रिश्तों की मजलिस में उसकी चर्चा करता हूँ) यदि वह मेरी ओर बालिश्त

(बित्ता) भर बढ़ता है तो मैं उसकी ओर एक हाथ बढ़ता हूँ। यदि वह मेरी ओर एक हाथ बढ़ता है तो मैं उसकी ओर चार हाथ बढ़ता हूँ और यदि वह मेरी ओर चलकर आता है तो मैं दौड़कर उसके पास आता हूँ। (हदीस : बुख़ारी, मुस्लिम)

व्याख्या : एक सच्चे मुसलमान का अक़ीदा यह होता है कि अल्लाह बड़ा ही मेहरबान और रहम करनेवाला है, वह गुनाहों पर परदा डाल देनेवाला और माफ़ करनेवाला है। सो अल्लाह कह रहा है कि बंदा मुझे अपने अक़ीदे और धारणा के अनुसार पाएगा। मैं उसपर मेहरबानी करूँगा तथा दुनिया व आख़िरत में उसकी मदद करूँगा। बाद में आनेवाले अल्फ़ाज़ इसकी उत्तम व्याख्या हैं।

अल्लाह को याद करनेवालों के बारे में ख़ुदा और फ़रिश्तों की बातचीत

(366) अल्लाह के रसूल (सल्ल०) ने फ़रमाया : अल्लाह के कुछ फ़रिश्ते रास्तों में चलते-फिरते हैं यह देखने के लिए कि कहाँ कौन लोग अल्लाह को याद कर रहे हैं। जब वे कुछ लोगों को अल्लाह को याद करते हुए पाते हैं तो अपने साथियों से पुकारकर कहते हैं, यहाँ आओ; यहाँ वे लोग जमा हैं जिनकी तुम्हें तलाश थी। फिर वे आसमान तक अपने परों से घेर लेते हैं। फिर ये फ़रिश्ते अल्लाह के दरबार में हाज़िर होते हैं तो अल्लाह पूछता है, हालाँकि उसे तो सब कुछ पता है, ऐ फ़रिश्तो ! मेरे ये बंदे क्या कहते हैं ? फ़रिश्ते कहते हैं : ये लोग आपका गुणगान करते हैं, आपकी बड़ाई बयान करते हैं, आपका शुक्र अदा करते हैं तथा आपकी बुज़ुर्गी और बड़ाई का एलान करते हैं। अल्लाह कहता है, क्या उन्होंने मुझे देखा है ? फ़रिश्ते कहते हैं : नहीं, आपकी क़सम, उन्होंने आपको नहीं देखा। ख़ुदा कहता है : यदि उन्होंने मुझे देखा होता तो उनका क्या हाल होता ? फ़रिश्ते कहते हैं : ये लोग अगर आपको देख लेते तो उससे ज़्यादा सरगर्मी और जोश के साथ आपकी बंदगी में लग जाते और ज़्यादा से ज़्यादा समय आपके गुणगान में व्यस्त रहते। फिर वह पूछता है : मेरे ये बंदे मुझसे क्या माँगते हैं ? वे कहते हैं : ये लोग तुझसे जन्नत माँगते हैं। वह पूछता है : क्या उन्होंने जन्नत देखी है ? फ़रिश्ते जवाब देते हैं : नहीं, ऐ हमारे रब, उन्होंने जन्नत नहीं देखी है। ख़ुदा पूछता है : यदि जन्नत उन्होंने देख ली होती तो उनका क्या हाल होता ? फ़रिश्ते कहते हैं:

यदि वे जन्नत देख लेते तो उसकी तमन्ना और बढ़ जाती, उसकी चाहत और तलब और अधिक हो जाती। फिर वह पूछता है : ये लोग किस चीज़ से पनाह माँगते हैं? वे कहते हैं : ये लोग जहन्नम से पनाह माँगते हैं। वह पूछता है : क्या उन्होंने जहन्नम देखी है? फ़रिश्ते कहते हैं : नहीं। आपकी क़सम, ऐ हमारे रब! उन्होंने जहन्नम नहीं देखी है। वह पूछता है : यदि उन्होंने जहन्नम को देखा होता तो उनका क्या हाल होता? फ़रिश्ते कहते हैं : यदि उन्होंने जहन्नम को देखा होता तो उससे और ज़्यादा दूर भागते, उससे और अधिक डरते। इसके बाद अल्लाह फ़रिश्तों से कहता है : मैं तुमको गवाह बनाकर कहता हूँ, मैंने उन्हें बख़्श दिया, जहन्नम की आँच अब उन तक न पहुँच सकेगी। मैं उन्हें अपनी रहमत के दामन में छिपा लूँगा।

(हदीस : बुख़ारी)

दुआ के आदाब

(367) हज़रत अबू हुरैरा (रज़ि०) कहते हैं, कि नबी (सल्ल०) ने फ़रमाया : बंदा जब भी दुआ करता है, क़बूल होती है, शर्त यह है कि वह किसी गुनाह या ताल्लुक़ तोड़ने की दुआ न करे और जल्दबाज़ी से काम न ले। लोगों ने पूछा : ऐ अल्लाह के रसूल! जल्दबाज़ी का क्या मतलब है? आप (सल्ल०) ने फ़रमाया : दुआ करनेवाला कुछ इस तरह सोचने लगता है कि मैंने बहुत दुआ की लेकिन क़बूल नहीं हो रही है। बस वह थककर दुआ करना बंद कर देता है।

(हदीस : मुस्लिम)

दुआ करनेवाले के लिए तीन बातों में से एक का वादा

(368) हज़रत अबू सईद ख़ुदरी (रज़ि०) कहते हैं कि नबी (सल्ल०) ने फ़रमाया : जब कोई मुसलमान दुआ करता है और उसमें किसी गुनाह या ताल्लुक़ तोड़ने की बात नहीं होती तो अल्लाह ऐसी दुआ ज़रूर क़बूल करता है। वह तीन बातों में से कोई एक बात उसके हक़ में करता है : या तो इस संसार ही में उसकी दुआ क़बूल कर लेता है, उसका मक़सद पूरा हो जाता है या उसे आख़िरत के लिए उठा रखता है या फिर उसपर आनेवाली किसी बला या मुसीबत को इस दुआ की बदौलत टाल देता है। सहाबा (रज़ि०) ने कहा : तब तो हम बहुत

ज़्यादा दुआ माँगेंगे। आप (सल्ल०) ने फ़रमाया : अल्लाह भी बहुत देनेवाला है। (हदीस : मुस्नद अहमद)

व्याख्या : 'आख़िरत के लिए उठा रखने' का मतलब यह है कि मेरे बंदे ने जो चीज़ मुझसे माँगी है, उससे बेहतर चीज़ आख़िरत में दूँगा। इस हदीस का मक़सद यह है कि दुआ पूरे दिल के साथ माँगो और ख़ूब माँगो। अल्लाह के ख़ज़ाने में कोई कमी नहीं है और उससे बड़ा कोई मेहरबान और दाता नहीं है।

परेशान हाल की दुआ

(369) हज़रत अबू बक्र (रज़ि०) कहते हैं कि अल्लाह के रसूल (सल्ल०) ने फ़रमाया : परेशान और दुखी व्यक्ति यह दुआ पढ़े :

"अल्लाहुम-म रह्मत-क अर्जू फ़ला तकिल्नी इला नफ़्सी तर-फ़-त ऐनिन्, व अस्लिह ली शअ्नी कुल्लहू। ला इला-ह इल्ला अन्-त।" (हदीस : अबू दाऊद)

तर्जुमा : ऐ ख़ुदा! मैं तेरी रहमत का उम्मीदवार हूँ। तू एक पल के लिए भी मुझे मेरे नफ़्स (वासनाओं) के हवाले न कर (यानी अपनी मदद और रहमत से महरूम न कर वरना मैं बर्बाद हो जाऊँगा) तथा मेरे सारे मामलों और हालात को ठीक-ठाक कर दे। तेरे सिवा मेरा कोई माबूद नहीं (इसलिए अपनी परेशानियाँ तेरे सिवा और किसके सामने रखूँ! तू ही मेरी परेशानियों को दूर कर सकता है।)

ख़ाली हाथ लौटाते हुए ख़ुदा को शर्म आती है

(370) अल्लाह के रसूल (सल्ल०) ने फ़रमाया : अल्लाह बहुत हयादार और दानशील है। जब कोई बंदा अपने दोनों हाथ उसके आगे फैलाता है तो नामुराद व ख़ाली हाथ लौटाते उसे शर्म आती है।

(हदीस : अबू दाऊद, तिरमिज़ी)

नमाज़ के बाद दुआ

(371) मुआज़ इब्ने जबल (रज़ि०) कहते हैं कि अल्लाह के रसूल (सल्ल०) ने मेरा हाथ अपने हाथ में लिया और फ़रमाया : ऐ मुआज़! मुझे तुमसे मुहब्बत है। फिर कहा, ऐ मुआज़, मैं तुझे नसीहत करता हूँ: हर नमाज़ के बाद यह दुआ ज़रूर किया करना : 'अल्लाहुम-म अइन्नी अला ज़िक्रि-क व शुक्रि-क व हुस्नि इबादतिक।'

(हदीस : अबू दाऊद, नसई)

तर्जुमा : ऐ ख़ुदा ! मेरी मदद कर अपनी याद में, अपने शुक्र में और अच्छी इबादत में।

व्याख्या : मतलब यह है कि हम अपने बलबूते पर तेरी याद, तेरा शुक्र और तेरी इबादत अच्छी तरह नहीं कर सकते। हाँ, तेरे ही सहारे और तेरी मदद से हम सब कुछ बन सकते हैं—अच्छे शुक्रगुज़ार, अच्छे ज़िक्र करनेवाले और अच्छे इबादतगुज़ार बन सकते हैं। अगर तूने मदद न की तो हम तेरे ज़िक्र से, तेरे शुक्र से गाफ़िल हो जाएँगे और फिर कहीं के न रहेंगे।

इस हदीस और इसके शब्दों के क्रम से स्पष्ट है कि इबादत में बेहतरी उसी वक़्त आ सकती है जब व्यक्ति को इस बात का पुख़्ता शऊर हो कि ख़ुदा की दी हुई नेमतों पर वह पल-बढ़ रहा है और उसपर उसके बड़े एहसान हैं। इसी के साथ वह ख़ुदा की याद की ओर से बेपरवाह भी न हो।

नमाज़ के अन्दर पढ़ी जानेवाली दुआ-ए-सिद्दीक़ी

(372) हज़रत अबू बक्र सिद्दीक़ (रज़ि०) ने अल्लाह के रसूल (सल्ल०) से अर्ज़ किया कि मुझे कोई ऐसी दुआ बता दीजिए जिसे मैं अपनी नमाज़ में (अत्तहीयात और दरूद के बाद) पढ़ा करूँ। आप (सल्ल०) ने फ़रमाया : तुम यह दुआ पढ़ा करो।

अल्लाहुम-म इन्नी ज़लम्तु नफ़्सी ज़ुल्मन् कसीरा, वला यग़्फ़िरुज़्ज़ुनू-ब इल्ला अन-त, फ़ग्फ़िरली मग़्फिरतम मिन इन्दि-क, वर्हम्नी इन्न-क अन्तलग़फ़ूरुर्रहीम। (हदीस : बुख़ारी, मुस्लिम)

तर्जुमा : ऐ अल्लाह ! मैंने गुनाह करके अपने ऊपर बड़ा ज़ुल्म किया है और मेरे गुनाह ऐसे हैं जिन्हें तू ही माफ़ कर सकता है, तेरे सिवा कोई माफ़ करनेवाला नहीं, बस तू अपनी रहमत और मेहरबानी से मेरे गुनाह माफ़ फ़रमा दे। बेशक तू ही माफ़ करनेवाला और रहम करनेवाला है।

इस्लाम की तबलीग़ का काम करनेवालों के लिए कुछ ख़ास दुआएँ

(373) "अल्लाहुम-म इन्नी अस्अलुकस्सबा-त फ़िलअम्रि, व अस्अलु-क अज़ीमतर्रुश्दि व अस्अलु-क शुक-र नेअ्मति-क व हुस-न इबादति-क व अस्अलु-क लिसानन् सादिक़न व क़लबन् सलीमा।"

(हदीस : अल-मुंतक़ा)

तर्जुमा : ऐ अल्लाह ! मैं तुझसे दरख़्वास्त करता हूँ इस्लाम पर जमे रहने की और इस बात की कि तू हिदायत और सही मार्ग पर ज़िन्दगीभर चलते रहने की ताक़त दे। मैं तुझसे दरख़्वास्त करता हूँ कि अपनी नेमतों का शुक्र अदा करने की ताक़त दे तथा इसकी ताक़त दे कि मैं तेरी इबादत बेहतर तरीक़े से करूँ। साथ ही मैं तुझसे सच बोलनेवाली ज़बान, गन्दे जज़बात तथा हर प्रकार के खोट से पाक मन की दरख़्वास्त करता हूँ।

(374) **दुआ** : "अल्लाहुम-म इन्नी अस्अलु-क ईमानय्यु-शिरु क़ल्बी हत्ता आल-म अन्नहू ला युसीबुनी इल्ला मा कतब-त ली व रज़्ज़िनी मिनल् मअीशति बिमा क़स्सम-त ली।" (तर्ग़ीब)

तर्जुमा : ऐ अल्लाह ! मैं तुझसे ऐसे ईमान की दरख़्वास्त करता हूँ जो मेरे मन में इस प्रकार रच बस जाए कि जब भी मुझपर कोई मुसीबत आए तो इस हालत में मुझे यह यक़ीन हो जाए कि यह तेरी ओर से तय थी इसलिए आई (और यह हक़ है कि तेरी ओर से जो चीज़ आएगी मेरे भले के लिए ही आएगी। अत: यह मुसीबत भी मेरी तरबियत ही के लिए आई है) तथा मेरे लिए जितनी रोज़ी तूने तय कर दी है उसपर मुझे राज़ी और मुतमइन कर दे। (दूसरे शब्दों में : ज़्यादा से ज़्यादा माल जमा करने के लालच से दूर रख और तंगहाली की हालत में तुझसे बदगुमान होने से महफ़ूज़ रहूँ।)

(375) **दुआ** : अल्लाहुम-म ला तकिल्नी इला नफ़्सी तर-फ़-त ऐनिन वला तन्ज़िअ मिन्नी सालि-ह मा आतैतनी। (हदीस : अल-मुंज़िरी)

तर्जुमा : ऐ अल्लाह ! तू मुझे पल भर के लिए भी मेरी ख़ाहिशों के हवाले न करना, तथा जो बेहतरीन नेमतें तूने मुझे दी हैं, उनसे मुझे महरूम न करना।

व्याख्या : मतलब यह है कि मुझे ऐसी हालत से दूर रखिए जिसमें इंसान तेरी देख-रेख और सरपरस्ती से महरूम हो जाता है और फिर वह अपने नफ़्स और शैतान के हत्थे चढ़ जाता है जिसे वह किसी खड्ड में गिराकर ही चैन लेता है। इसी तरह इंसान जब ख़ुदा की नेमतों की क़द्र नहीं करता और गुनाह की राह पर चलता है तो न सिर्फ़ यह कि उन नेमतों के अलावा दूसरी नेमतों का मिलना बन्द हो जाता है बल्कि मिली हुई नेमतें भी छिन जाती हैं।

(376) **दुआ** : "अल्लाहुम-म इन्नी अस्अलु-क ख़श-य-त-क फ़िलग़ैबि वश्शहाद-ति-व़ अस्अलु-क कलिमतल-अद्लि फ़िर्रिज़ा वलग़-ज़-बि, व अस्अलुकल-क़स-द फ़िल फ़क़्रि वलग़िना व अस्लु-क नईमन् ला यन्फ़दु व अस्अलु-क क़ुर्र-त ऐनिन ला तनक़तिउ, व अस्अलु-क लज़्ज़तन-न-ज़-रि इला वज्हि-क वश्शौ-क़ इला लिक़ाइ-क फ़ी ग़ैरि ज़र्रा-अ मुज़िर्रतिन वलाफ़ित्नतिन मुज़िल्लतिन। अल्लाहुम-म ज़य्यिन्ना बिज़ीनतिल-ईमानि वज्अल्ना हुदातम्मुहतदीन" (हदीस : तरग़ीब)

तर्जुमा : ऐ अल्लाह ! मैं तुझसे हर हालत में--खुले और छिपे डरते रहने का सवाल करता हूँ, तथा इस बात की दरख़ास्त करता हूँ कि मेरी ज़बान से हर हाल में इंसाफ़ की बात निकले चाहे मैं किसी से खुश हूँ या नाराज़; साथ ही ग़रीबी और खुशहाली—दोनों हालतों में सही राह पर चलना आसान कर दे। मैं तुझसे ऐसी ख़ुशहाली माँगता हूँ जो कभी खत्म न हो और आँखों की वह ठंडक चाहता हूँ जो सदा क़ायम रहे। मैं तेरे फ़ैसले पर राज़ी और मुतमइन रहने की दरख़ास्त करता हूँ। मैं इस बात की दरख़ास्त करता हूँ कि मुझे तेरे दीदार (दर्शन) की लज़्ज़त मिले और मेरे अन्दर तुझसे मुलाक़ात का शौक़ पैदा हो। तुझसे दुआ है कि मैं किसी तबाह करनेवाले दुख या आज़माइश में न पड़ूँ जो सही राह से भटका दे। ऐ अल्लाह ! हमारी ज़िन्दगी को ईमान से आरास्ता कर दे और हम लोगों के लिए सीधी राह पर चलना और सीधी राह दिखाना आसान कर दें।

व्याख्या : 'दीदार की लज़्ज़त' और 'रब से मुलाक़ात का शौक' ही वह चीज़ है जो सख़्त से सख़्त इम्तिहान में उन लोगों के क़दम मज़बूती से जमा देती है और पहाड़ की-सी मज़बूती अता करती है जो हक़ की ओर बुलाने और उसकी तबलीग़ का काम करते हैं। इस्लामी इतिहास गवाह है कि ऐसे लोगों को किन—किन आज़माइशों से गुज़रना पड़ा। यह ख़ूबी न हो तो वह सब्र पैदा नहीं हो सकता जिसकी ज़रूरत है। दुआ के आख़िरी टुकड़े में यह दरख़ास्त की गई है कि ख़ुदा हमें कथनी और करनी के अन्तर से बचाए रखे।

(377) **दुआ** : अल्लाहुम्मज्अल्ना हादी-न मुह्तदी-न, ग़ैर-जाल्ली-न वला मुज़िल्लीन। सल्मन् लिऔलियाइ-क व अदुव्वन लिआदाइ-क। नुहिब्बु बिहुब्बि-क मन अहब्ब-क व नुआदी बिअ़दावति-क मन ख़ाल-फ़-क।

(तर्ग़ीब, अल-मुंज़िरी)

तर्जुमा : ऐ अल्लाह ! हमको हक़ की दावत देने और हक़ पर अमल करने की तौफ़ीक़ दे। हम न ख़ुद गुमराह हों और न गुमराही की ओर बुलाने वाले बनें। तेरे मार्ग पर चलने वालों के हम दोस्त बनें और तेरे दुश्मनों के दुश्मन। जो तुझसे प्रेम करें, हमें उनसे प्रेम हो; जो तेरे मुख़ालिफ़ हों, हम उनके दुश्मन हों।

(378) **दुआ** : अल्लाहुम्मक़्सिम लना मिन ख़श्यति-क मा यहूलु बैनना व बै-न मआसी-क व मिन ताअति-क मा तुबल्लिग़ुना बिही जन्न-त-क। व मिनल यक़ीनि मा युहव्विनु अलैना मसाइबद्दुनिया। व मत्तिअना बिअस्माइना व अब्सारिना व क़ुव्वतिना मा अह्यैयतना, वज्अलहुल्वारि-स मिन्ना। वज्अल् सअ्रना अला मन ज़लमना, वन्सुरना अला मन् आदाना। वलातज्अल् मुसीबतना फ़ी दीनिना, वला तज्अलिद्दुनिया अकब-र हम्मिना वला मब्ल-ग़ इल्मिना। वला तुसल्लित अलैना मन्ला यर्हमुना। (हदीस : तर्ग़ीब, अल-मुंज़िरी)

तर्जुमा : ऐ अल्लाह ! हमारे मन में अपना भय डाले दे जो हमें तेरी नाफ़रमानी से बचाए। हमें अपनी फ़रमाँबरदारी की ताक़त दे जिसकी बदौलत हम तेरी जन्नत में जगह पा सकें। हमें पक्का यक़ीन दे जिसकी वजह से दुनिया के दुख हल्के-फुल्के और आसान हो जाते हैं। जब तक हम ज़िन्दा रहें, हमारी सुनने, देखने की ताक़त और जिसमानी ताक़त बरक़रार रख। (यानी हम ज़िन्दगीभर अंधेपन, बहरेपन और जिसमानी कमज़ोरी से बचे रहें।) हमारे ऊपर जो ज़ुल्म करे, तू उसका बदला ले और जो हमसे दुश्मनी करे, उसके मुक़ाबले में तू हमारी मदद कर। हमें किसी दीनी मुसीबत में गिरफ़्तार होने से बचा और दुनिया के सुख-आराम हासिल करने को अस्ल मक़सद न बनने दे। ऐसा भी न हो कि हमारा इल्म दुनिया के इल्म तक ही सीमित रह जाए (और आख़िरत के इल्म से कोरे रह जाएँ) और हमारे ऊपर ऐसे लोगों को न थोप दे जो हम पर रहम न करें।

(379) **दुआ** : अल्लाहुम-म अस्लिह ज़ात-बैनिना व अल्लिफ़ बै-न क़ुलूबिना वह्दिना सुबुलस्सलामि व नज्जिना मिनज़्ज़ुलुमाति इलन्नूर।

(हदीस : तर्ग़ीब, अल-मुंज़िरी)

तर्जुमा : ऐ अल्लाह ! हमारे आपसी सम्बन्धों को ठीक-ठाक कर दे (और यदि बिगड़ गए हों तो उन्हें दुरुस्त कर दे) हमारे दिलों को

जोड़े रख और आपस में मनमुटाव हो गया हो (दिल टूट गए हों) तो उन्हें जोड़ दे। हमें सलामती के रास्ते दिखा और उसी रास्ते पर आगे बढ़ा। हमें अन्धरों से निकालकर रौशनी में ला॥

व्याख्या : मतलब यह है कि इस्लाम की दावत व तब्लीग़ के अनेक मरहलों में हमारी रहनुमाई कर ताकि हम 'दारुस्सलाम' (यानी जन्नत के हक़दार बन सकें) और अंधेरों से निकालकर हमें रोशनी में ले आ।

हज़रत अब्दुल्लाह इब्ने-अब्बास (रज़ि०) की दुआ

(380) "अल्लाहुम-म इन्नी अस्अलु-क ईमानल्लायर्तद्दु, व नईमंलायन्फ़दु व मुराफ़क़-त-नबीय्यि-क मुहम्मदिन सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम फ़ी आला जन्नतिलख़ुल्द।" (हदीस : मुस्नद अहमद)

तर्जुमा : ऐ अल्लाह! मैं तुझसे ऐसा ईमान माँगता हूँ, जो अपनी जगह से पीछे न हटे। न ख़त्म होनेवाली (जन्नत की) नेमतें माँगता हूँ और सदा बाक़ी रहनेवाली सबसे अच्छी जन्नत में तेरे नबी मुहम्मद (सल्ल०) का साथ पाने की दुआ करता हूँ।

व्याख्या : हज़रत अब्दुल्लाह इब्ने-मसऊद (रज़ि०) की दुआ के आख़िरी जुमले का मतलब यह है कि ऐ अल्लाह! मुझे दुनिया में अपना वफ़ादार और रसूल (सल्ल०) का हक़ पहचाननेवाला और उनसे मुहब्बत करनेवाला बना, क्योंकि उसके बिना जन्नत में उनका साथ मिलना संभव नहीं है। हज़रत इब्ने-मसऊद को क़ुरआन की सूरा निसा की आयत 69 याद थी, जिसमें अल्लाह ने कहा है : जो लोग अल्लाह और रसूल (सल्ल०) की ख़ुशदिली के साथ और उनकी इज़्ज़त करते हुए और उनसे मुहब्बत करते हुए उनका कहा मानेंगे उन्हें उन लोगों का साथ नसीब होगा जिन पर अल्लाह ने अपनी ख़ास मेहरबानी की है यानी नबियों, सिद्दीक़ों, शहीदों का साथ नसीब होगा। तनिक सोचिए! ये कितने अच्छे साथी हैं?

दुनिया बनाने से नफ़रत और आख़िरत की याद

इस्लाम की ताक़त और तबलीग़ का काम करनेवालों को ताक़त देने तथा उनके कामों में बरकत पैदा करने के लिए दुनिया बनाने के मुक़ाबले में आख़िरत को याद करने और आख़िरत बनाने की फ़िक्र ज़रूरी है। इस सिलसिले में कुछ हदीसें पेश की जा रही हैं।

रुसवाई की असल वजह दुनिया की मुहब्बत और मौत से नफ़रत है

(381) अल्लाह के रसूल (सल्ल०) ने सहाबा (रज़ि०) से फ़रमाया : बहुत जल्द वह समय आनेवाला है जब मेरी उम्मत (समुदाय) पर दूसरी क़ौमें इस तरह टूट पड़ेंगी जिस तरह खानेवाले लोग दस्तरख़ान पर गिरते हैं। किसी ने कहा : ऐ अल्लाह के रसूल! जिस दौर की बात आप कर रहे हैं, क्या उस दौर में हम मुसलमान इतनी कम तादाद में होंगे कि हमें निगल जाने के लिए क़ौमें एकजुट होकर हमारे ऊपर टूट पड़ेंगी? आप (सल्ल०) ने कहा : नहीं, उस समय तुम्हारी तादाद कम न होगी बल्कि तादाद में तुम बहुत ज़्यादा होगे मगर तुम सैलाब के झाग की तरह (बेवज़न और बेक़ीमत) हो जाओगे। तुम्हारे दुश्मनों के दिल से तुम्हारा रोब-दबदबा निकल जाएगा और तुम बुज़दिली के शिकार हो जाओगे। एक व्यक्ति ने पूछा : ऐ अल्लाह के रसूल! यह बुज़दिली किस वजह से आएगी? आप (सल्ल०) ने फ़रमाया : इस वजह से कि लोग दुनिया से मुहब्बत करने लगेंगे और (अल्लाह के मार्ग में) जान देने से नफ़रत हो जाएगी। (हदीस : अबू दाऊद)

ऐशो-आराम

(382) मुआज़ इब्ने जबल (रज़ि०) कहते हैं कि अल्लाह के रसूल (सल्ल०) ज़ब मुझे यमन का गवर्नर बनाकर भेज रहे थे तो उस अवसर पर आप (सल्ल०) ने मुझे यह नसीहत की : मुआज़! ऐशो-आराम से बचना, क्योंकि ख़ुदा के बंदे ऐशपरस्त नहीं होते। (हदीस : मिश्कात)

व्याख्या : मतलब यह है कि तुम हाकिम बनकर जा रहे हो; वहाँ ज़िन्दगी की लज़्ज़तों से फ़ायदा उठाने और हाथ रंगने का खूब मौक़ा मिल सकता है। अतः तुम दुनियादार हाकिमों की सोच अपने अन्दर न पैदा करना क्योंकि यह ख़ुदा की बंदगी से मेल नहीं खाती।

ख़तरे की घंटी

(383) अल्लाह के रसूल (सल्ल०) ने फ़रमाया : मुझे अपनी उम्मत (मुस्लिम समुदाय) के बारे में दो बातों का ज़्यादा अंदेशा है। एक, दुनिया और दुनिया के साज़ोसामान से मुहब्बत, और दूसरा यह कि उम्मत अपनी दुनिया बनाने की लम्बी-चौड़ी स्कीमें बनाने में लग जाएगी। दुनिया से मुहब्बत के नतीजे में यह उम्मत हक़ से दूर जा पड़ेगी और दुनिया बनाने के मंसूबे उसका ध्यान आख़िरत की ओर से हटा देंगे। (ऐ लोगो !) यह दुनिया कूच कर चुकी है, अपनी मंज़िल की ओर चली जा रही है। और आख़िरत कूच कर चुकी है और अपनी मंज़िल की ओर आ रही है। इनमें से हर एक के माननेवाले हैं जो उससे प्रेम करते हैं। ऐसी हालत में अच्छा तो यह होगा कि तुम दुनिया के पुजारी न बनो (बल्कि आख़िरत पर नज़र रखो)। तुम इस वक़्त अमल की दुनिया में हो और अभी हिसाब का समय नहीं आया है; और कल तुम आख़िरत में होगे जहाँ (पूरी ज़िन्दगी का) हिसाब पेश होगा, वहाँ अमल का कोई मौक़ा नहीं होगा। (हदीस : मिशकात)

(384) हज़रत अब्दुल्लाह इब्ने मसऊद (रज़ि०) से रिवायत है कि नबी (सल्ल०) ने फ़रमाया : तुम लोग ज़मीन जायदाद न बनाओ वरना तुम्हारे अन्दर दुनिया का लोभ-लालच पैदा हो जाएगा।

(हदीस : मुस्नद अहमद)

व्याख्या : ज़ाहिर है, आदमी जब ज़्यादा से ज़्यादा जायदाद बनाने की फ़िक्र करेगा तो धीरे-धीरे आख़िरत की ओर से ध्यान हटता चला जाएगा और यह चीज़ मुस्लिम समुदाय के मक़सदे-वुजूद के ख़िलाफ़ है। अब से पहले दुनियापरस्तों की कोई कमी न थी कि इसको पूरा करने के लिए एक और उम्मत पैदा की जाती। इस उम्मत की ज़िम्मेदारी तो यह है कि वह आख़िरत को अपना मक़सद बनाए तथा दुनिया के साज़ोसामान में से केवल उतना ही अपने पास रखे जो आख़िरत की तैयारी के लिए ज़रूरी है।

इस हदीस में नबी (सल्ल०) दुनिया से बेताल्लुक़ होने की तालीम नहीं दे रहे

हैं, बल्कि एक संभावित खतरे से आगाह कर रहे हैं। वह ख़तरा यह है कि व्यक्ति जिस काम में अपना समय और ताक़त लगाता है, उससे उसे लगाव हो जाता है और उसका मन उसी में रचा-बसा रहता है। चुनाँचे आख़िरत के चाहनेवालों को इस ख़तरे से सदा चौकन्ना रहना चाहिए।

'ज़ुह्द' का सही तसव्वुर

(385) नबी (सल्ल०) ने फ़रमाया : ज़ुह्द इस बात का नाम नहीं है कि इंसान जायज़ और हलाल चीज़ों को अपने लिए हराम (वर्जित) ठहरा ले। (यानी राहिब और जोगी बन जाए।) और यह भी 'ज़ुह्द' नहीं है कि इंसान अपनी माल-दौलत को बर्बाद कर दे (यानी अपने पास माल रखे ही न) ज़ुह्द तो यह है कि व्यक्ति को अपने माल-जायदाद के मुक़ाबले में ख़ुदा की बख़्शिश और इनाम पर कहीं अधिक भरोसा हो; तथा जब तुम पर कोई आफ़त आए तो उसकी वजह से जो फल और इनाम तुम्हें मिलनेवाला है, उसके बाक़ी रहने की तमन्ना तुम्हारे मन में हो। (हदीस : तिरमिज़ी)

व्याख्या : 'ज़ुह्द' व 'तक़वा' का जो तसव्वुर पाया जाता है, इस हदीस ने उसकी जड़ काट दी और यह बताया कि 'ज़ुह्द' इस बात का नाम नहीं है कि इंसान अपनी तमाम फ़ितरी ज़रूरतों और तमाम ताल्लुक़ात और रिश्तों-नातों से नाता तोड़कर किसी गुफा में जा बैठे। बल्कि असल 'ज़ुह्द' तो यह है कि इस संसार में रहते हुए व्यक्ति ख़ुदा की बंदगी के मार्ग पर चले। सच तो यह है कि अलाह की बंदगी (ईश-भक्ति) का मार्ग कठिनाइयों और मुसीबतों से भरा हुआ है। यदि किसी की नज़र अल्लाह के इनाम व महरबानियों पर केन्द्रित न हो तो वह मार्ग में आनेवाली कठिनाइयों को झेलने का साहस नहीं कर सकता।

दुनिया या आख़िरत

(386) अल्लाह के रसूल (सल्ल०) ने फ़रमाया : जो व्यक्ति दुनिया से मुहब्बत करेगा वह अपनी आख़िरत को बर्बाद कर डालेगा और जिसे अपनी आख़िरत ज़्यादा प्यारी होगी वह अपनी दुनिया को नुक़सान पहुँचाएगा। तो ऐ लोगो ! तुम हमेशा रहनेवाली ज़िन्दगी को ख़त्म हो जानेवाली ज़िन्दगी पर तरजीह दो। (हदीस : मिशकात)

व्याख्या : मतलब यह कि दुनिया और आख़िरत—दोनों में से एक का चयन ज़रूरी है। या तो दुनिया को अपना मक़सद बनाओ या आख़िरत को। यदि

दुनिया को अपना मक़सद बनाते हो तो आख़िरत में मिलनेवाले सुख-चैन और ख़ुशियों से महरूम रहोगे और यदि आख़िरत (परलोक) को अपना मक़सद बनाते हो तो हो सकता है कि तुम्हारी दुनिया तबाह-बर्बाद हो जाए, मगर यह ज़रूरी नहीं। लेकिन इसके बदले जो इनाम आख़िरत में मिलेगा, वह सदा-सदा के लिए बाक़ी रहनेवाला है। जो चीज़ आख़िरत की राह पर चलने से तबाह होगी, वह तो ख़त्म होनेवाली ही है। ख़त्म होनेवाली चीज़ की क़ुरबानी देकर यदि हमेशा रहनेवाला इनाम मिले तो यह घाटे का सौदा नहीं, बल्कि सरासर नफ़े का सौदा है।

अक़्लमंद कौन और बेवक़ूफ़ कौन ?

(387) नबी (सल्ल०) ने फ़रमाया : चालाक और होशियार वह व्यक्ति है जिसने अपनी इन्द्रियों को क़ाबू में रखा (और दुनिया की मुहब्बत की ओर नहीं खिंचा) तथा मरने के बाद आनेवाले जीवन के लिए (अच्छे) काम किए। बेवक़ूफ़ वह है जिसने ख़ुद को दुनिया की मुहब्बत की राह पर डाल दिया और ख़ुदा से झूठी उम्मीदें लगाईं।

(हदीस : तिरमिज़ी)

व्याख्या : यानी हक़ की पैरवी करने के बजाए व्यक्ति मन की अंधी-बहरी ख़ाहिशों के पीछे दौड़ रहा है और उम्मीद यह रखता है कि हर हालत में अल्लाह उसे जन्नत में जगह देगा। क़ुरआन जिस समय नाज़िल हो रहा था, यहूदी और ईसाई इसी ग़लतफ़हमी में पड़े हुए थे; और हमारे बहुत-से मुसलमान भाई भी ऐसी ही झूठी तमन्नाओं और आरज़ूओं के सहारे जी रहे है !

अल्लाह से शरमाने का सही मतलब

(388) अल्लाह के रसूल (सल्ल०) ने फ़रमाया : अल्लाह से अच्छी तरह शर्म करो। हमने कहा : ख़ुदा का शुक्र है, ऐ अल्लाह के रसूल, हम उससे शर्म करते हैं। आप (सल्ल०) ने कहा : अल्लाह से शर्म करने का कोई महदूद मतलब नहीं है। अल्लाह से पूरे तौर पर सही मायनों में शर्म करने का मतलब यह है कि तुम अपने दिमाग़ और दिमाग़ में आनेवाले बुरे ख़्यालों की निगरानी करो (यानी बुरे विचारों से अपने दिलो-दिमाग़ को बचाओ) तथा पेट में जानेवाले खाने की भी देखभाल करो (कि हराम खाना पेट में न जाने पाए) साथ ही मौत और तबाही को भी याद करो (कि एक दिन मरकर सड़-गल जाना है, फिर

ज़िन्दा होकर अपने कामों का हिसाब देना है।) इसके बाद आप (सल्ल०) ने फ़रमाया : जो व्यक्ति आख़िरत चाहता है उसे दुनियावी साज-सज्जा और बनाव-शृंगार में दिलचस्पी नहीं होती तथा वह आख़िरत को दुनिया पर तरजीह देता है। यह है मतलब अल्लाह से पूरी तरह शर्मो-हया करने का ! (हदीस : तिरमिज़ी)

आख़िरत की पहली मंज़िल, क़ब्र है

(389) हज़रत उस्मान (रज़ि०) के आज़ाद किए हुए ग़ुलाम 'हानी' कहते हैं कि उस्मान (रज़ि०) जब किसी क़ब्र पर खड़े होते तो रोते-रोते उनकी दाढ़ी आँसुओं से भीग जाती। उनसे पूछा गया कि जन्नत और जहन्नम की याद आने पर आप नहीं रोते और क़ब्र की याद आने पर रोने लगते हैं? आख़िर इसकी क्या वजह है? उन्होंने कहा : मैंने अल्लाह के रसूल (सल्ल०) को यह कहते सुना है कि क़ब्र आख़िरत का पहला पड़ाव है। यदि इस पहले मरहले में (हिसाब-किताब से) उसे छुट्टी मिल गई तो आगे आनेवाला मरहला उसके लिए आसान होगा। और यदि यहाँ उसे छुटकारा नहीं मिल सका तो आगे आनेवाले मरहले उससे कहीं कठिन होंगे। मैंने तो नबी (ल्ल०) को यह भी कहते सुना है : मैंने जितने भयानक दृश्य देखे हैं, क़ब्र का दृश्य उनमें सबसे अधिक भयानक है।

हानी कहते हैं कि मैंने हज़रत उस्मान (रज़ि०) को देखा, आप एक क़ब्र के पास खड़े यह शेर पढ़ रहे थे :

"फ़इन तंजु मिन्हा, तंजु मिन ज़ीअज़ीमतिन'
वइल्ला फ़इन्नी लाइख़ालु-क नाजिया।" (हदीस : तिरमिज़ी)

तर्जुमा : (ऐ उस्मान !) यदि तू क़ब्र की मुसीबत से निजात पा जाए तो एक बड़े संकट से निजात पा जाएगा और यदि यहाँ छुटकारा न मिला तो मेरे विचार से तुम्हें नजात न मिल सकेगी।

व्याख्या : यहाँ 'क़ब्र' से मुराद 'बरज़ख' की ज़िन्दगी है यानी इंसान की मौत और क़ियामत के बीच की मुद्दत। मौत चाहे किन्हीं हालात में और किसी शक्ल में आए और चाहे कहीं भी आए मरने वाले प्रत्येक व्यक्ति से तीन सवाल किए जाएँगे : (1) तुम्हारा रब (पालनहार) कौन है? (2) तुम्हारा रसूल (पैग़म्बर) कौन है? क्या तुम उसे पहचानते हो? (3) तुम्हारा धर्म क्या है? तुमने किस जीवन

व्यवस्था के अन्तर्गत जीवन व्यतीत किया? ये तीन बातें प्रत्येक व्यक्ति से पूछी जाएँगी। जो सही जवाब देगा कामयाब होगा; और जो नहीं दे सकेगा, नाकाम व नामुराद होगा। और सही जवाब वही दे सकेगा जिसने कथनी और करनी से अल्लाह को अपना रब (पालनहार) माना होगा, जिसने रसूल (पैग़म्बर) को मानकर उसकी पैरवी की होगी, जिसने ईश्वरीय जीवन-पद्धति के अनुसार जीवन व्यतीत किया होगा। यह एक बड़ा ही सख़्त मरहला है जिससे प्रत्येक व्यक्ति को गुज़रना है, अत: इस संक्षिप्त परीक्षा के लिए तैयारी करनी चाहिए वरना हर सवाल के जवाब में आदमी यही कहेगा : हाय अफ़सोस! मैं इस सवाल का जवाब नहीं दे सकता। फिर जब वह संक्षिप्त प्रश्नों के उत्तर नहीं दे सकेगा तो क़ियामत के विस्तृत प्रश्नों का उत्तर कैसे दे सकेगा?

एक दूसरी हदीस का आख़िरी जुमला यह है : क़ब्र या तो आदमी के लिए जन्नत की फुलवारियों में से एक फुलवारी साबित होगी या जहन्नम के गढ़ों में से एक गढ़ा। यानी क़ब्र के सवालों के जवाब के मुताबिक़ फ़ैसला हो जाएगा कि आदमी आख़िरकार कहाँ पहुँचेगा, जन्नत में या जहन्नम में।

क़ियामत अचानक आएगी

(390) अल्लाह के रसूल (सल्ल०) ने फ़रमाया : दो व्यक्ति कपड़ा खरीद और बेच रहे होंगे, कपड़ा उन दोनों के बीच में होगा कि इतने में क़ियामत आ जाएगी। वे दोनों कपड़े का मामला न कर सकेंगे, यहाँ तक कि वे दोनों कपड़े तह करके रख भी न सकेंगे।

एक व्यक्ति अपनी ऊँटनी का दूध दुहकर घर में ले जाएगा कि इतने में क़ियामत आ जाएगी और वह उसे पीने की मोहलत न पाएगा। कोई व्यक्ति पानी का हौज़ भर रहा होगा कि इतने में क़ियामत आ जाएगी और वह अपने मवेशियों को पानी न पिला सकेगा। आदमी लुक़मा मुँह तक ले जाएगा, इतने में क़ियामत आ जाएगी और वह नहीं खा सकेगा। (हदीस : मुस्नद अहमद)

क़ियामत के मैदान में जब हिसाब होगा

(391) हज़रत अनस इब्ने मालिक (रज़ि०) कहते हैं कि अल्लाह के रसूल (सल्ल०) मस्जिदे-नबवी में बैठे थे। अचानक आप हँसे यहाँ तक कि सामने के दाँत दिख गए। उमर (रज़ि०) ने आप (सल्ल०) से हंसने की वजह पूछी। आप (सल्ल०) ने फ़रमाया : मेरी उम्मत के दो

व्यक्ति अल्लाह के सामने गए। उनमें से एक ने कहा : ऐ मेरे रब ! उस व्यक्ति से मेरा हक़ दिलवाइए (जिसने भाई होते हुए भी मेरा हक़ दबा लिया)। अल्लाह उससे कहेगा : इस व्यक्ति के आमालनामे (कर्म-पत्र) में कोई नेकी है ही नहीं, फिर किस तरह तू अपना हक़ उससे ले सकेगा? वह कहेगा : ऐ मेरे रब ! यदि उसके आमालनामे में नेकियाँ बाक़ी नहीं हैं तो मेरे गुनाह उसके खाते में डाल दिए जाएँ ताकि मुझे जो सताया गया, उसका कुछ बदला तो मिले। इतना कहते ही नबी (सल्ल०) बेइख़्तियार रोने लगे। फिर बोले : निस्संदेह वह बड़ा भयंकर दिन होगा। उस दिन लोग चाहेंगे कि उनके गुनाहों का बोझ उनपर से उतर जाए। (अल मुंज़िरी, हाकिम)

व्याख्या : इस हदीस में जो क़िस्सा बयान हुआ है, उसका संबंध बन्दों के हक़ों से है। इसकी अहमियत क्या है इस बारे में कई हदीसें इससे पहले आ चुकी हैं।

बेलाग इनसाफ़

(392) अल्लाह के रसूल (सल्ल०) ने फ़रमाया : जिसने अपने ग़ुलाम (घर के स्थायी नौकर) को दुनिया में नाहक़ एक कोड़ा भी मारा होगा, क़ियामत के दिन उससे बदला लिया जाएगा।

(हदीस: मोज़म तबरानी)

(393) अबू हुरैरा (रज़ि०) कहते हैं कि अल्लाह के रसूल (सल्ल०) ने फ़रमाया : दुनिया में जिन लोगों के हक़ छीन लिए गए होंगे, क़ियामत के दिन उनका हक़ उन्हें वापस दिलाया जाएगा, यहाँ तक कि बे सींग की बकरी का बदला सींग वाली बकरी से दिलाया जाएगा।

(हदीस : मुस्लिम, तिर्मिज़ी)

व्याख्या : मतलब यह है कि उस दिन पूरा इंसाफ़ होगा। मामूली हक़ भी यदि दुनिया में किसी ने दबाया होगा तो उस जालिम से वह हक़ दिलाया जाएगा। इस हदीस में बकरी का उल्लेख मिसाल के तौर पर किया गया है।

ज़िंदगी का पूरा हिसाब देना होगा

(394) अल्लाह के रसूल (सल्ल०) ने फ़रमाया : क़ियामत के दिन अल्लाह की अदालत से आदमी हट नहीं सकेगा जब तक कि उससे पाँच बातों के बारे में पूछगछ न कर ली जाएगी। उससे पूछा जाएगा

कि (1) उम्र किन कामों में गुज़ारी (2) दीन का इल्म हासिल किया तो उस पर कहाँ तक अमल किया (3) माल किन रास्तों से हासिल किया (4) हासिल किया हुआ माल किस प्रकार खर्च किया (5) जिस्म को किन कामों में घुलाया ? (हदीस : तिर्मिज़ी)

सिफ़ारिश का हक़दार कौन ?

(395) हज़रत अबू हुरैरा (रज़ि०) ने अपनी उस हदीस में, जिसमें सिफ़ारिश का उल्लेख किया गया है, कहा है कि नबी (सल्ल०) ने फ़रमाया : मैं उन लोगों के लिए सिफ़ारिश (दुआ व दरख़ास्त) करूँगा जिन्होंने इस बात की गवाही दी होगी कि अल्लाह के सिवा कोई माबूद नहीं और मुहम्मद, अल्लाह के रसूल हैं और गवाही इस प्रकार दी कि उनकी ज़बान ने दिल की और दिल ने ज़बान की तस्दीक़ (पुष्टि) की होगी। (हदीस : मुस्नद अहमद)

व्याख्या : मतलब यह है कि सच्चे दिल से तौहीद और रिसालत को माना हो, उसका एलान किया हो, मुनाफ़िक़ाना (कपटाचारी) ईमान न हो, कथनी और करनी में टकराव न हो।

(396) नबी (सल्ल०) ने फ़रमाया : क़ियामत के दिन मेरी सिफ़ारिश उसके लिए होगी जिसने सच्चे दिल के साथ 'ला इला-ह इल्लल्लाह' कहा होगा। एक दूसरी रिवायत में है कि दिल में 'ला इला-ह इल्लल्लाह' का यक़ीन हो। (हदीस : बुख़ारी)

व्याख्या : नबी (सल्ल०) का फ़रमाना देखने में शब्दों की दृष्टि से बहुत संक्षिप्त है लेकिन अपने मतलब और मायने की दृष्टि से अत्यंत व्यापक है। कहने का मतलब यह है कि जिस व्यक्ति ने तौहीद, रिसालत और आख़िरत तथा उनके बुनियादी तक़ाज़ों को न माना, और माना भी तो केवल कहने की हद तक माना, तो ऐसे लोग नबी (सल्ल०) की सिफ़ारिश से महरूम रहेंगे। नबी (सल्ल०) तो ऐसे लोगों की सिफ़ारिश करेंगे जो इस्लाम के हक़ होने पर पक्का यक़ीन रखते हों और जिन्होंने दिल से ईमान लाने के तक़ाज़े पूरे किए हों। उन्होंने अपनी हद तक पूरी कोशिश की होगी कि अल्लाह उनसे ख़ुश हो जाए और जन्नत में वे स्थान पा सकें। इन सबके होते हुए भी यदि उनकी ज़िन्दगी में कुछ ख़ामियाँ और दाग़-धब्बे रह गए तो इन्हें दूर करने और जन्नत में जगह मिलने की नबी (सल्ल०) सिफ़ारिश करेंगे।

(397) अल्लाह के रसूल (सल्ल०) ने (अपने क़बीला क़ुरैश से)

फ़रमाया : ऐ क़ुरैशी लोगो ! अपने आपको जहन्नम से बचाने की फ़िक्र करो। (याद रखना) मैं तुम लोगों को ख़ुदा की पकड़ से कुछ भी नहीं बचा सकता। ऐ अब्दे-मनाफ़ के ख़ानदानवालो ! मैं तुमसे अल्लाह के अज़ाब को कुछ भी नहीं टाल सकता। ऐ अब्बास इब्ने-अब्दुल मुत्तलिब (सगे चचा) ! मैं अल्लाह के यहाँ तुम्हारे कुछ भी काम नहीं आ सकता। ऐ सफ़ीया (सगी फूफी) ! मैं तुमसे अल्लाह के अज़ाब को तनिक भर भी नहीं टाल सकता। ऐ मेरी बेटी फ़ातमा ! तुम मेरे माल में से जो चाहे माँग लो, लेकिन अल्लाह के अज़ाब को कुछ भी हटाना मेरे बस में नहीं। अतः ख़ुद को (आख़िरत के अज़ाब से) बचाने की फ़िक्र करो; ईमान और अमल (अच्छे कर्म) ही वहाँ काम आएँगे।

(हदीस : बुख़ारी, मुस्लिम)

व्याख्या : बुख़ारी और मुस्लिम शरीफ़ में एक लम्बी हदीस है जिसमें जंग के मैदान में दुश्मन फ़ौज से हाथ आए हुए माले-ग़नीमत में ख़ियानत के बारे में बात की गई है। बताया गया है कि क़ियामत के दिन हर ख़ियानत करनेवाला नबी (सल्ल०) से कहेगा : ऐ अल्लाह के रसूल ! मेरी मदद कीजिए, मुझे इस गुनाह के बुरे अंजाम से बचाइए। इसके जवाब में नबी (सल्ल०) फ़रमाएँगे : मैं (आज) तेरे लिए कुछ नहीं कर सकता; मैंने तो यह बात दुनिया में तुम्हें बता दी थी।

यहाँ यह बात ध्यान देने लायक़ है कि केवल माले-ग़नीमत में की गई ख़ियानत का यह अंजाम न होगा बल्कि हर तरह की ख़ियानत के बारे में यही मामला होगा।

आदमी के अंग-अंग गवाही देंगे

(398) हज़रत अनस (रज़ि०) कहते हैं कि हम लोग अल्लाह के रसूल (सल्ल०) के पास बैठे हुए थे। इतने में आप (सल्ल०) हँस पड़े। फिर खुद ही पूछा : तुम्हें पता है, मैं क्यों हंसा ? हमने कहा : अल्लाह और उसके रसूल ही ज़्यादा बेहतर जानते हैं। आप (सल्ल०) ने फ़रमाया : मुझे इस बात पर हंसी आई कि क़ियामत के दिन एक मुजरिम बंदा ख़ुदा से कहेगा : ऐ रब ! आज के दिन मेरे साथ ज़ुल्म तो न होगा ? जवाब में अल्लाह कहेगा : हाँ, आज तुझ पर ज़ुल्म न होगा। तो वह कहेगा : आज मैं अपने सिलसिले में किसी दूसरे को गवाह न मानूँगा, केवल मेरे अंगों से ही गवाही ली जाए। अल्लाह कहेगा : आज तू ख़ुद अपना हिसाब लेने के लिए काफ़ी है और तेरा आमालनामा

(कर्म-पत्र) लिखनेवाले फ़रिश्ते गवाही देने के लिए काफ़ी हैं। (नबी सल्ल० फ़रमाते हैं) इसके बाद उसकी ज़बान बन्द कर दी जाएगी और उसके अन्य अंगों को हुक्म होगा कि तुम इसके कामों की गवाही दो। उसके अंग उसके एक-एक अमल की गवाही देगें। फिर उसकी ज़बान खुल जाएगी और बोलने की ताक़त लौट आएगी। इस पर वह अपने अंगों को कोसते हुए कहेगा : तुमपर ख़ुदा की मार ! तुम पर ख़ुदा की ओर से फिटकार ! मैं तो दुनिया में तुम्हारी तरफ़दारी करता था और आज तुमने मेरे ख़िलाफ़ गवाही दी ! (हदीस : मुस्लिम)

व्याख्या : मतलब यह है कि मैं तुम्हें जहन्नम के अज़ाब से बचाने के लिए ख़ुदा से बहस कर रहा था मगर तुमने अपने आपको ख़ुद ही फँसा लिया।

इंसान के अमल के बारे में धरती की गवाही

(399) हज़रत अबू हुरैरा (रज़ि०) कहते हैं कि नबी (सल्ल०) ने (क़ुरआन की) यह आयत "यौमइज़िन तुहद्दिसो अख़बारहा" (उस दिन ज़मीन अपने हालात बयान करेगी 99: 4) पढ़ी और लोगों से पूछा : पता है, ज़मीन के अपने हालात बयान करने का क्या मतलब है? लोगों ने कहा : अल्लाह और उसके रसूल ही ज़्यादा बेहतर जानते हैं? आप (सल्ल०) ने कहा : इसका मतलब यह है कि क़ियामत के दिन ज़मीन बताएगी कि मेरी पीठ पर फ़लाँ बंदा या बंदी ने फ़लाँ समय यह (अच्छा या बुरा) काम किया। (हदीस : तिर्मिज़ी)

सबसे हल्का अज़ाब कैसा होगा

(400) अल्लाह के रसूल (सल्ल०) ने बताया : जहन्नम में सबसे हल्का और मामूली अज़ाब यह होगा कि आदमी के दोनों पैरों तले दो अंगारे रख दिए जाएँगे, जिनसे उसका दिमाग़ इस प्रकार खौलेगा जैसे चूल्हे पर रखी हुई हाँडी खौलती है। (हदीस : बुख़ारी व मुस्लिम)

(401) नबी (सल्ल०) ने फ़रमाया : जो लोग जन्नत में जाएँगे, सदा ख़ुशहाल रहेंगे, ग़रीबी, तंगदस्ती और भूख का मुँह कभी न देखेंगे। उनके कपड़े कभी पुराने न होंगे। उनकी जवानी कभी ख़त्म न होगी। जन्नत में ऐसी-ऐसी नेमतें हैं जिन्हें न किसी आँख ने देखा, न किसी कान ने सुना और न किसी इंसान के दिल में उनका ख़याल आया। (हदीस : सही-मुस्लिम)

(402) नबी (सल्ल०) ने बताया : जब जन्नती लोग जन्नत में पहुँच जाएँगे तो एक फ़रिश्ता एलान करेगा : ऐ जन्नतवालो ! अब तुम कभी बीमार न पड़ोगे, हमेशा तन्दुरुस्त रहोगे। अब तुम्हें मौत भी न आएगी, तुम सदा ज़िन्दा रहोगे। अब तुम जवान रहोगे, बुढ़ापे के कभी शिकार न होगे। तुम ख़ुशहाल ज़िन्दगी बसर करोगे और तुम्हें कभी भी तंगदस्ती, ग़रीबी और भूख-प्यास का सामना न करना पड़ेगा, और जैसा कि अल्लाह ने कहा है : यही वह जन्नत है जिसका तुमसे वादा किया गया था, तुम इसके वारिस (उत्तराधिकारी) बनाए गए हो उन कामों के बदले में जो तुम करते थे। (हदीस : मुस्लिम, तिरमिज़ी)

(403) अबू सईद ख़ुदरी (रज़ि०) से रिवायत है कि नबी (सल्ल०) ने फ़रमाया: अल्लाह जन्नतवालों से कहेगा ऐ जन्नतवालो ! वे लोग जवाब में कहेंगे : ऐ हमारे रब ! हम हाज़िर हैं। सारी भलाइयाँ और नेमतें आपके क़ब्ज़े में हैं, बताया जाए कि क्या हुक्म है। अल्लाह उनसे पूछेगा : क्या तुम अपने कामों का बदला पाकर ख़ुश हो ? वे जवाब में कहेंगे : ऐ हमारे रब ! हम क्यों न ख़ुश होंगे जबकि आपने हमें वे नेमतें प्रदान कीं जो किसी को भी नहीं दीं। अल्लाह उनसे कहेगा : क्या मैं तुम्हें इससे बड़ी और बेहतर चीज़ न दूँ ? वे कहेंगे : इससे बढ़कर और बेहतर चीज़ और क्या हो सकती है ? अल्लाह कहेगा : मैं सदा तुमसे ख़ुश रहूँगा, अब कभी तुमसे नाराज़ न हूँगा।

(हदीस : बुख़ारी, मुस्लिम, तिरमिज़ी)

लापरवाह आदमी के लिए जन्नत नहीं

(404) अल्लाह के रसूल (सल्ल० ने फ़रमाया : जिस मुसाफ़िर को अंदेशा होता है कि वह रास्ते ही में रह जाएगा और ठंडे समय में आराम से अपनी मंज़िल पर ख़ैरियत के साथ न पहुँच सकेगा, वह अपनी नींद क़ुर्बान करके रात के शुरू में ही सफ़र शुरू कर देता है और ठंडे समय में अपनी मंज़िल पर पहुँच जाता है। तो ऐ ख़ुदा के माल के ख़रीदारो ! ख़ुदा का माल क़ीमती है। सुनो, ख़ुदा के माल का नाम 'जन्नत' है। (हदीस : तिरमिज़ी)

व्याख्या : नबी (सल्ल०) ने इन तीन वाक्यों में दो अहम बातों की ओर मुसलमानों का ध्यान दिलाया है। पहली बात तो यह कि मुसलमान का असल वतन आख़िरत (परलोक) है। वह दुनिया में कमाने आया है, यहाँ कमाई करके वह

अपने असल वतन को लौट जाएगा और यहाँ की कमाई हुई दौलत वहाँ उसके काम आएगी। नबी (सल्ल०) मुसलमानों को होशियार और चौकन्ना कर रहे हैं कि इसी दुनिया को अपना वतन न बना लेना और सफ़र के दौरान सो न जाना वरना मंज़िल पर पहुँचना कठिन होगा।

दूसरी बात, जिसे नबी (सल्ल०) ने हमारे सामने रखना चाहा है, वह समझौता है जो हमारे और ख़ुदा के बीच हुआ है। हमने जानते-बूझते इस्लाम क़बूल किया और कलमा पढ़ा तो मानो यह कहा कि परवरदिगार! हमने अपने को तेरे हवाले किया। और मानो यह भी कह दिया कि हमने अपनी जान-माल और सारी कुव्वतों और सलाहियतों को तेरे हाथ बेच दिया कि इसके बदले जन्नत में जगह मिलेगी तो रब ने वायदा किया कि हाँ, हम तुम्हें जन्नत में बसाएँगे, मगर हम आज़माकर देखेंगे कि तुम अपने इस ख़रीदो-फ़रोख़्त के मामले में सच्चे हो या झूठे। यदि सच्चे साबित हुए, हमारी माँग पर अपना माल दिया, अपनी जान हाज़िर कर दी तो तुम्हारा लेन-देन मुकम्मल होगा और तब यक़ीनन हम तुम्हें ऐसी जन्नत में आबाद करेंगे जहाँ सलामती ही सलामती होगी और जो सदा-सदा के लिए आबाद रहेगी। "आख़िर, हमसे बढ़कर वादा पूरा करनेवाला कौन हो सकता है?" (क़ुरआन : 9 : 111) "और हमसे ज़्यादा सच बोलने वाला कौन हो सकता है।" (क़ुरआन, 4 : 122) हमारे बुज़ुर्ग सहाबा किराम का इतिहास हमारे सामने है। उन्होंने जन्नत के बदले अल्लाह के हाथ अपना सब कुछ बेच दिया। अल्लाह ने लगातार बीस-बाईस साल तक उन्हें आज़माकर देख लिया और पाया कि ये अपने समझौते में सच्चे हैं। अन्ततः मक्का से हिजरत करने के नवें साल उनका आख़िरी टेस्ट तबूक की जंग के बाद लिया और फ़रमाया :

> "निस्संदेह अल्लाह ने मुसलमानों की जान-माल इस बात के बदले ख़रीद ली है कि उन्हें समय आने पर जन्नत में बसाया जाएगा। ये लोग अपनी जान हथेलियों पर लेकर अल्लाह के लिए इस्लाम के दुश्मनों से लड़ते रहे। वे उन्हें क़त्ल करते थे और ख़ुद भी क़त्ल होते थे, मगर किसी भी हालत में जान लड़ाने से जी न चुराते थे। जन्नत के इस वायदे का ज़िक्र तौरात, इंजील और क़ुरआन—सबमें हुआ है। इस वायदे का पूरा करना अल्लाह ने अपने ऊपर ज़रूरी ठहरा लिया है; और अल्लाह से बढ़कर अपना वादा पूरा करनेवाला और कौन हो सकता है? अतः ऐ अपनी जान और माल अल्लाह के हाथ बेचनेवालो! तुम अपना सौदा पक्का हो जाने पर ख़ूब ख़ुशियाँ मनाओ

कि थोड़ी-सी क़ुर्बानी के बदले हमेशा के सुख के घर में स्थान मिलेगा। बेशक यह बहुत बड़ी कामयाबी है।" (क़ुरआन, 9 : 111)

हज़रत आइशा (रज़ि०) ने जब इब्ने-ज़ुबैर से नाता तोड़ा

(405) हज़रत औफ़ इब्ने मालिक (रज़ि०) से रिवायत है कि लोगों ने हज़रत आइशा (रज़ि०) से जाकर कहा कि आपने फ़लाँ चीज़ जो बेच दी या किसी को दे दी, उसके बारे में (आपके भाँजे) इब्ने ज़ुबैर ने यह कहा है कि यदि ख़ाला (मौसी) नहीं मानेंगी तो मैं उन पर पाबन्दी लगा दूँगा। (यानी बैतुलमाल-राज्यकोष से जो कुछ वज़ीफ़ा (पेंशन) उन्हें मिलता है उसे रोक लूँगा और केवल उनका ज़रूरी ख़र्चा ही दूँगा।) हज़रत आइशा (रज़ि०) ने पूछा : क्या यह बात उसने कही है? लोगों ने कहा : हाँ, यह उन्होंने ही कहा है। तब हज़रत आइशा (रज़ि०) ने कहा : मैं क़सम खाती हूँ, अब कभी इब्ने-ज़ुबैर से न बोलूँगी। और फिर उनसे नाता तोड़ लिया। जब (ख़ाला और भाँजे की आपस की) दूरी ज़्यादा बढ़ गई तो इब्ने-ज़ुबैर ने हज़रत आइशा (रज़ि०) के पास लोगों की सिफ़ारिश पहुँचाई लेकिन वे न मानीं। बोलीं कि इब्ने-ज़ुबैर के बारे में किसी की सिफ़ारिश न सुनूँगी और न अपनी क़सम तोड़ूँगी। यह सूरतेहाल इब्ने-ज़ुबैर के लिए बड़ी तकलीफ़देह थी। इसलिए इस बार उन्होंने मिस्वर इब्ने-मख़रमा और अब्दुर्रहमान इब्ने-अस्वद को क़सम देकर कहा कि तुम लोग कैसे भी हज़रत आइशा (रज़ि०) के पास मुझे पहुँचाने का रास्ता निकालो। उन्होंने मुझसे नाता तोड़ लिया है और इसपर अड़े रहने की क़सम खा ली है।

मिस्वर और अब्दुर्रहमान उन्हें लिए हुए हज़रत आइशा (रज़ि०) के घर पहुँचे। कुंडी खटखटाई, सलाम किया और कहा : क्या हम अंदर आ सकते हैं? आइशा (रज़ि०) बोलीं : हाँ, आ सकते हो। इन दोनों ने कहा : क्या हम सब आ सकते हैं? उन्होंने कहा : हाँ, तुम सब आ सकते हो। वे पर्दे में यह न जान सकीं कि इन लोगों के साथ इब्ने-ज़ुबैर भी हैं। जब ये लोग मकान के भीतर पहुँचे तो इब्ने-ज़ुबैर उस जगह पहुँच गए जहाँ हज़रत आइशा (रज़ि०) परदे में बैठी हुई थीं। वहाँ पहुँचते ही इब्ने-ज़ुबैर उनसे चिमट गए। इधर वे रो रहे थे और मना रहे थे; क़सम देकर कह रहे थे कि आप मेरी ग़लती माफ़ कर दें। उधर से मिस्वर और अब्दुर्रहमान क़सम देकर कह रहे थे कि आप इब्ने-ज़ुबैर का क़ुसूर माफ़ कर दें और उनसे बोलना शुरू कर

दें। इन दोनों सहाबियों ने उन्हें याद दिलाया कि नबी (सल्ल०) ने फ़रमाया है कि किसी मुसलमान के लिए जायज़ नहीं कि वह तीन दिन से अधिक समय तक नाता तोड़े रहे। जब सब लोगों ने हज़रत आइशा (रज़ि०) पर दबाव डाला और याद दिलाया कि वे गुनाह का काम कर रही हैं तो वे रोकर कहने लगीं कि मैंने क़सम खा ली है और क़सम का मामला बड़ा गंभीर होता है। मतलब यह कि ये दोनों लोग हज़रत आइशा (रज़ि०) को बराबर समझाते रहे। यहाँ तक कि वे क़सम तोड़कर इब्ने-ज़ुबैर से बोलीं और कफ़्फ़ारा के बतौर उन्होंने चालीस ग़ुलाम आज़ाद किए और ज़िन्दगीभर उनका यह हाल रहा कि जब कभी यह ग़लती उन्हें याद आ जाती, रोने लगतीं; इतना रोतीं कि उनका दुपट्टा आँसुओं से भीग जाता। (हदीस : बुख़ारी)

ख़ुदा और रसूल से मुहब्बत

(406) हज़रत अनस (रज़ि०) कहते हैं कि एक व्यक्ति नबी (सल्ल०) के पास आया और पूछा : क़ियामत कब आएगी? आप (सल्ल०) ने फ़रमाया : भले आदमी, तुमने इसके लिए कुछ तैयारी भी की है? उसने कहा : मैंने इसके लिए कुछ ज़्यादा तैयारी तो नहीं की, हाँ, अल्लाह और उसके रसूल से मुहब्बत रखता हूँ। नबी (सल्ल०) बोले: इंसान को उन्हीं लोगों का साथ मिलेगा, जिनसे वह मुहब्बत करता है। अनस (रज़ि०) कहते हैं : इस्लाम क़बूल करने के बाद मुसलमानों को कभी इतनी ख़ुशी नहीं हुई जितनी ख़ुशी नबी (सल्ल०) की इस बात से हुई। (हदीस : बुख़ारी, मुस्लिम)

व्याख्या : नबी (सल्ल०) के साथी दीन पर अमल करने में बहुत आगे थे, इसकी गवाही ख़ुद क़ुरआन ने दी है। लेकिन इसके बावजूद वे अपने बारे में बहुत फ़िक्रमंद रहते थे। नबी (सल्ल०) की बात सुनकर उन्हें ख़ुश होना ही चाहिए था और ऐसे ही फ़िक्रमंद लोगों से ऐसी बात कही भी जा सकती है।

छोटे गुनाह

(407) अनस (रज़ि०) अपने समय के लोगों से कहते हैं कि तुम लोग ऐसे बहुत से काम करते हो जो तुम्हारी निगाहों में बाल से ज़्यादा हल्के होते हैं (यानी जिनकी कोई अहमियत नहीं होती) लेकिन हम उन्हें नबी (सल्ल०) के समय में दीन-ईमान के लिए ख़तरनाक समझते थे। (हदीस : बुख़ारी)

व्याख्या : कोई व्यक्ति छोटे-छोटे गुनाहों को "हल्का" समझने लगे तो इसके मायने ये हैं कि एक दिन ऐसा आएगा कि वह बड़े-बड़े गुनाह करेगा और फिर भी उसे हल्का समझेगा।

शहादत का बदला

(408) अबू क़तादा (रज़ि०) नबी (सल्ल०) के बारे में कहते हैं कि आप (सल्ल०) ने अपने ख़ुतबे (तक़रीर) में यह बात कही कि अल्लाह पर ईमान और भरोसा रखना तथा उसके मार्ग में जिहाद करना सबसे बेहतर काम है। इसपर एक व्यक्ति उठा और उसने कहा : ऐ अल्लाह के रसूल ! यदि मैं अल्लाह के मार्ग में अपनी जान क़ुरबान कर दूँ तो क्या मेरे पिछले गुनाह माफ़ हो जाएँगे ? आप (सल्ल०) ने कहा : हाँ, यदि तू ख़ुदा की राह में जिहाद करे और दुश्मन के मुक़ाबले में जमा रहे, भागे नहीं, साथ ही यह नियत भी रहे कि इसका बदला अल्लाह के पास मिलेगा और फिर इसी हालत में तू जान से मार दिया जाए तो तेरे सारे गुनाह माफ़ कर दिए जाएँगे। थोड़ी देर के बाद आप (सल्ल०) ने पूछा : अभी तुमने क्या सवाल किया था ? उसने कहा : मैंने यह पूछा था कि यदि अल्लाह के मार्ग में लड़ते हुए क़त्ल कर दिया जाऊँ तो क्या मेरे सारे गुनाह माफ़ हो जाएँगे ? आप (सल्ल०) ने कहा : हाँ, माफ़ हो जाएँगे शर्त यह है कि दुश्मन के मुक़ाबले में जमे रहो और अल्लाह से उसका बदला पाने के मक़सद से लड़ो तथा मैदाने-जंग से न भागो। हाँ, क़र्ज़ जो तुम्हारे ज़िम्मे किसी का बाक़ी रह गया है, वह माफ़ न होगा; मुझे जिबरील (अलैहि०) ने यह बात अभी बताई है।

(हदीस : मुस्लिम)

व्याख्या : जब किसी व्यक्ति के दिल में आख़िरत का यक़ीन बैठ जाता है तो वह रात-दिन इसी फ़िक्र में रहता है कि मेरे पिछले गुनाह कैसे माफ़ होंगे।

इस हदीस में जिहाद और शहादत का इनाम मिलने की जो बात है, वह तो अपनी जगह पर है ही, इसके अलावा इससे बन्दों के हक़ की अहमियत भी वाज़ेह होती है। यदि कोई व्यक्ति किसी का क़र्ज़ अदा कर सकता है लेकिन न तो उसने अदा किया है और न माफ़ कराया है तो ख़ुदा के दरबार में अपनी जान क़ुरबान करके भी क़र्ज़ की जवाबदेही से बच नहीं सकेगा।

ज़्यादा नमाज़ पढ़ने की ताकीद

(409) नबी (सल्ल०) के ख़ादिम रबीया इब्ने कअब कहते हैं कि मैं रात के समय नबी (सल्ल०) के पास रहता था। आप (सल्ल०) के लिए वुज़ू का पानी लाता और अन्य ज़रूरतों को पूरा करने का भी इन्तिज़ाम करता था। एक दिन आप (सल्ल०) ने कहा : तुम कुछ माँगो। मैंने कहा : मैं आपके साथ जन्नत में रहना चाहता हूँ। आप (सल्ल०) ने कहा : और कुछ? मैंने कहा : मुझे बस यही चाहिए, तो आप (सल्ल०) ने कहा : यदि तुम मेरे साथ जन्नत में रहना चाहते हो तो ज़्यादा से ज़्यादा नमाज़ पढ़कर मेरी मदद करो। (हदीस : मुस्लिम)

व्याख्या : मतलब यह है कि यदि तुम मेरे साथ जन्नत में रहना चाहते हो तो पूरी दिलचस्पी और शौक़ के साथ अल्लाह की बंदगी करो, ज़्यादा से ज़्यादा नमाज़ पढ़ो, इसके बिना जन्नत में मेरा साथ नहीं पा सकते।

इस्लाम क़बूल करने से पहले के गुनाह

(410) हज़रत अम्र इब्ने आस (रज़ि०) कहते हैं कि अल्लाह ने जब मेरे मन में इस्लाम क़बूल करने का जज़बा पैदा किया तो मैं नबी (सल्ल०) के पास आया। मैंने कहा : आप अपना हाथ बढ़ाएँ, मैं आपके हाथ पर बैअत करूँगा (इस बात का अहद करूँगा कि अब मुझे एक ख़ुदा की बंदगी करनी है।) जब आप (सल्ल०) ने अपना हाथ बढ़ाया तो मैंने अपना हाथ खींच लिया। आप (सल्ल०) ने पूछा : ऐ अम्र ! यह तुमने अपना हाथ क्यों खींच लिया? मैंने कहा कि एक शर्त लगाना चाहता हूँ। आप (सल्ल०) ने पूछा : वह शर्त क्या है? मैंने कहा : शर्त यह है कि मेरे पिछले गुनाह माफ़ कर दिए जाएँ। आप (सल्ल०) ने कहा : ऐ अम्र ! क्या तुम्हें नहीं पता कि इस्लाम उन सारे गुनाहों को ख़त्म कर देता है जो इस्लाम क़बूल करने से पहले व्यक्ति ने किए होते हैं। (हदीस : बुख़ारी)

व्याख्या : यहाँ समझने की बात यह है कि ग़ैर-मुस्लिम लोगों के ऊपर क़ुरआन की तालीम और नबी (सल्ल०) के किरदार का असर कुछ इस प्रकार पड़ता था कि हर व्यक्ति को अपनी नजात (मोक्ष) की फ़िक्र हो जाती थी तथा उसे यह यक़ीन भी हो जाता था कि उसका पिछला धर्म उसके कुछ काम आनेवाला नहीं। यह बात भी उसके सामने वाज़ेह हो जाती थी कि इस दुनिया के बाद एक और ज़िन्दगी आनेवाली है और वही इस लायक़ है कि आदमी उसके लिए फ़िक्रमंद हो।

अज़ाब का हक़दार कौन ?

(411) अब्दुल्लाह इब्ने उमर (रज़ि०) कहते हैं कि एक बार हम नबी (सल्ल०) के साथ जिहाद की मुहिम पर जा रहे थे। आप (सल्ल०) कुछ लोगों के पास से गुज़रे और पूछा कि तुम कौन लोग हो ? उन्होंने कहा : हम मुसलमान हैं। अब्दुल्लाह (रज़ि०) कहते हैं कि वहाँ एक औरत खाना पका रही थी। लकड़ी झोंक-झोंककर आग भड़का रही थी। उसकी गोद में बच्चा था। जब आग के शोले भड़कते तो वह अपने बच्चे को दूर कर लेती। फिर वह नबी (सल्ल०) के पास आई और बोली : आप अल्लाह के रसूल हैं ? नबी (सल्ल०) ने कहा : हाँ। उसने कहा : मेरे माँ-बाप आप पर क़ुर्बान, क्या अल्लाह सबसे बढ़कर मेहरबान नहीं है ? आप (सल्ल०) ने कहा : क्यों नहीं ? उसने कहा : क्या अल्लाह अपने बंदों पर उससे ज़्यादा मेहरबान नहीं है जितनी माँ अपने बच्चे पर होती है ? आप (सल्ल०) ने कहा : हाँ, वह माँ से भी ज़्यादा अपने बन्दों पर रहम करनेवाला है। यह सुनकर वह औरत बोली : लेकिन माँ तो अपने बच्चे को आग में डालना पसंद नहीं करती ! यह सुनकर नबी (सल्ल०) ने सिर झुका लिया और रोने लगे। थोड़ी देर बाद सिर उठाकर उससे कहा : अल्लाह तो उस सरकश, घमंडी ही को अज़ाब देगा जिसने ख़ुदा के एक होने (तौहीद) के कलमे को मानने से इनकार कर दिया हो। (हदीस : मिशकात)

व्याख्या : ज़ाहिर है कि यह औरत मुसलमान थी और अल्लाह के मेहरबान होने और उसकी दूसरी सिफ़ात से वाक़िफ़ थी। फिर उसने ये सवाल क्यों किए ? इसकी वजह यह है कि उसके मन में आख़िरत की चिन्ता बैठ गई थी। वह सब कुछ कर लेने के बाद यह जानती थी कि जन्नत को पाने के लिए बस इतना ही कुछ काफ़ी नहीं है; और उसे दोज़ख़ का खटका लगा हुआ था। नबी (सल्ल०) ने उसे जो जवाब दिया उसका मतलब यह था कि ऐ ख़ुदा की बंदी ! जहन्नम का हक़दार तो वह बनेगा जिसके सामने इस्लाम की तालीम आई तो उसे मानने, और ज़िन्दगी में अपनाने से इनकार कर दिया। तू तो मुसलमान है, तुझे वह जहन्नम में क्यों डालेगा ? अल्लाह ऐसे लोगों को जहन्नम में नहीं डालेगा, जिन्होंने इस्लाम क़बूल किया हो और उसके तक़ाज़े पूरे कर रहे हों। ऐसे फ़िक्रमंद मुसलमान के लिए नबी (सल्ल०) का यह जवाब अपने अन्दर बड़ी हिकमत रखता था।

ग़ुलामों पर सख़्ती करने का एहसास

(412) हज़रत आइशा (रज़ि०) कहती हैं कि एक व्यक्ति नबी (सल्ल०) के पास आया और कहा : ऐ अल्लाह के रसूल ! मेरे कुछ ग़ुलाम हैं जो मुझसे झूठ बोलते हैं, अमानत में ख़ियानत करते हैं और मेरी नाफ़रमानी करते हैं (जिसकी वजह से) मैं उन्हें बुरा-भला कहता हूँ और उन्हें मारता-पीटता हूँ। बताइए, उनको लेकर (आख़िरत में) मेरा क्या बनेगा ?

नबी (सल्ल०) ने फ़रमाया : जब क़ियामत का दिन आएगा तो उनकी ख़ियानत, नाफ़रमानी और झूठ तथा तुम्हारी सज़ा जो उन्हें देते हो, दोनों का हिसाब लगाया जाएगा। यदि तुम्हारी सज़ा उनके जुर्म से कम हुई तो यह तुम्हारे हक़ में बेहतर होगा। लेकिन यदि तुम्हारी सज़ा उनके जुर्म से बढ़ी हुई निकली तो जितनी ज़्यादा सज़ा तुमने दी थी उसका बदला तुमसे लिया जाएगा। यह सुनकर वह व्यक्ति एक कोने में जाकर फूट-फूटकर रोने लगा। यह देखकर नबी (सल्ल०) ने उससे पूछा : क्या तुमने अल्लाह का यह क़ौल क़ुरआन मजीद में नहीं पढ़ा ? "व नज़उलमवाज़ीन बिल्क़िस्ति" "यानी हम क़ियामत के दिन इनसाफ़ के तराज़ू में हर शख़्स के अमल तौलेंगे और किसी की तौल में कोई कमी-बेशी नहीं होने दी जाएगी। किसी के आमालनामे में ज़रा—सा भी अच्छा या बुरा अमल होगा, हम उसे सामने लाएँगे और हिसाब लेने के लिए हम काफ़ी हैं।" यह सुनकर उस व्यक्ति ने कहा : मेरे लिए अब ज़्यादा बेहतर यही है कि मैं इन ग़ुलामों को अलग कर दूँ। ऐ अल्लाह के रसूल मैं आपको गवाह बनाता हूँ कि मैंने इन्हें आज़ाद कर दिया। (हदीस : तिरमिज़ी)

व्याख्या : दुनिया में बहुत से लोग अपने नौकर-चाकर को मारते-पीटते रहते हैं। फिर ऐसी क्या बात थी कि यह व्यक्ति नबी (सल्ल०) के पास आया और क्यों उसने यह पूछा कि इन ग़ुलामों को लेकर आख़िरत में मुझे किन हालात से गुज़रना पड़ेगा ? अगर उसके मन में आख़िरत की फ़िक्र न होती तो यह सवाल उसके मन में नहीं उठ सकता था। फिर यह देखिए कि नबी (सल्ल०) की बात सुनकर वह फूट-फूटकर रोने लगता है और आख़िरकार उन ग़ुलामों को आज़ाद कर देता है ताकि यह अमल उसकी पहली ज़्यादतियों के लिए जो हो सकता है, ग़ुलामों के मामले में हो गई हों, कफ़्फ़ारा (प्रायश्चित) बन सके।

ख़ुबैब (रज़ि०) के बारे में दुश्मन की गवाही

(413) हज़रत अबू हुरैरा (रज़ि०) ने फ़रमाया : ख़ुबैब (रज़ि०) एक क़ैदी के रूप में क़बीला बनू हारिस के यहाँ रहे। यहाँ तक कि उन्होंने उन्हें जान से मार देने का फ़ैसला ले लिया (क्योंकि बद्र की लड़ाई में ख़ुबैब रज़ि० ने हारिस को क़त्ल किया था)। जब ख़ुबैब (रज़ि०) को इस फ़ैसले की जानकारी हुई तो उन्होंने हारिस की एक लड़की से नाफ़ के नीचे के बालों की सफ़ाई के लिए उस्तरा माँगा। उसने उस्तरा दे दिया। इतने में उसका बच्चा उनके पास आ गया। वह किसी काम में लगी हुई थी और बच्चे को ख़ुबैब (रज़ि०) के पास जाते नहीं देख पाई थी। ख़ुबैब (रज़ि०) ने उसे प्यार से अपनी रान पर बिठा लिया। जब बच्चे पर उसकी नज़र पड़ी तो वह सहम गई कि शायद यह क़ैदी उसके बच्चे को क़त्ल कर देगा। ख़ुबैब (रज़ि०) ने हालात को भाँप लिया। बोले, तुम्हें डर है कि मैं इस बच्चे को क़त्ल कर दूँगा? नहीं, मैं ऐसा हरगिज़ नहीं कर सकता (क्योंकि इस्लाम ने बेक़ुसूर को क़त्ल करने से मना किया है)। उस औरत ने कहा : मैंने ख़ुबैब (रज़ि०) से अच्छे किरदार वाला क़ैदी नहीं देखा। (हदीस : बुख़ारी)

व्याख्या : यह एक लम्बी हदीस का टुकड़ा है जिसमें हज़रत ख़ुबैब (रज़ि०) की गिरफ़्तारी और उन्हें क़त्ल किए जाने की घटना का वर्णन है। ख़ुबैब (रज़ि०) को यह बात अच्छी तरह मालूम है कि किसी वक़्त ये लोग उन्हें क़त्ल कर देनेवाले हैं। ऐसी हालत में भी दुश्मन का बच्चा उनके पास आता है जिसका काम वे बड़ी आसानी से तमाम कर सकते थे लेकिन वे उसकी माँ को इत्मीनान दिलाते हैं कि डरो मत, मैं उसे जान से नहीं मारूँगा। क्योंकि जिस दीन पर मैं ईमान लाया हूँ वह दीन दुश्मनों के बच्चों को भी क़त्ल करने की इजाज़त नहीं देता। उस औरत ने सच कहा कि "ख़ुबैब (रज़ि०) से बेहतर किरदार वाला क़ैदी मैंने नहीं देखा।" यही वजह है कि जब ख़ुबैब (रज़ि०) को वे क़त्ल करने के लिए ले गए तो, न तो वह रोए और न बदहवास हुए, हाँ, यह ज़रूर कहा कि जब इस्लाम और ईमान की हालत में मुझे क़त्ल किया जा रहा है तो मुझे कोई फ़िक्र नहीं कि किस करवट जान दे रहा हूँ। मेरे साथ यह जो कुछ होनेवाला है यह सब अल्लाह को ख़ुश करने के लिए और उसके दीन के लिए होने जा रहा है। ऐसी हालत में मुझे इसकी क्या फ़िक्र कि मेरे जिस्म के कितने टुकड़े किए जाते हैं।

'अस्हाबे-सुफ़्फ़ा' (चबूतरेवालों) की शान

(414) हज़रत अबू हुरैरा (रज़ि०) कहते हैं कि 'अस्हाबे-सुफ़्फ़ा[1]' में से सत्तर व्यक्तियों को मैंने इस हालत में देखा है कि उनमें से किसी के पास भी चादर न थी (जो पूरे जिस्म को ढकती हो)। या तो वे एक तहमद बाँधे होते या कम्बल जिसे वे अपनी गर्दनों से बाँध लेते; किसी का तहमद आधी पिंडली तक पहुँचता और किसी का टख़नों तक ! वे उसे अपने हाथों से थामे रखते कि कहीं शर्मगाह न खुल जाए।

(हदीस : बुख़ारी)

मुस्अब बिन उमैर (रज़ि०) की शान

(415) हज़रत ख़ब्बाब (रज़ि०) कहते हैं कि हम लोगों ने अल्लाह को खुश करने की ख़ातिर मक्का छोड़कर मदीने की ओर हिजरत की और अल्लाह के रसूल (सल्ल०) के साथ मदीना आ गए। आगे चलकर हममें से कुछ लोग इन्तिक़ाल कर गए; उन्हें अपना दुनियावी इनाम कुछ भी न मिला। ऐसे ही लोगों में से मुसअब बिन उमैर (रज़ि०) हैं। वे उहुद की लड़ाई में शहीद हुए। उनके जिस्म पर एक मोटे कम्बल के सिवा कुछ भी न था। अत: वही उनका कफ़न बना और उसकी भी हालत यह थी कि जब सिर को उससे ढका जाता तो पैर खुल जाते और पैरों को ढका जाता तो सिर खुला रह जाता। तब हमसे पैग़म्बर (सल्ल०) ने फ़रमाया : अच्छा, सिर को कम्बल से ढक दो और पैरों पर 'इज़ख़िर' (एक ख़ास घास) डाल दो। अल्लाह के लिए हिजरत करनेवालों में ऐसे लोग भी हैं जिन्हें इस्लाम के लिए दी गई क़ुरबानी का फल दुनिया में भी मिला, और वे उससे फ़ायदा उठा रहे हैं।

(हदीस : बुख़ारी, मुस्लिम)

मुफ़लिसी में मेहमान-नवाज़ी

(416) हज़रत अबू हुरैरा (रज़ि०) कहते हैं कि एक व्यक्ति नबी (सल्ल०) के पास आया और बोला : मैं भूख और फ़ाक़े से बेचैन हूँ।

---

1. अस्हाबे-सुफ़्फ़ा (चबूतरे वालों) से मुराद वे लोग हैं जो नबी (सल्ल०) से इस्लाम की तालीम लेने तथा इस्लाम का इल्म हासिल करने के लिए मदीने में मस्जिद नबवी के सामने एक छायादार चबूतरे पर सभी तरह की दुनयावी सरगर्मियों से अलग रहकर रूखा-सूखा खाकर नबी (सल्ल०) के क़रीब इल्म की लालसा में रहते थे।

आप (सल्ल०) ने अपनी किसी बीवी के पास एक आदमी भेजा। उन्होंने जवाब दिया : पानी के सिवा इस समय कुछ भी नहीं है। फिर दूसरी बीवी के पास भेजा तो वहाँ से भी यही जवाब मिला। यहाँ तक कि सभी बीवियों ने यही कहा कि क़सम है उस हस्ती की जिसने आपको हक़ के साथ भेजा है, हमारे यहाँ पानी के सिवा कुछ नहीं। तब आप (सल्ल०) ने (वहाँ मौजूद) लोगों से कहा : आज रात कौन इस मेहमान को खाना खिलाएगा? एक अंसारी सहाबी बोले : ऐ अल्लाह के रसूल! मैं इन्हें खाना खिलाऊँगा। फिर वे मेहमान को लिए अपने घर गए और बीवी से कहा : ये नबी (सल्ल०) के मेहमान हैं, इनकी ख़ातिर करो। क्या तुम्हारे पास कुछ है? उन्होंने कहा : नहीं, केवल बच्चों का खाना मौजूद है और उन्होंने अभी खाया नहीं है। अंसारी ने कहा : उन्हें कुछ देकर बहला दो और जब वे माँगें तो थपकी देकर सुला दो। जब मेहमान घर में खाना खाने आएँ तो दीया बुझा देना और कुछ ऐसा करना जिससे मेहमान को यह लगे कि ये लोग भी हमारे साथ खाना खा रहे हैं। अतएव सब लोग खाना खाने बैठे। मेहमान ने तो खूब जी भरकर खाया, लेकिन उन दोनों ने भूखे रहकर रात बिताई। जब सुबह को नबी (सल्ल०) के पास पहुँचे तो आप (सल्ल०) ने फ़रमाया : तुम दोनों मियाँ-बीवी ने मेहमान की जो ख़ातिर की उससे अल्लाह बेहद ख़ुश हुआ।

(हदीस : बुख़ारी, मुस्लिम)

व्याख्या : यह जो व्यक्ति नबी (सल्ल०) के पास आया था, भूख से बेचैन था, इसलिए बच्चों पर उसे तरजीह दी गई। फिर यह कि बच्चों को थोड़ा बहुत कुछ देकर बहला दिया गया था और ऐसा कुछ नहीं था कि वे इस हालत में सुबह होने तक भूख से मर जाते। इसलिए मेहमान को तरजीह देना ज़रूरी था, लेकिन ऐसा वही कर सकता है जिसमें ईसार और क़ुरबानी का जज़्बा पाया जाता हो। इस पहलू से यह ईसार और क़ुरबानी का बेहतरीन नमूना है कि व्यक्ति के पास बस अपनी ज़रूरत भर का खाना है फिर भी वह अपने से ज़्यादा ज़रूरतमंद का ख़याल रखता है। ख़ुद भूखा रहता है और मुहताज व ग़रीब भूखे व्यक्ति को खिला-पिला देता है।

अल्लाह के मार्ग में ख़र्च करना तथा उसके नाम का ज़िक्र

(417) हज़रत अबू हुरैरा (रज़ि०) ने बताया कि मक्के से हिजरत करके मदीना आनेवालों में से जो लोग मुहताज और ग़रीब थे (और अल्लाह

की राह में कुछ ख़र्च करने से मजबूर थे) वे नबी (सल्ल०) के पास आए और कहा कि सदा रहनेवाली ख़ुशहाली और ऊँचे दर्जे तो मालदारों को मिले (और हम महरूम रहे?) आप (सल्ल०) ने पूछा : वह कैसे? उन्होंने कहा : हम नमाज़ पढ़ते हैं, और वे भी नमाज़ पढ़ते हैं। हम रोज़े रखते हैं और वे भी रोज़े रखते हैं। (नेकी के इन कामों में वे हमारे बराबर के शरीक हैं) लेकिन वे अल्लाह के मार्ग में ख़र्च करते हैं और हम उससे महरूम हैं, वे ग़ुलामों को आज़ाद करते हैं और इसके लिए धन भी ख़र्च करते हैं, लेकिन हम उससे भी महरूम हैं। नबी (सल्ल०) ने उनकी बात सुनकर फ़रमाया : क्या मैं तुम्हें एक ऐसी बात न बताऊँ जिसकी वजह से नेकी की राह में आगे बढ़ जानेवालों का साथ पकड़ लोगे और जिसकी बदौलत तुम अपने पीछे आनेवालों से आगे रहोगे और तुमसे केवल वही लोग ऊँचे होंगे जो तुम्हारे जैसा काम करें। उन लोगों ने कहा : ज़रूर वह काम बताइए, ऐ अल्लाह के रसूल! आप (सल्ल०) ने फ़रमाया : तुम हर फ़र्ज़ नमाज़ के बाद 33 बार सुभानल्लाह, 33 बार अल्लाहु अकबर और 33 बार अल्हम्दुलिल्लाह कह लिया करो। (अतएव ये लोग घरों को वापस गए और तस्बीह पढ़ने लगे। जब ख़ुशहाल लोगों को पता चला कि उनके मुहाजिर भाइयों को नबी (सल्ल०) ने यह बताया है तो उन्होंने भी यह तस्बीह पढ़नी शुरू कर दी)। तो वे लोग फिर नबी (सल्ल०) के पास आए और बताया कि हमारे मालदार भाइयों ने सुना तो उन्होंने भी यह तस्बीह पढ़नी शुरू कर दी। आप (सल्ल०) ने फ़रमाया : यह तो ख़ुदा की मेहरबानी है जिसपर चाहता है, करता है। (हदीस : मुस्लिम)

व्याख्या : इस हदीस से पता चलता है कि नबी (सल्ल०) की जमाअत में इस्लाम की राह में आगे बढ़ने और आख़िरत में बुलंद रुतबा पाने की कितनी ललक थी। और इस हदीस से यह भी मालूम होता है कि जो लोग माल ख़र्च करने की सकत नहीं रखते, यदि वे ज़िक्र, दुआ और नेकी के दूसरे काम करें तो जन्नत से महरूम न रहेंगे। इससे यह पता भी चला कि ग़ुलामों को उनकी ग़ुलामी की हालत से निकालना, उन्हें इनसानियत का दर्जा देना और समाज में उन्हें बराबरी का स्थान देना बड़ा नेक काम है।

इस हदीस में 'अल्लाहु अकबर' 33 बार पढ़ने की बात है, एक अन्य हदीस में 'अल्लाहु अकबर' 34 बार पढ़ने का ज़िक्र आता है। बुज़ुर्गों का इसी पर अमल है। अन्य हदीसों में आया है कि आप (सल्ल०) ने इन तीनों को दस-दस बार पढ़ने के लिए कहा।

इब्ने-उमर (रज़ि०) और तहज्जुद की नमाज़

(418) सालिम (रज़ि०) अपने बाप अब्दुल्लाह इब्ने उमर (रज़ि०) से रिवायत करते हैं कि नबी (सल्ल०) ने फ़रमाया : अब्दुल्लाह बहुत अच्छे आदमी हैं। बड़ा अच्छा होता, यदि वे तहज्जुद के लिए उठा करते! सालिम कहते हैं कि आप (सल्ल०) के कहने के बाद मेरे वालिद का यह हाल हुआ कि रात में थोड़ी देर सोते।

(हदीस : बुख़ारी-मुस्लिम)

नबी (सल्ल०) के लिए सबसे ज़्यादा तकलीफ़देह मौक़ा

(419) आइशा (रज़ि०) से रिवायत है कि एक बार उन्होंने नबी (सल्ल०) से पूछा : क्या आप पर कोई ऐसा दिन बीता है जो उहुद की लड़ाई के दिन से भी ज़्यादा तकलीफ़देह रहा हो? आप (सल्ल०) ने कहा : आइशा! तुम्हारी क़ौम क़ुरैश से मुझे बड़ी तकलीफ़ें पहुँचीं और सबसे ज़्यादा सख़्त दिन जो मेरे ऊपर बीता, 'अक़बा' (संधि व समझौते) का दिन था जब 'अब्दियालैल' को मैंने इस्लाम की दावत दी, मगर जो कुछ मैं चाहता था, उसने उसे मानने से इनकार कर दिया। मैं फ़िक्रमंद और परेशान होकर वहाँ से चल पड़ा। जब 'क़र्नुस्सआलिब' (स्थान पर) पहुँचा तो मन को कुछ सुकून मिला और ग़म का बोझ कुछ हल्का हुआ। फिर मैंने आसमान की ओर देखा तो जिबरील दिखाई पड़े। उन्होंने मुझे पुकारकर कहा : आपकी क़ौमवालों ने जो बातें आपसे कीं और जिस अंदाज़ में उन्होंने आपकी दावत का जवाब दिया उसे अल्लाह ने सुना। अब आपके पास अल्लाह ने पहाड़ों का इन्तिज़ाम करनेवाले फ़रिश्ते को भेजा है, आप उसे जो चाहें, हुक्म दें; वह हक़ का इनकार करनेवालों के बारे में आपके हुक्म को तुरन्त लागू करेगा। फिर मुझे पहाड़ों के फ़रिश्ते ने आवाज़ दी, सलाम किया, फिर बोला : ऐ मुहम्मद! आपकी क़ौम ने जो बातें आपसे कहीं उसे अल्लाह ने सुना, मेरे ज़िम्मे पहाड़ों का इन्तिज़ाम और उनका रख-रखाव है। मेरे रब ने मुझे आपके पास भेजा है ताकि आप मुझे जो भी हुक्म देना चाहते हों, दें। अब आपकी जो भी इच्छा हो, बताइए। यदि आप चाहें तो दोनों ओर के पहाड़ों को मैं इस तरह मिला दूँ कि ये लोग इसके बीच पिसकर रह जाएँ।

आप (सल्ल०) ने फ़रमाया : नहीं, मुझे तो उम्मीद है कि ये नहीं तो इनकी औलाद में से ऐसे लोग होंगे जो केवल अल्लाह की बंदगी करेंगे, उसके साथ किसी को साझी नहीं ठहराएँगे।

(हदीस : बुख़ारी, मुस्लिम)

इस्लाम मुख़ालिफ़ों के लिए दुआ

(420) हज़रत अब्दुल्लाह इब्ने मसऊद (रज़ि०) कहते हैं कि नबी (सल्ल०) एक दूसरे नबी का हाल बयान कर रहे थे, वह अब भी मेरी आँखों के सामने है। आप (सल्ल०) ने फ़रमाया कि इस्लाम की ओर बुलाने के जुर्म में (उनकी क़ौम ने अपने नबी को) इतना मारा कि उन्हें लहूलुहान कर दिया और नबी का हाल यह था कि वे अपने चेहरे से ख़ून पोंछते जाते और यह कहते जाते : ऐ मेरे ख़ुदा! मेरी क़ौम को माफ़ कर दे, (अभी अज़ाब उनपर न भेज;) ये लोग नावाक़िफ़ हैं, असल हक़ीक़त को नहीं जानते। (हदीस : बुख़ारी, मुस्लिम)

तालीफ़े-क़ल्ब (दिल मोहना)

(421) हज़रत अनस (रज़ि०) कहते हैं कि नबी (सल्ल०) लोगों को इस्लाम से निकट लाने के लिए अपना हाथ खुला रखते थे। आप (सल्ल०) से जो कुछ भी माँगा गया, आप (सल्ल०) ने माँगनेवाले को वह चीज़ ज़रूर दी। एक बार एक व्यक्ति आपके पास आया तो आपने दो पहाड़ों के बीच चरनेवाली सारी बकरियाँ उसे दे दीं। वह अपने क़बीले के लोगों के पास पहुँचा और बोला :

ऐ लोगो! इस्लाम क़बूल करो क्योंकि मुहम्मद (सल्ल०) उस व्यक्ति की तरह देते हैं जो ग़रीबी, तंगदस्ती से नहीं डरता।

हदीस के रावी हज़रत अनस (रज़ि०) कहते हैं कि सूरतेहाल यह थी कि व्यक्ति केवल दुनिया के फ़ायदे के लिए ईमान लाता था मगर ज़्यादा समय न बीतता था कि इस्लाम (नबी सल्ल० की तरबियत से) उसके मन में उतर जाता और दुनिया और दुनिया की सारी चीज़ों से इस्लाम उसके लिए अधिक प्रिय हो जाता। (हदीस : मुस्लिम)

दो आदमियों का खाना तीन के लिए काफ़ी होता है

(422) हज़रत अबू बक्र सिद्दीक़ (रज़ि०) के बेटे अब्दुर्रहमान (रज़ि०) ने रिवायत की है कि 'अस्हाबे-सुफ़्फ़ा' (चबूतरे वाले) ग़रीब लोग थे।

एक बार नबी (सल्ल०) ने सहाबा से फ़रमाया : जिस व्यक्ति के घर दो आदमियों का खाना है वह यहाँ से तीसरे को अपने यहाँ ले जाए और जिसके पास चार आदमियों का खाना मौजूद हो वह पाँचवें और छठे व्यक्ति को ले जाए। यह सुनना था कि मेरे वालिद अबू बक्र (रज़ि०) अपने साथ तीन आदमियों को घर लाए और ख़ुद नबी (सल्ल०) अपने घर दस आदमियों को ले गए। (हदीस : बुख़ारी, मुस्लिम)

लोगों से मुहब्बत करना, भूखों को खाना खिलाना

(423) जरीर इब्ने अब्दुल्लाह (रज़ि०) कहते हैं कि हम सुबह के वक़्त नबी (सल्ल०) की ख़िदमत में हाज़िर हुए थे। इतने में कुछ लोग तलवारें (कमर से) बाँधे हुए, मोटे कम्बल लपेटे हुए आए। उनके जिस्म का ज़्यादातर हिस्सा नंगा था। इनमें से ज़्यादातर लोग क़बीला 'मुज़र' के थे, बल्कि कहना चाहिए कि सभी लोग 'मुज़र' ही के थे। उनकी ग़रीबी और तंगहाली देखकर नबी (सल्ल०) का चेहरा परेशानी की वजह से पीला हो गया। इसके बाद आप (सल्ल०) घर में गए और बाहर आए। बिलाल (रज़ि०) को अज़ान देने का हुक्म दिया (नमाज़ का वक़्त हो चुका था।) चुनाँचे बिलाल (रज़ि०) ने अज़ान दी, फिर तकबीर कही। आप (सल्ल०) ने नमाज़ पढ़ाई और नमाज़ के बाद तक़रीर की, जिसमें क़ुरआन की सूरा निसा की पहली आयत और फिर सूरा हश्र के आख़िरी रुकूअ की पहली आयत पढ़ी और फिर उसके बाद कहा : लोगों को चाहिए कि अल्लाह की राह में सदक़ा करें, रुपए पैसे दें, कपड़े दें, एक साअ (तौलने का अरबी पैमाना) गेहूँ दें। आप (सल्ल०) ने यहाँ तक कहा कि यदि किसी के पास खजूर का आधा टुकड़ा हो तो वही सदक़े में दे दे।

तक़रीर सुनने के बाद एक अंसारी (मदीना का मूल निवासी मुसलमान) अपने हाथ में एक थैली लिए हुआ आया जो हाथ में समाती नहीं थी। फिर लोगों ने एक-एक करके सदक़ा देना शुरू किया। देखते-देखते खाने और कपड़े के दो ढेर लग गए। (बढ़-चढ़कर) सदक़ा देने का यह मंज़र देखकर नबी (सल्ल०) का चेहरा दमक उठा जैसे सोने का पानी चढ़ा दिया गया हो। फिर आप (सल्ल०) बोले : जो कोई इस्लाम धर्म में अच्छा तरीक़ा राइज करे उसे उसका अच्छा फल मिलेगा तथा जो लोग उसके पीछे उसपर अमल

करेंगे, उनका फल भी उसे मिलेगा बिना इसके कि उन अमल करनेवालों के फल में कोई कमी की जाए। और जिस किसी ने किसी बुरे तरीक़े को जारी किया तो उसका गुनाह उसके सिर पर आएगा तथा आगे जो लोग उसके चलाए हुए बुरे तरीक़े पर चलेंगे उनका गुनाह भी उसके आमलनामे में लिखा जाएगा बिना इसके कि बुरे तरीक़े पर चलनेवालों के गुनाह में कुछ कमी हो। (हदीस : मुस्लिम)

नमाज़ में ध्यान देने लायक़ बातें

(424) मुआविया इब्ने हकम सुलमी (रज़ि०) कहते हैं कि मैं नबी (सल्ल०) के साथ नमाज़ पढ़ रहा था। इतने में एक व्यक्ति को छींक आ गई तो मैंने नमाज़ पढ़ने के दौरान ही "यर्हमुकल्लाह" (अल्लाह तुझपर रहम करे) कह दिया। लोग मेरी ओर देखने लगे। मैंने कहा : ख़ुदा तुम्हें सलामत रखे, मेरी ओर क्यों देख रहे हो? उन्होंने मुझे चुप रहने को कहा तो मैं चुप हो गया। जब नबी (सल्ल०) नमाज़ पढ़ चुके (मेरे माँ-बाप आप पर क़ुर्बान) मैंने नबी (सल्ल०) जैसा तालीम व तरबियत करने वाला न तो पहले देखा और न बाद में! तो आप (सल्ल०) ने मुझे न डाँटा, न मारा और न बुरा-भला कहा, सिर्फ़ इतना कहा : यह नमाज़ है, इसमें बातचीत करना ठीक नहीं। नमाज़ तो नाम है अल्लाह की बड़ाई और उसकी पाकी बयान करने का तथा क़ुरआन पढ़ने का। (हदीस : मुस्लिम)

तालीम देने का तरीक़ा

(425) हज़रत आइशा (रज़ि०) कहती हैं कि अल्लाह के रसूल (सल्ल०) लोगों को ऐसे ही काम करने को कहते थे जो वे कर सकते थे, जो उनके बस में होता। (हदीस : बुख़ारी)

इस्लाम में आसानी है—तंगी नहीं

(426) एक बद्दू (देहाती) ने मस्जिद में पेशाब कर दिया। लोग उसे मारने-पीटने पर उतारू हो गए। नबी (सल्ल०) ने फ़रमाया : इसे छोड़ दो, इसके पेशाब पर एक डोल पानी डालकर बहा दो। तुम लोग तो इसलिए उठाए गए हो कि लोगों को इस्लाम की ओर आकृष्ट करो और दीन को उनके लिए आसान बनाओ; तुम्हें इसलिए ख़ुदा ने नहीं भेजा है कि (अपनी नासमझी से) लोगों के लिए दीन-इस्लाम की ओर आना मुश्किल बना दो। (हदीस : बुख़ारी)

जज़्बात का लिहाज़

(427) मालिक इब्ने हुवैरिस (रज़ि०) कहते हैं कि हम कुछ हमउम्र नवजवान नबी (सल्ल०) के पास इस्लाम का इल्म सीखने के लिए आए। यहाँ हम बीस दिन रहे। हमने पाया कि नबी (सल्ल०) बड़े रहमदिल और नरमी से मामला करनेवाले इंसान थे। आप (सल्ल०) को लगा कि हम घर जाना चाहते हैं तो आप (सल्ल०) ने हमसे पूछा कि तुम्हारे पीछे, घर पर कौन लोग हैं? जब हमने हालात से वाक़िफ़ कराया तो आप (सल्ल०) ने कहा : अपने बीवी-बच्चों में वापस जाओ तथा जो कुछ अब तक तुमने यहाँ रहकर सीखा है, उन्हें सिखाओ और अच्छी बातें बताओ, फ़लाँ नमाज़ इस समय पढ़ो और फ़लाँ नमाज़ उस समय अदा करो। (एक अन्य हदीस में यह है कि तुम उस तरह नमाज़ पढ़ो जैसी मुझे पढ़ते हुए देखते हो।) और जब नमाज़ का समय आ जाए तो तुममें कोई अज़ान दे दे (नमाज़ का एलान कर दे।) तथा तुममें जो व्यक्ति किरदार और (इस्लाम के) इल्म के लिहाज़ से बढ़ा हुआ हो, वह नमाज़ पढ़ाए (इमामत करे)। (हदीस : बुख़ारी, मुस्लिम)

ख़ुदा के अहकाम औरतों की नज़र में

(428) हज़रत उमैमा (रज़ि०) कहती हैं कि उन्होंने कुछ औरतों के साथ नबी (सल्ल०) के सामने इस्लाम के अहकाम पर अमल करने का अहद किया तो नबी (सल्ल०) ने हमसे अहद लेते समय फ़रमाया : जितना तुम्हारे बस में हो, जहाँ तक तुमसे हो सके, इन अहकाम पर अमल करना। उमैमा (रज़ि०) ने कहा : अल्लाह और उसके रसूल हमारे ऊपर उससे ज़्यादा मेहरबान हैं जितना कि हम ख़ुद अपने ऊपर हो सकते हैं। (हदीस : मिशकातुल-मसाबीह)

व्याख्या : उमैमा (रज़ि०) के कहने का मतलब यह है कि अल्लाह और रसूल हमारे मुक़ाबले में हमारे ज़्यादा ख़ैरख़ाह हैं; उनकी ओर से आए हुए अहकाम कभी भी हमारी ताक़त से बाहर नहीं हो सकते। ऐसी हालत में इस शर्त की क्या ज़रूरत है?

यह है सहाबा और सहाबियात (सहाबी औरतों) के सोचने का अंदाज़! हज़रत अब्दुल्लाह बिन मसऊद (रज़ि०) ने बड़ी सच्ची बात कही थी : "ये गहरा इल्म रखनेवाले लोग थे।"

निफ़ाक़ (कपटाचार) क्या है ?

(429) मुहम्मद इब्ने ज़ैद कहते हैं कि कुछ लोग मेरे दादा अब्दुल्लाह इब्न उमर (रज़ि०) के पास आए। उन्होंने कहा : बादशाह (ख़लीफ़ा) के सामने हम कुछ कहते हैं और वहाँ से उठकर आने के बाद कुछ और कहते हैं (यह कैसा है ?) अब्दुल्लाह इब्ने उमर का जवाब था : हम इसे नबी (सल्ल०) के समय में निफ़ाक़ समझते थे। (हदीस : बुख़ारी)

व्याख्या : यहाँ बादशाह से बनू उमैया (शासक वंश) के नुमाइन्दे हैं। अब्दुल्लाह इब्ने उमर (रज़ि०) ने उमैया वंशज की हुकूमत का ज़माना देखा था। बनू उमैया की हुकूमत सही मायनों में आदर्श इस्लामी राज्य (ख़िलाफ़ते-राशिदा) न थी।

नबी (सल्ल०) के साथियों (सहाबा रज़ि०) को नमूना बनाओ

(430) हज़रत इब्ने-मसऊद (रज़ि०) ने कहा : जो सीधे रास्ते पर चलना चाहता हो उसे उन लोगों की राह अपनानी चाहिए जो इस संसार से जा चुके हैं क्योंकि व्यक्ति जब तक ज़िन्दा रहता है, उसके फ़ितने में पड़ने और सच्चे दीन से हट जाने का अन्देशा बना रहता है। दुनिया से जा चुके जिन लोगों की ओर मैं इशारा कर रहा हूँ, वे नबी के साथी लोग हैं। ये लोग मुस्लिम उम्मत के चुने हुए और सबसे ऊँचे लोग हैं। उनके दिल अल्लाह की फ़रमाबरदारी के जज़्बे से पुर थे। वे इस्लाम का गहरा इल्म रखते थे, तकल्लुफ़ और बनावट से दूर थे। अल्लाह ने उन्हें अपने नबी का साथ देने और अपने दीन को क़ायम करने के लिए चुन लिया था। तो ऐ मुसलमानो ! तुम उनका मक़ाम पहचानो, उनकी पैरवी करो, उनके अख़्लाक़ और सीरत को जितना मुमकिन हो मज़बूती से थामो; इसलिए कि ये लोग अल्लाह के बताए हुए सीधे मार्ग पर चलनेवाले थे। (हदीस : मिशकातुल-मसाबीह)

व्याख्या : अब्दुल्लाह इब्ने मसऊद (रज़ि०) ने लम्बी उम्र पाई। नबी (सल्ल०) के ज़्यादातर साथी उनके सामने दुनिया से रुख़सत हुए थे। उन्होंने देखा कि नबी (सल्ल०) के इन्तिक़ाल पर जितना समय बीतता जा रहा है, लोगों में उतनी ही ख़राबियाँ जन्म लेती जा रही हैं। अनेक गिरोह अलग-अलग लोगों को अपना रहनुमा बना रहे हैं। इसलिए उन्होंने लोगों को बताया कि नबी (सल्ल०) के साथियों को अपना रहनुमा और पेशवा बनाओ, उनके अख़्लाक़ और सीरत को अपनाओ।

जमाअत के साथ नमाज़ अदा करने के लिए चलकर मस्जिद जाने की अहमियत

(431) एक अंसारी सहाबी थे जिनका घर मस्जिदे-नबवी से काफ़ी दूर था— इतना दूर जितना किसी अन्य सहाबी का न था। इस दूरी के होते हुए भी उनकी कोई नमाज़ नहीं छूटती थी। उनसे कहा गया कि रात को अँधेरे और दिन में धूप से बचने के लिए कोई खच्चर ख़रीद लेते तो बड़ा अच्छा होता। उनका जवाब था: मुझे यह पंसद नहीं कि मस्जिदे-नबवी के पहलू में मेरा घर हो। मैं तो यह चाहता हूँ कि मस्जिद तक पैदल आने, फिर घर तक वापस होने का सवाब मेरे हिस्से में लिखा जाए। तो नबी (सल्ल०) ने फ़रमाया : तुम्हारे लिए यह सब रिकार्ड कर लिया गया है। (हदीस : मुस्लिम)

फ़ज्र व इशा की नमाज़ बाजमाअत–सहाबा की नज़र में

(432) हज़रत अब्दुल्लाह बिन उमर (रज़ि०) कहते हैं कि जब हम किसी व्यक्ति को फ़ज्र व इशा की नमाज़ में शरीक नहीं देखते तो उसके बारे में ग़लत राय रखते। (तरग़ीब)

व्याख्या : यानी ऐसे व्यक्ति के बारे में हमें मुनाफ़िक़ (कपटाचारी) होने का संदेह होने लगता। मुनाफ़िक़ लोग आमतौर पर फ़ज्र और इशा की नमाज़ पढ़ने मस्जिद नहीं आते थे। उस ज़माने में बिजली की रोशनी तो थी नहीं; छिपने के मौक़े हासिल थे। इसलिए ये मुनाफ़िक़ जिनके दिल ईमान से ख़ाली थे, इशा और फ़ज्र की नमाज़ में नहीं पहुँचते थे। हाँ, दिन की जिन नमाज़ों में हाज़िर होते थे, उनका हाल क़ुरआन मजीद में इस प्रकार बयान किया गया है :

"ये लोग नमाज़ पढ़ने तो बस मारे बाँधे, कसमसाते और बेदिली के साथ (मस्जिद) आते हैं।" (क़ुरआन, सूरा-9 तौबा, आयत 54)

नबी (सल्ल०) के साथियों की ज़िन्दगी

दिन के ग़ाज़ी, रात के नमाज़ी

(433) हज़रत क़तादा (रह०, ताबई) कहते हैं कि किसी ने हज़रत अब्दुल्लाह बिन उमर (रज़ि०) से पूछा : क्या अल्लाह के रसूल (सल्ल०) के सहाबा हँसते भी थे? उन्होंने कहा : हाँ, वे हँसते भी थे और ईमान उनके दिलों में पहाड़ की तरह मज़बूत भी था बल्कि पहाड़ से भी अधिक मज़बूत! जिसे किसी प्रकार हिलाया नहीं जा सकता था। बिलाल बिन साद (रह० ताबई) तो कहते हैं कि मैंने सहाबा-किराम को दिन के समय मुक़ाबले की दौड़ लगाते देखा और उन्हें एक दूसरे से हँसी (मज़ाक़) करते भी पाया है, मगर जब रात आती तो वे सब लोग राहिब (संन्यासी) बन जाते।

(हदीस : मिशकातुल-मसाबीह)

व्याख्या : आमतौर पर ऐसा समझा जाता है कि "अल्लाह वालों" को न हँसना चाहिए, न तीर-कमान और भाला चलाने का अभ्यास करना चाहिए, न इस तरह का कोई और काम करना चाहिए। उन्हें तो किसी जगह एकांत में बैठकर बस अल्लाह, अल्लाह करना चाहिए। इसी वजह से पूछनेवाले ने हज़रत अब्दुल्लाह बिन उमर (रज़ि०) से पूछा। उन्होंने बताया कि हँसना-बोलना, दौड़ में मुक़ाबला करना, तीर-कमान और भाला चलाने का अभ्यास करना, दुनियादारी नहीं, यह ख़ालिस दीनदारी है। यही वजह है कि नबी (सल्ल०) के साथी ये सारे काम करते थे। हाँ, वे रात के अंधेरे में अपने रब से विनती करते, दुआ और मुनाजात करते, नफ़्ल नमाज़ें पढ़ते और क़ुरआन मजीद की तिलावत (पाठ) में लीन होते। दिन के ये मुजाहिद, रात में आबिद और तहज्जुदगुज़ार बन जाते।

नाहक़ बात उन्हें बर्दाश्त न थी

(434) हज़रत अब्दुर्रहमान इब्ने-औफ़ (रज़ि०) कहते हैं कि अल्लाह के रसूल (सल्ल०) के साथी न तंगदिल थे, न तंग-ज़ेहन थे। वे लोग तो अपनी मजलिसों में शेर सुनते और पढ़ते तथा अपने जाहिलियत के दौर की ज़िन्दगी तथा उसका इतिहास अपने सामने रखते। हाँ, जब उनसे अल्लाह के दीन के मामले में कोई ग़लत माँग की जाती तो ग़ुस्से के मारे उनकी आँखों की पुतलियाँ इस तरह नाचने लगतीं मानो वे दीवाने हो गए हों। (हदीस : अल अदबुल-मुफ़रद)

व्याख्या : मतलब यह है कि सहाबा किराम (रज़ि०) अन्य धर्मों के बुज़ुर्गों और पेशवाओं की तरह लिए-दिए नहीं रहते थे कि न किसी से बोलें, न किसी से मिलें; हर समय सिर झुकाए ध्यान में मग्न रहें, बल्कि वे बेइन्तिहाई कुशादा ज़ेहन के लोग थे। सबसे मिलते, समय होता तो शेर-शायरी करते, इस्लाम क़बूल करने से पहले के दौर की ख़राबियों और रीति-रिवाजों की चर्चा करते। हाँ, जो सिफ़त उनमें सबसे अधिक उभरी हुई थी, वह यह थी कि वे अपने दिल में इस्लाम के लिए बड़ी मुहब्बत और ग़ैरत रखते थे। यदि उनसे कोई हक़ के ख़िलाफ़ काम करने की माँग करता तो उनका पारा चढ़ जाता और ग़ुस्से से आग बबूला हो जाते।

(435) हज़रत बक्र इब्ने अब्दुल्लाह कहते हैं कि नबी (सल्ल०) के साथी (तफ़रीह के लिए) ख़रबूजे के छिलके एक दूसरे पर फेंकते, मगर जब इस्लाम की हिफ़ाज़त का वक़्त आता तो वे ही संजीदा और बहादुर हो जाते। (इमाम बुख़ारी—अल-अदबुल मुफ़रद)

व्याख्या : इसी सिलसिले में एक अन्य हदीस आती है जिसका मतलब यह है कि सहाबा आपस में हंसी-मज़ाक़ करते यहाँ तक कि ख़रबूजे के छिलके एक दूसरे पर फेंकते।

रसूल की पैरवी

(436) इब्नुल-हंज़लीया (रज़ि०) कहते हैं कि अल्लाह के रसूल (सल्ल०) ने फ़रमाया : 'ख़ुरैम उसैदी' बहुत अच्छे आदमी हैं यदि उनके सिर पर बड़े-बड़े बाल न होते और उनका तहमद टख़नों से नीचे न होता। जब ख़ुरैम को नबी (सल्ल०) की इस बात का पता चला तो तुरन्त उस्तरा उठाया और अपने बढ़े हुए बालों को कानों तक काट दिया तथा अपने तहमद को आधी पिंडली तक ऊपर उठा लिया।

व्याख्या : कभी-कभार यह तरीक़ा भी तरबियत देने के लिए अपनाया जाता है। नबी (सल्ल०) के साथियों में आप (सल्ल०) की पैरवी का कितना ज़्यादा जज़बा था, इस हदीस से इसपर भी रोशनी पड़ती है।

(437) हज़रत जाबिर (रज़ि०) कहते हैं कि अल्लाह के रसूल (सल्ल०) बनी अम्र इब्ने औफ़ के मुहल्ले में गए। बुध का दिन था। वहाँ आप (सल्ल०) ने फ़रमाया : ऐ अंसारी लोगो! वे बोले : हाँ, अल्लाह के रसूल! कहिए, हम हाज़िर हैं। आप (सल्ल०) ने फ़रमाया : जाहिलियत के ज़माने में जब तुम अल्लाह की इबादत नहीं करते थे, तब तो

कमज़ोरों और बेसहारा लोगों का तुम ख़याल करते थे, ग़रीबों को अपना धन देते थे तथा मुसाफ़िरों की मदद करते थे। मगर जब अल्लाह ने इस्लाम क़बूल करने और उसके नबी पर ईमान लाने का मौक़ा दिया तो अब तुम लोग अपने बाग़ों की हिफ़ाज़त के लिए उनके इर्द-गिर्द दीवारें उठाते हो ! याद रखो ! कोई व्यक्ति तुम्हारे बाग़ का फल खा ले तो उसका तुम्हें बदला मिलेगा। यदि जंगली जानवर या चिड़िया खा लें तो इसपर भी तुम सवाब के हक़दार बनोगे।

रावी का बयान है कि नबी (सल्ल०) की यह बात सुनकर लोगों ने अपने बाग़ों के दरवाज़े ढहा दिए। ये कुल तीस दरवाज़े थे (जो इस मौक़े पर) ढाए गए। (मुस्तरक हाकिम से उद्धृत— अल-मुंज़िरी)

रसूल की बात मानना

(438) हज़रत अब्दुल्लाह इब्ने उमर (रज़ि०) कहते हैं कि नबी (सल्ल०) मुझे बैतुलमाल (राज्य कोष) से कुछ देते तो मैं आपसे अर्ज़ करता कि जो मुझसे ज़्यादा तंगहाल हो, उसे दे दीजिए। (एक बार) नबी (सल्ल०) ने फ़रमाया : जो कुछ दिया जा रहा है, ले लो, उसे अपने क़ब्ज़े में करो। जब तुम्हारे पास माल आए और इस प्रकार आए कि तुमने माँगा न हो, तो ऐसे माल को ले लो, अपने क़ब्ज़े में करो। फिर चाहे ख़ुद खाओ या सदक़ा कर दो, और जो माल तुम्हें न मिले, उसका लालच न करो।"

हज़रत सालिम (रज़ि०) जो इब्ने उमर के बेटे हैं, कहते हैं : यही वजह थी कि अब्बा जान कभी किसी से कोई चीज़ नहीं माँगते थे; और यदि कोई बग़ैर माँगे देता तो उसे ले लेते थे, वापस नहीं करते थे। (हदीस : बुख़ारी, मुस्लिम)

व्याख्या : इस हदीस में जो बातें बयान की गई हैं, वे हैं : 1. बिना माँगे और बिना किसी लालच के यदि कोई कुछ देना चाहे तो ना-नुकुर नहीं करना चाहिए। 2. लेकिन अगर दिल में कोई ऐसी चाह हो और उसकी उम्मीद भी हो कि फ़लाँ व्यक्ति मुझे माल देगा, ऐसी हालत में यदि उसकी ओर से कुछ आए तो न लेना चाहिए।

बच्चों को सलाम करना

(439) हज़रत अनस (रज़ि०) के एक शागिर्द ने उनके बारे में बताया कि हज़रत अनस (रज़ि०) कुछ बच्चों के पास से गुज़रे तो उन्हें सलाम किया और कहा : नबी (सल्ल०) बच्चों को सलाम करते थे।

(हदीस : बुख़ारी, मुस्लिम)

रसूल की पैरवी का शौक़

(440) हज़रत अब्दुल्लाह इब्ने उमर (रज़ि०) के बारे में बताया गया कि वे मक्के और मदीने के बीच (सफ़र के दौरान) एक पेड़ के नीचे आराम करने के लिए लेट जाते। (इसपर वे हमेशा अमल करते रहे और) कहते कि नबी (सल्ल०) इस पेड़ के नीचे दोपहर को खाने के बाद लेटकर आराम किया करते थे। (हदीस : अल-मुंज़िरी)

व्याख्या : नबी (सल्ल०) उस पेड़ के पास दोपहर के समय पहुँचे थे, तब वहाँ क़ैलूला (दोपहर को आराम) किया था। लेकिन हज़रत अब्दुल्लाह इब्ने उमर (रज़ि०) रात में, दिन में, किसी भी समय उस स्थान पर पहुँचते तो थोड़ी देर के लिए उस पेड़ के नीचे लेट रहते; कहते, मेरे प्यारे पैग़म्बर इस जगह लेटे थे। ऐसा नहीं कि वे बात समझते न रहे हों, या रसूल की पैरवी के मायने न जानते रहे हों; बल्कि वे रसूल (सल्ल०) के प्रेम में ऐसा करते थे। प्रेम, जैसा कि सभी जानते हैं, अक़्ल से ऊँची चीज़ है। हदीस की एक किताब 'मुस्नद अहमद' की एक हदीस का तर्जुमा है : मशहूर ताबई मुजाहिद (रह०) कहते हैं :

"हम लोग एक सफ़र में हज़रत अब्दुल्लाह इब्ने उमर (रज़ि०) के साथ थे। जब वे एक स्थान पर पहुँचे तो वहाँ से हटकर एक ओर को गए। बाद में हमने इसका सबब पूछा तो, बोले : मैंने अल्लाह के रसूल (सल्ल०) को ऐसा करते देखा था, अतः मैंने वैसा ही किया।"

इसी मुस्नद अहमद में एक और हदीस का बयान मिलता है जिसका तर्जुमा है: मशहूर ताबई इब्ने-सीरीन (रह०) कहते हैं कि मैं हज़रत अब्दुल्लाह इब्ने उमर (रज़ि०) के साथ अरफ़ात (मक्का का एक मक़ाम) में था। सूरज ढलने के बाद जब वे 'मस्जिद नमरा' जाने लगे तो मैं भी साथ हो लिया। चलते-चलते जब वे मस्जिद पहुँचे तो उन्होंने इमाम के साथ ज़ुह्र और अस्र की नमाज़ पढ़ी। फिर मुज़्दलफ़ा पहुँचे। वहाँ एक जगह उन्होंने ऊँटनी बिठा दी। हम लोगों ने भी

अपनी सवारियों को बिठा दिया। हमें ऐसा लगा जैसे वे यहाँ नमाज़ पढ़ने के इरादे से रुके हों, मगर उनके सेवक ने, जो ऊँटनी की नकेल पकड़े हुए था, बताया, वे यहाँ नमाज़ पढ़ने के इरादे से नहीं रुके हैं बल्कि उन्हें यह बात याद आई है कि नबी (सल्ल०) अपने हज के सफ़र के दौरान इस स्थान पर अपनी ऊँटनी बिठाकर पाख़ाना-पेशाब (इस्तिंजा) के लिए गए थे, इसलिए हज़रत अब्दुल्लाह इब्ने उमर रसूल (सल्ल०) की मुहब्बत में ऐसा करना चाहते हैं (यह अलग बात है कि उन्हें पाख़ाना-पेशाब की ज़रूरत नहीं है।)

रसूल (सल्ल०) से बेपनाह मुहब्बत

(441) हज़रत उर्वा इब्ने अब्दुल्लाह (रह०) कहते हैं कि मुझसे हज़रत मुआविया (रज़ि०) ने अपने बाप क़ुर्रह (रज़ि०) के हवाले से बयान किया, क़ुर्रह (रज़ि०) ने कहा : नबी (सल्ल०) की ख़िदमत में क़बीला मुज़ैना की एक टोली के साथ मैं हाज़िर हुआ। हमने आप (सल्ल०) के हाथ पर बैअत (इस्लाम क़बूल करके उसपर चलने का अहद) किया। उस समय आप (सल्ल०) के कुरते के बटन खुले हुए थे। मैं अपना हाथ नबी (सल्ल०) के कुर्ते के नीचे ले गया और 'मुह्रे-नबूवत' (आप (सल्ल०) की पीठ पर एक ख़ास उभरा हुआ निशान) को छुआ। उर्वह कहते हैं : चुनाँचे मुआविया और क़ुर्रह (बाप-बेटे) दोनों को हमेशा मैंने इस हाल में पाया है कि उनकी आस्तीन के बटन खुले रहते थे—चाहे जाड़े के दिन हों या गर्मी के! (हदीस : इब्ने-माजा)

व्याख्या : इस हदीस से पता चलता है कि सहाबा किराम (रज़ि०) अपने रसूल (सल्ल०) से किस हद तक मुहब्बत करते थे। वे दलील और फ़लसफ़ा नहीं जानते थे। वे केवल यह देखते थे कि उनके प्यारे रसूल (सल्ल०) क्या करते हैं। वरना वे अच्छी तरह जानते थे कि आदमी के बटन कभी खुले रहते हैं, कभी बंद रहते हैं; मगर प्रेम तो प्रेम है। हज़रत अब्दुलाह इब्ने उमर (रज़ि०) का कुछ ऐसा ही हाल हाफ़िज़ मुंज़िरी ने 'सही इब्ने ख़ुज़ैमा' नामी एक किताब से नक़ल किया है (जो इस प्रकार है) : ज़ैद इब्ने असलम (रह०) ने कहा : मैंने देखा कि अब्दुल्लाह इब्ने उमर (रज़ि०) के बटन खुले हुए थे और वे नमाज़ पढ़ रहे थे। पूछने पर बताया कि मैंने नबी (सल्ल०) को इस हालत में नमाज़ पढ़ते देखा है।

सफ़र के साथियों की ख़िदमत

(442) हज़रत अनस (रज़ि०) कहते हैं कि मैं हज़रत जरीर (रज़ि०) के साथ एक सफ़र पर निकला तो देखा कि सफ़र के दौरान वे मेरी ख़िदमत कर रहे हैं। मैंने उनसे कहा कि आप ऐसा न करें, मगर वे माने नहीं। बोले : मैंने (मदीने के) अंसार (मुसलमानों) को सफ़र के दौरान नबी (सल्ल०) की ख़िदमत करते देखा है। इसी लिए मैंने क़सम खा ली कि जिस अंसारी के साथ सफ़र करूँगा, उसकी ख़िदमत ज़रूर करूँगा। (हदीस : बुख़ारी, मुस्लिम)

क़ैदियों के साथ अच्छा बर्ताव

(443) हज़रत मुसअब इब्ने उमैर (रज़ि०) के भाई अबू उज़ैर (रज़ि०) कहते हैं कि बद्र की लड़ाई में, मैं भी गिरफ़्तार होकर मुसलमानों के पास पहुँचा था। इस मौक़े पर ख़ुदा के रसूल (सल्ल०) ने मुसलमानों को क़ैदियों के साथ अच्छा बर्ताव करने का हुक्म दिया था। मैं अंसार के कुछ लोगों के क़ब्ज़े में था। उनका हाल यह था कि वे दोपहर और रात का खाना जब लाते तो ख़ुद खजूर पर गुज़ारा करते और मुझे रोटी खिलाते। इसकी वजह यह थी कि नबी (सल्ल०) ने उन्हें क़ैदियों के साथ अच्छा व्यवहार करने की नसीहत की थी।

(हदीस : मोजम तबरानी)

व्याख्या : यह एक ग़ैर-मुस्लिम क़ैदी की गवाही है जिसे इस्लाम क़बूल करने के बाद वह पेश कर रहा है। यह हदीस इस हक़ीक़त पर भी रोशनी डालती है कि ये मुसलमान, अपने ग़ैर-मुस्लिम क़ैदियों के साथ बैठकर खाना खाते थे जिसका कोई व्यक्ति तसव्वुर भी इस्लाम से पहले के ज़माने में नहीं कर सकता था।

रसूल (सल्ल०) की पैरवी की अहमियत

(444) हज़रत जाबिर (रज़ि०) कहते हैं कि अल्लाह के रसूल (सल्ल०) मक्का-फ़तह के साल रमज़ान के महीने में मक्का की ओर गए। चलते-चलते वे 'कुराउलग़मीम' नामक स्थान पर पहुँचे। नबी (सल्ल०) और आप (सल्ल०) के साथ जो लोग थे रोज़े से थे। जब वे 'कुराउलग़मीम' पहुँचे तो आप (सल्ल०) ने एक प्याला पानी मँगवाया और उसे ऊँचा उठाया जिसे सबने साफ़ तौर पर देखा, फिर आप (सल्ल०) ने पानी पिया (यानी रोज़ा दिन ही में तोड़ दिया)। फिर आप

(सल्ल०) को बताया गया कि कुछ लोग अभी भी रोज़े से हैं (उन्होंने रोज़ा नहीं तोड़ा है।) आप (सल्ल०) ने फ़रमाया : ये नाफ़रमान लोग हैं। (हदीस : मुस्लिम)

व्याख्या : क़ुरआन मजीद में सफ़र के दौरान रोज़ा न रखने की छूट दी गई है। यह सफ़र रमज़ान के महीने में हुआ था; और यह कोई कारोबारी सफ़र न था बल्कि मुसलमान मक्का फ़त्ह करने और इस्लाम के दुश्मनों से लड़ने के लिए निकले थे। इसलिए नबी (सल्ल०) ने जान-बूझकर एलान करके रोज़ा तोड़ा। अगर वे रोज़ा न तोड़ते तो जिहाद और जंग पर इसका ग़लत असर पड़ सकता था। क्योंकि लोगों ने नबी (सल्ल०) को ख़ुद रोज़ा तोड़ते देखा था, फिर रोज़ा रखने का क्या मतलब ?

इस हदीस से यह बात मालूम हुई कि रसूल (सल्ल०) की फ़रमाँबरदारी और उसकी पैरवी सबसे ज़्यादा अहम है। रसूल (सल्ल०) की पैरवी (सुन्नत) से हटकर कोई व्यक्ति चाहे कितनी ही इबादत कर ले, ख़ुदा के नज़दीक उसकी कोई क़ीमत नहीं है।

फ़िदाकारी और जाँनिसारी

(445) हज़रत अनस (रज़ि०) कहते हैं कि जब नबी (सल्ल०) को यह ख़बर मिली कि अबू सुफ़ियान का क़ाफ़िला, जिसमें चालीस व्यक्ति थे, हथियारों और खाने के सामान के साथ सीरिया से मक्के की ओर रवाना हो चुका है, तो आप (सल्ल०) ने सहाबा-किराम से सलाह-मशविरा किया। साद बिन उबादा (रज़ि०) उठे और बोले : मेरे माँ-बाप आप पर क़ुर्बान, यदि आप हमें अपने घोड़े समुद्र में उतारने का हुक्म देंगे तो हम बेझिझक समुद्र में अपने घोड़ों के साथ घुस पड़ेंगे, और यदि हमें हुक्म मिलेगा कि 'बर्क़ुल-ग़ुमाद' तक घोड़ों पर सवार होकर जाओ और दुश्मन से लड़ो तो हम उसे भी मानेंगे (मक़सद यह कि जल-थल के किसी भी तरह की जंग में हम आपका पूरा साथ देंगे।) (हदीस : मुस्लिम)

(446) तारिक़ इब्ने शिहाब (रह०) कहते हैं कि मैंने इब्ने मसऊद (रज़ि०) को यह कहते सुना; वे कह रहे थे कि मैंने मिक़दाद बिन असवद का एक ऐसा कारनामा देखा है कि जो ऐसे बहुत से कामों से बड़ा है। काश ! यह कारनामा मेरे द्वारा अंजाम पाया होता ! हुआ यह कि जब नबी (सल्ल०) मक्का के मुशरिकों से लड़ाई की दावत दे रहे

थे, उस समय मिक़दाद (रज़ि०) आगे बढ़े और बोले : ऐ अल्लाह के रसूल ! हम आपसे उस तरह नहीं कहेंगे जैसे मूसा (अलै०) की जातिवालों ने उनसे कहा था : "तुम और तुम्हारा रब—दोनों जाकर दुश्मन से लड़ो।" "नहीं, बल्कि हम आपके दाएँ से बाएँ से तथा आगे और पीछे होकर दुश्मन से लड़ेंगे।" जब मिक़दाद ने यह बात कही तो नबी (सल्ल०) का चेहरा ख़ुशी से दमक उठा।

(हदीस : मुस्नद अहमद)

व्याख्या : इस हदीस में जो यह कहा गया है कि नबी (सल्ल०) मुश्रिकों से लड़ने की दावत दे रहे थे, वह 'बद्र' की लड़ाई का समय है। पहले तो आप (सल्ल०) को यह ख़बर मिली कि अबू सुफ़ियान का क़ाफ़िला हथियार और खाने का सामान लिए हुए सीरिया से आ रहा है। अभी आप (सल्ल०) उसको रोकने के लिए मदीने में सलाह-मश्विरा कर ही रहे थे कि अचानक फिर यह ख़बर मिली कि मक्का के दुश्मनों की एक हज़ार की सेना इस्लाम और मुसलमानों को नेस्तनाबूद कर देने के लिए चल पड़ी है। हालात देखकर सलाह-मशविरे की दिशा बदल गई और मक्का के मुशरिकों से टक्कर लेने की बात होने लगी। मिक़दाद (रज़ि०) की तक़रीर उसी मौक़े की है। उन्होंने कहा : हम लोग भगोड़े फ़ौज़ियों की-सी ज़ेहनियत नहीं रखते। हम आपके हर हुक्म को मानेंगे तथा आपके लिए हर तरह की क़ुर्बानी देने को तैयार हैं। हम आपके जाँनिसार लोग हैं।

इस हदीस से यह भी मालूम होता है कि आप मक्कावासियों के दल-बल से टक्कर लेने निकले थे। क़ुरआन मजीद की सूरा अनफ़ाल (8 : 6-7) इसकी ख़ुली गवाह है।

इस्लाम की दावत हर ज़माने और सभी के लिए है

(447) हजरत अनस (रज़ि०) कहते हैं कि अब्दुल्लाह बिन रवाहा जब नबी (सल्ल०) के साथियों में से किसी से मिलते तो कहते : आओ, थोड़ी देर हम अपने रब पर ईमान लाएँ। एक दिन उन्होंने एक व्यक्ति से यही बात कह दी और वह नाराज़ हो गया और नबी (सल्ल०) से जाकर बोला : अल्लाह के रसूल ! तनिक रवाहा को देखिए, वे आपके ईमान से हटकर थोड़ी देर ईमान लाने की दावत दे रहे हैं। नबी (सल्ल०) ने कहा : इब्ने रवाहा पर अल्लाह की मेहरबानी हो, वे तुम्हें दीनी इज्तिमा में मिल बैठने की दावत दे रहे थे—ऐसा इज्तिमा जिसपर फ़रिश्ते भी फ़ख्र करते हैं। ऐसी मजलिसें इब्ने रवाहा को बहुत पसंद हैं।

(हदीस : मुस्नद अहमद)

व्याख्या : इब्ने रवाहा (रज़ि०) ने जो बात कही, उससे उनका मक़सद यह था कि आओ, थोड़ी देर बैठकर अपने ईमान को ताज़ा करें, हम पर ख़ुदा के जो अनगिनत एहसान हैं, उन्हें याद करें। लेकिन यह बात उस व्यक्ति की समझ में न आई। उसने जाकर यह शिकायत नबी (सल्ल०) से की कि अल्लाह के रसूल! आपकी दावत (संदेश) तो हर ज़माने के लिए है, ज़िन्दगी भर के लिए है मगर इब्ने रवाहा थोड़ी देर के ईमान की दावत दे रहे हैं। इससे इस बात का भी पता चलता है कि नुबूवत के ज़माने के लोगों का ज़ेहन इस्लाम के बारे में कितना साफ़ था।

दीनी इज्तिमा की अहमियत

(448) हज़रत मुआविया (रज़ि०) से रिवायत है कि अल्लाह के रसूल (सल्ल०) अपने साथियों (सहाबियों) के एक ग्रुप के पास मस्जिद में आए। आप (सल्ल०) ने उनसे पूछा : तुम लोग यहाँ एक साथ क्यों बैठे हो? और क्या कर रहे हो? वे बोले : हम यहाँ बैठे अल्लाह को याद कर रहे हैं, इस बात के लिए उसका शुक्र अदा कर रहे हैं कि उसने हमें इस्लाम का रास्ता दिखाया तथा ईमान लाने की तौफ़ीक़ दी और इस तरह से हम पर उपकार किया। नबी (सल्ल०) ने फ़रमाया : क्या हक़ीक़त में, ख़ुदा की क़सम, तुम इसी लिए यहाँ बैठे हो? उन्होंने कहा : हाँ, हक़ीक़त में, ख़ुदा की क़सम, हम इसी लिए यहाँ बैठे हैं। आप (सल्ल०) ने फ़रमाया : मैंने तुम्हें इस वजह से क़सम नहीं दिलाई कि तुम्हें झूठा समझता हूँ, बल्कि जिबरील (अलैहि०) अभी मेरे पास आए थे और उन्होंने बताया कि फ़रिश्तों की मुजलिस में अल्लाह तुम्हारे ऊपर फ़ख़्र करता है। (हदीस : मुस्लिम, नसई, तिरमिज़ी)

व्याख्या : इस हदीस में 'ज़िक्र' शब्द आया है। यह शब्द क़ुरआन व हदीस की ज़बान में बहुत-से मायने रखता है। इसमें ज़िक्र (स्मरण), दुआ (विनती), विर्द-वज़ीफ़े, इस्लाम को सीखना-सिखाना, दीनी इज्तिमा तथा इसके सिलसिले के सभी काम शामिल हैं।

फ़रिश्तों की मजलिस में फ़ख़्र करने का मतलब यह है कि अल्लाह उनसे कहता है : देखो, हमारे ये बन्दे हमें याद करने में लगे हैं, अपने दूसरे काम छोड़कर दीनी काम में लगे हुए हैं।

इल्म सीखने-सिखाने और दीन पहुँचाने में सहाबा का शौक़

(449) हज़रत बराअ इब्ने आज़िब (रज़ि०) कहते हैं कि हममें से हर व्यक्ति नबी (सल्ल०) की ख़िदमत में हाज़िर नहीं होता था, जिसकी वजह से वह आप (सल्ल०) से सीधे रूप में इस्लाम का इल्म हासिल करता। हमारे पास जमीनें और बाग़ थे, जिसमें हम फँसे रहते थे। हाँ, जो लोग आप (सल्ल०) की मजलिस में हाज़िर होते, वे (आप सल्ल० की बातें) उन लोगों को बता देते थे जो मजलिस में हाज़िर न हो पाते थे। ये लोग ग़लतबयानी नहीं करते थे; ग़ैर हाज़िर साथियों को पूरी बात बता देते थे। (हदीस : बैहक़ी)

वे झूठ नहीं बोलते थे

(450) हज़रत क़तादा (रज़ि०) ने कहा कि हज़रत अनस (रज़ि०) ने एक हदीस बयान की। इस पर एक व्यक्ति ने पूछा : क्या यह बात आपने अल्लाह के रसूल (सल्ल०) से सुनी है? उन्होंने कहा : हाँ, या यह कहा : मुझसे ऐसे व्यक्ति ने यह बात बताई थी, जिसने ग़लतबयानी नहीं की। ख़ुदा की क़सम, हम लोग ग़लतबयानी नहीं करते थे। ख़ुदा गवाह है, हम नहीं जानते थे कि झूठ और ग़लतबयानी क्या चीज़ होती है। (हदीस : बैहक़ी)

व्याख्या : इस हदीस से पता चलता है कि हदीसों को बयान करने में सहाबा (रज़ि०) कितनी सावधानी बरतते थे।

ज़बान की हिफ़ाज़त

(451) हज़रत असलम (रह०) कहते हैं कि एक दिन हज़रत उमर (रज़ि०), हज़रत अबू बक्र (रज़ि०) के पास गए। देखा कि वे अपनी जीभ को हाथ से खींच रहे हैं। हज़रत उमर (रज़ि०) बोले : यह आप क्या कर रहे हैं? छोड़िए, अल्लाह आपकी ग़लती माफ़ करे। हज़रत अबू बक्र (रज़ि०) ने कहा : इसने मुझे तबाह कर डाला, इसलिए इसे सज़ा दे रहा हूँ। (हदीस : मिशकातुल-मसाबीह)

व्याख्या : ज़्यादातर गुनाह जीभ ही के द्वारा होते हैं। किसी की पीठ पीछे उसकी बुराई हो जाती है तो कभी गन्दे अल्फ़ाज़ ज़बान से निकल जाते हैं।

मतलब यह कि ज़्यादातर ग़लतियाँ ज़बान ही से होती हैं जिसपर एक सच्चा मुसलमान बंदा पछताता है। कुछ ऐसी ही हालत हज़रत अबू बक्र (रज़ि०) की थी, जबकि वे अपनी ज़बान को सज़ा दे रहे थे।

(452) आइशा (रज़ि०) कहती हैं कि एक दिन नबी (सल्ल०) अबू बक्र (रज़ि०) के पास पहुँचे, जबकि वे अपने किसी ग़ुलाम को डाँट-फटकार लगा रहे थे। आप (सल्ल०) ने उनकी ओर देखकर कहा : 'सिद्दीक़' होकर फटकार लगा रहे हैं? (मतलब यह कि यह काम आपकी शान से मेल नहीं खाता।) काबा के रब की क़सम, ऐसा कभी हो नहीं सकता (कि 'सिद्दीक़' यानी पहली नज़र में रसूल की तसदीक़ करने वाला व्यक्ति का मक़ाम पानेवाला मुसलमान किसी को फटकार लगाए।) इसके बाद अबू बक्र (रज़ि०) ने उस ग़ुलाम को आज़ाद कर दिया। फिर आप (सल्ल०) की ख़िदमत में हाज़िर हुए और अहद किया कि मैं तौबा करता हूँ; दोबारा यह ग़लती मुझसे न होगी।

(हदीस : मिशकात)

माफ़ी और दरगुज़र

(453) ओयैना इब्ने हिस्न अपने भतीजे हुर्र इब्ने क़ैस के मेहमान बने। हुर इब्ने क़ैस को हज़रत उमर रज़ि०) की मजलिस में बड़ा स्थान हासिल था। क़ुरआन के जानने वाले, उनके हमनशीन तथा सलाहकार थे। मजलिस में अधेड़ उम्र के लोग भी थे और जवान भी। ओयैना ने हुर्र से कहा : ऐ भतीजे! तुम उमर (रज़ि०) के क़रीबी हो। मेरे लिए उनके पास हाज़िर होने की इजाज़त मांगो। अतः इजाज़त के बाद ओयैना हज़रत उमर (रज़ि०) के पास पहुँचे तो बातों-बातों में उन्होंने उनसे कहा : ऐ ख़त्ताब के बेटे उमर! तुम हमें बड़ी बख़्शिशें नहीं देते और न न्याय-इंसाफ़ के साथ फ़ैसला करते हो। यह सुनकर हज़रत उमर (रज़ि) को ग़ुस्सा आ गया और उन्होंने सज़ा देने की ठान ली। इतने में हुर्र बोल बड़े : ऐ अमीरुल-मोमिनीन! अल्लाह ने अपने नबी से कहा है : "माफ़ी और दरगुज़र का रवैया अपनाओ, नेकी और एहसान का हुक्म दो तथा जिहालत पर उतर आनेवालों को नज़रअदाज़ करो।" (क़ुरआन : सूरा आराफ़ : 199)

"यह साहब नादान हैं अतः उनकी नादानी का नोटिस न लें, माफ़ कर दें।" यह आयत सुनते ही उमर (रज़ि०) ने सज़ा देने का इरादा छोड़ दिया।

उनका मिज़ाज अल्लाह की किताब के हुक्म पर रुक जाने का था (यानी वे अल्लाह के अहकाम की तनिक भी अनदेखी नहीं करते थे।)

सब्र और तसल्ली

(454) हज़रत अनस (रज़ि०) कहते है कि अबू तलहा का एक बेटा जो (उनकी बीवी) 'उम्मे-सुलैम' से था, का इन्तिक़ाल हो गया। (अबू तलहा उस समय किसी लम्बे सफ़र पर गए हुए थे) उम्मे-सुलैम ने घर के लोगों से कहा कि तुम लोग अबू तलहा को बच्चे के मरने की ख़बर न देना; मैं ख़ुद उन्हें बताऊँगी। जब वे सफ़र से वापस आए तो सबसे पहले उनके सामने रात का खाना लगाया। उन्होंने खाया-पिया फिर उम्मे-सुलेम ने अपने शौहर के लिए पहले से भी अच्छा बनाव श्रृंगार किया। फिर शौहर ने उनसे सहवास किया। जब उम्मे-सुलैम ने देखा कि वे तृप्त हो चुके हैं और सुकून की हालत में हैं तो उम्मे-सुलैम ने कहा : अबू तलहा ! ज़रा बताइए, यदि कुछ लोगों ने किसी को कोई चीज़ मंगनी के बतौर दी हो और वे अपनी चीज़ वापस मांगें तो क्या उसे यह हक़ है कि देने से इनकार कर दे ? अबू तलहा बोले : नहीं, उसे मना करने का हक़ नहीं है। तब उम्मे-सुलैम ने कहा : ले जाइए, बच्चे को दफ़नाइए। (वह अल्लाह की अमानत था। उसने अपनी अमानत वापस ले ली। अत: आपको सब्र करना चाहिए कि आखिरत में इसका फल मिल सके।)

(हदीस : रियाज़ुस्सालिहीन, मुस्लिम)

व्याख्या : अबू तलहा (रज़ि०) ने घर पहुँचते ही बच्चे का हालचाल मालूम किया। उम्मे-सुलैम ने जो जवाब दिया वह बड़ी समझदारी का था। कहा : वह बड़े सकून से है। देखिए, उस समय की मुस्लिम औरतें ऐसी होती थीं।

मजलिस में बैठने के आदाब

(455) हज़रत जाबिर इब्ने समुरा कहते हैं कि हममें से कोई भी व्यक्ति जब नबी (सल्ल०) की मजलिस में पहुँचता तो सबसे आख़िर में बैठता (ऐसा नहीं करते थे कि आएँ देर से और लोगों को फाँदते हुए आप (सल्ल०) के निकट जाकर बैठने की कोशिश करें।)

(हदीस : अबू दाऊद)

वादा निभाना

(456) हज़रत अब्दुल्लाह इब्ने मसऊद (रज़ि०) कहते हैं कि नबी (सल्ल०) ने फ़रमाया : सबसे अच्छे लोग मेरे ज़माने के लोग (यानी सहाबा) हैं, उनके बाद वे लोग सबसे बेहतर होंगे जो मेरे ज़माने के लोगों के बाद आएँगे (इससे मुराद ताबिईन का गिरोह है यानी सहाबा के तरबियतयाफ़्ता लोग) फिर वे लोग बेहतर होंगे जो उनके बाद आएँगे (यानी तबा-ताबिईन, जिन्होंने ताबिईन से तालीम और तरबियत ली।) फिर ऐसे लोग आएँगे जिनकी गवाही, क़सम से बाज़ी मार ले जाएगी और क़सम, गवाही को मात कर देगी। (मतलब यह कि वे झूठी गवाही देंगे, झूठी क़समें खाएँगे। उनकी नज़र में गवाही और क़ौल-क़रार की कोई अहमियत न रह जाएगी।)

हदीस के रावी अब्दुल्लाह बिन मसऊद (रज़ि०) कहते हैं कि हमारे सरपरस्त हम बच्चों को झूठी क़सम ख़ाने और वादा पूरा न करने पर मारते थे। (हदीस : मुस्नद अहमद)

घर बनाने में सादगी

(457) अब्दुर्रूमी (रज़ि०) कहते हैं कि मैं उम्मे-तल्क़ के घर गया। उनके घर की छत बहुत नीची थी। मैंने उन्हें ध्यान दिलाया कि आपके घर की छत कितनी नीची है? उन्होंने कहा : अमीरुल-मोमिनीन उमर इब्ने ख़त्ताब (रज़ि०) ने अपनी हुकूमत के आला अधिकारियों, गर्वनरों आदि को लिखकर यह हिदायत दे रखी थी कि तुम लोग ऊँची इमारतें न बनाना; यदि ऐसा करोगे तो वह तुम्हारा बुरा समय होगा।

(हदीस : इमाम बुख़ारी—अल-अदबुल-मुफ़रद)

व्याख्या : यानी जब शानदार इमारतों और अट्टालिकाओं की तामीर करके धन-दौलत की नुमाइश की जाएगी तो यह खुले रूप से दुनियापरस्ती की ओर बढ़ने का सुबूत होगा। जिस रफ़्तार से दुनियापरस्ती बढ़ेगी, उसी हिसाब से दीनदारी और ख़ुदापरस्ती की भावना कमज़ोर पड़ती जाएगी, जिसका अंजाम यह होगा कि अल्लाह की मदद से मुस्लिम उम्मत महरूम हो जाएगी।

जानवरों पर रहम

(458) हज़रत अनस (रज़ि०) कहते हैं कि जब हम सफ़र के दौरान कहीं पड़ाव डालते तो जब तक अपनी सवारियों के ऊपर से काठी

(ज़ीन) आदि न उतार लेते, ज़िक्र, नमाज़ और तस्बीह में न लगते।

(हदीस : अबू दाऊद)

व्याख्या : इस्लाम ने जानवरों पर रहम करने की जो तालीम दी है, यह उसी का नतीजा है।

मेहमाननवाज़ी

(459) हज़रत शिहाब इब्ने अब्बाद (रज़ि०) कहते हैं कि क़बीला अब्दुल क़ैस का जो वफ़्द नबी (सल्ल०) की ख़िदमत में हाज़िर हुआ था, उसके कुछेक लोगों ने बताया कि जब हम मदीना पहुँचे तो लोग बहुत ख़ुश हुए। उन्होंने अच्छा स्थान ठहरने के लिए दिया और ख़ूब ख़ातिरदारी की। नबी (सल्ल०) ने भी हमारा इस्तिक़बाल किया और हमारे लिए दुआ की। आप (सल्ल०) ने हमारी ओर देखकर पूछा : तुम्हारा सरदार और नेता कौन है? हमने मुंज़िर बिन आइज़ की ओर इशारा कर दिया कि ये हमारे सरदार हैं? आप (सल्ल०) ने पूछा : क्या ये 'अशज्ज' तुम्हारे सरदार हैं (जिनके चेहरे पर घाव का निशान है?) हमने कहा : हाँ, ये हमारे सरदार हैं। मुंज़िर के चेहरे पर कभी किसी गधे ने लात मार दी थी, जिससे उनके चेहरे पर निशान पड़ गया था। नबी (सल्ल०) ने उन्हें जो 'अशज्ज' कहकर मुख़ातब किया तो वह इसी मायने में था, वरना हम लोग इससे पहले उन्हें 'अशज्ज' नहीं कहते थे।

वफ़्द के अन्य लोग नबी (सल्ल०) से मुलाक़ात के शौक़ में पहले ही पहुँच गए थे। न अपना सामान उन्होंने सलीक़े से रखा, न सवारियों को बाँधा, न कपड़े बदले; मगर मुंज़िर ने पहले सब सवारियों को बाँधा, सब सामान सलीक़े से रखा फिर अपने बैग से साफ़ कपड़े निकालकर पहने, तब वे नबी (सल्ल०) की ख़िदमत में हाज़िर हुए। उस समय आप (सल्ल०) टेक लगाए हुए पैर फैलाए बैठे थे। लोग उन्हें स्थान देने के लिए सिमट गए और बोले : यहाँ तशरीफ़ लाइए। अतएव वे नबी (सल्ल०) के दाहिनी ओर बैठे। आप (सल्ल०) ने उनका स्वागत किया, प्यार भरे लहजे में उनसे बातें कीं, उनके देश की एक-एक बस्ती का नाम लेकर पूछा। सफ़ा, मुशक़्क़र तथा अन्य बस्तियों के बारे में ख़ासतौर से पूछा। मुंज़िर बोले : मेरे माँ-बाप आप पर क़ुर्बान हों, आप तो हमारे इलाक़े के बारे में हमसे ज़्यादा जानकारी

रखते जान पड़ते हैं। आप (सल्ल०) ने कहा : हाँ, मैं तुम्हारे देश में (तिजारत करने के लिए) गया हूँ, वहाँ के लोगों ने मेरी बड़ी ख़ातिर की थी। फिर अंसारी मुसलमानों से आप (सल्ल०) ने कहा : अपने इन भाइयों की अच्छी तरह ख़ातिरदारी करो। इस्लाम क़बूल करने में भी ये तुम्हारे ही जैसे हैं और अपनी शक्लोसूरत के एतबार से भी तुमसे मिलते-जुलते हैं। ये लोग भी बिना किसी ज़ोरज़बरदस्ती या बाहरी दबाव के अपने रब पर ईमान लाए हैं जबकि दूसरे लोगों ने इस्लाम क़बूल करने से इंकार कर दिया, यहाँ तक कि वे जंग के मैदान में मारे गए।

अगले दिन नबी (सल्ल०) ने आनेवालों से पूछा : तुम्हारे अंसारी भाइयों ने तुम्हारी कैसी ख़ातिर की? वे बोले : ये हमारे बेहतरीन भाई हैं। उन्होंने हमारे लिए आरामदेह बिस्तर का इन्तिज़ाम किया, उम्दा खाना खिलाया तथा रात और सुबह को ये हमें अल्लाह की किताब (क़ुरआन मजीद) और नबी (सल्ल०) के तरीक़े की तालीम देते रहे। यह सुनकर नबी (सल्ल०) बहुत ख़ुश हुए। (हदीस : मुस्नद अहमद)

सलीक़ामंदी और अपनी ज़िम्मेदारी पूरी करना

(460) हज़रत अबू किलाबा (रज़ि०) कहते हैं कि नबी (सल्ल०) के सामने कुछेक सहाबा अपने एक साथी की तारीफ़ करने लगे। कहने लगे : अपने फ़लाँ साथी जैसा ख़ूबियोंवाला हमने किसी को नहीं देखा। सफ़र के दौरान वह क़ुरआन पढ़ता रहता, और जब हम लोग किसी जगह पड़ाव डालते तो वह नमाज़ में मशग़ूल हो जाता। आप (सल्ल०) ने पूछा : उसके सामानों की देखभाल कौन करता था? बातों-बातों में आप (सल्ल०) ने यह भी पूछ लिया कि उसके ऊँट को चारा-पानी कौन देता था? हमने कहा : हम लोग उसके सामानों की देखभाल करते और उसके ऊँट को खिलाते-पिलाते थे। आप (सल्ल०) ने कहा : तब तो तुम ही उस क़ुरआन पढ़नेवाले और इबादत में लगे रहनेवाले से बेहतर हो। (हदीस : अबू दाऊद)

व्याख्या : इज्तिमाई कामों में हरेक को हिस्सा लेना चाहिए, क्योंकि सभी ज़िम्मेदार हैं। जो व्यक्ति अपनी ज़िम्मेदारी पूरी करने से बचे, वह अच्छा आदमी नहीं हो सकता चाहे तस्बीह गिनने और नफ़्ल नमाज़ें पढ़ने में कितना ही आगे बढ़ गया हो।

एक साथ मिल-बैठकर खाने-पीने के आदाब

(461) जबला बिन सुहैम कहते हैं कि हम लोग हज़रत अब्दुल्लाह बिन ज़ुबैर (रज़ि०) के हामी थे। इत्तिफ़ाक़ से, इसी बीच अकाल पड़ गया। हमें थोड़े से खजूर मिले। हम खा रहे थे। अब्दुल्लाह बिन उमर हमारे पास से गुज़रे। बोले : तुममें से कोई एक साथ दो खजूरें लेकर न खाए, क्योंकि नबी (सल्ल०) ने इस प्रकार खाने से मना किया है।

(हदीस : बुख़ारी, मुस्लिम)

व्याख्या : मतलब यह है कि जब लोग सूखे-दाहे की चपेट में हों और खाना थोड़ा हो तो एक साथ मिल-जुलकर खाना खानेवालों के मन में यह नहीं होना चाहिए कि वे ज़्यादा से ज़्यादा अपने पेट में उतारने की कोशिश करें। यह ख़ुदगर्ज़ी की बात होगी जो इस्लामी भाईचारे से बिल्कुल मेल नहीं खाती। हाँ, यदि अन्य साथी इसकी ख़ुशी-ख़ुशी इजाज़त दें तो इसमें कोई हरज नहीं, इस तरह खाया जा सकता है।

(462)हज़रत अबू मूसा अशअरी (रज़ि०) कहते हैं कि अल्लाह के रसूल (सल्ल०) ने फ़रमाया : क़बीला अशअर के लोग जब जिहाद के लिए निकलते हैं और उनके पास खाना थोड़ी मिक़दार में होता है या मदीने में उनके यहाँ खाने-पीने की तंगी हो जाती है तो जो कुछ जिसके पास होता है, लाकर एक जगह इकट्ठा करते हैं, फिर मिल-बाँटकर खाते हैं। नबी (सल्ल०) उनकी तारीफ़ करते हुए कहते हैं कि ये लोग मेरे हैं, और मैं इनका हूँ। (हदीस : बुख़ारी, मुस्लिम)

व्याख्या : ज़ाहिर है कि किसी के पास ज़्यादा खाना होगा और किसी के पास कम, किसी के पास बहुत कम, और किसी के पास कुछ भी नहीं। ऐसी हालत में बराबर-बराबर बाँटकर खाना बड़े दिल गुर्दे की बात है।

जमाअत में क़ानून क़ायदों की पाबन्दी

(463) हज़रत काब इब्ने मालिक (रज़ि०) कहते हैं कि नबी (सल्ल०) ने अपने सारे साथियों (सहाबियों) को हम तीनों यानी मुझसे, हिलाल बिन उमैया, और मुरारा बिन रबीअ से गुफ़्तुगू और बातचीत करने से भी रोक दिया था। क्योंकि हम अपनी सुस्ती की वजह से तबूक (युद्ध) की मुहिम पर नहीं जा सके थे। जिसके सबब लोगों ने हमसे मिलना-जुलना छोड़ दिया था और वे ऐसे बदल गए थे जैसे वे हमें

पहचानते ही न हों। हालात ये हो गए कि मदीने में हम अजनबी बनकर रह गए। अब मदीना, वह मदीना न रहा था जिससे हम वाक़िफ़ थे। इसी हालत में पचास दिन हमपर बीत गए।

मेरे दोनों साथी हिलाल और मुरारा पर इस सामाजिक बाइकाट का बड़ा असर हुआ। ये दोनों अपने घर में पड़े रोते रहते, और मैं अभी चूँकि जवान था और दिल का मज़बूत था इसलिए मैं घर से निकलता, मुसलमानों के साथ नमाज़ में शरीक होता और बाज़ारों में घूमता, लेकिन कोई भी मुझसे नहीं बोलता था। नबी (सल्ल०) नमाज़ पढ़कर अपनी जगह बैठते तो आप (सल्ल०) के पास जाता, सलाम करता। फिर मन ही मन सोचता कि पता नहीं, आप (सल्ल०) ने मेरे सलाम का जवाब दिया या नहीं। मैं आप (सल्ल०) के क़रीब खड़ा होकर नमाज़ पढ़ता तो आप (सल्ल०) मेरी ओर देखते, मगर नमाज़ पढ़ चुकने के बाद आप (सल्ल०) की ओर जब मैं देखता तो नज़रें फेर लेते। जब नौबत यह आ गई कि मुसलमानों की ओर से यह बेरुख़ी मेरे लिए बरदाश्त से बाहर हो गई तो मैं (एक दिन) अबू क़तादा के बाग़ की दीवार फाँदकर उनके पास पहुँचा (दरवाज़ा बंद था इसलिए दीवार लाँघने की ज़रूरत पड़ी थी)। वे मेरे चचेरे भाई और पक्के दोस्त थे। मैंने उन्हें सलाम किया मगर उन्होंने कोई जवाब न दिया। फिर दोबारा उन्हें क़सम देकर सलाम किया, मगर वे चुप रहे। जब तीसरी बार उनसे कहा : ऐ अबू क़तादा! मैं तुम्हें ख़ुदा की क़सम देकर पूछता हूँ, क्या तुम्हें पता नहीं है कि मैं अल्लाह और रसूल से प्रेम करता हूँ? तब वे बोले : अल्लाह और रसूल ही को इसका पता है (कि तुम्हें अल्लाह और रसूल से प्रेम है या नहीं, उन्हीं से जाकर सनद लो) इसपर मेरी आँखों से आँसू निकल आए और दीवार फाँदकर मैं बाहर निकल आया। (हदीस : बुख़ारी, मुस्लिम)

व्याख्या : जमाअती नज़्म के पालन का यह बेहतरीन नमूना है। हम देखते हैं कि जब काब बिन मालिक और उनके दो साथियों के बाइकाट का एलान अल्लाह के हुक्म (सूरा 9 : 118) के तहत किया गया तो पूरा मदीना इन लोगों के लिए अजनबी शहर बन गया। हालत यह है कि उनके बहुत ही अच्छे दोस्त अबू क़तादा एकान्त में, अल्लाह का वास्ता देने के बावजूद उन्हें जवाब देना भी उचित

नहीं समझते। इस वाक़िए के बारे में तफ़्सील से जानने के लिए देखिए कुरआन-टीका "तफ़हीमुल क़ुरआन", भाग-2, सूरा तौबा का फुटनोट न० 119।

रसूल (सल्ल०) की फ़रमाँबरदारी

(464) हज़रत ख़ालिद इब्ने वलीद (रज़ि०) कहते हैं कि मेरे और अम्मार के बीच झगड़ा हुआ। मैंने सख़्त बात की तो अम्मार मेरी शिकायत लेकर नबी (सल्ल०) के पास पहुंचे; मैं भी अम्मार की शिकायत करने आप (सल्ल०) के पास हाज़िर हुआ। आप (सल्ल०) के सामने पहुँचकर भी मैं अम्मार को खरी-खोटी सुनाता रहा और मेरी आवाज़ ऊँची ही होती गई। नबी (सल्ल०) ख़ामोश यह सब देखते रहे और कुछ न बोले तो अंततः अम्मार रो पड़े और आप (सल्ल०) से कहा : क्या आप इन्हें देखते नहीं? कैसी सख़्त ज़बान का इस्तेमाल कर रहे हैं! तब नबी (सल्ल०) ने सिर उठाया और बोले : जो अम्मार से दुश्मनी करेगा, अल्लाह उसका दुश्मन होगा और जो अम्मार से कीना रखेगा, अल्लाह उससे कीना रखेगा।

ख़ालिद कहते हैं कि आप (सल्ल०) के ये बोल सुनकर जब मैं बाहर निकला तो जो बात मेरे लिए सबसे ज़्यादा प्रिय थी वह यह कि किसी तरह अम्मार मुझसे खुश हो जाएँ, मेरी ग़लती माफ़ कर दें। अतएव मैंने उन्हें मनाया, माफ़ी माँगी तो उन्होंने माफ़ कर दिया और ख़ुश हो गए। (हदीस : मिशकात)

अल्लाह की राह में ख़र्च करना

(465) हज़रत अब्दुल्लाह इब्ने ज़ुबैर (रज़ि०) कहते हैं कि मैंने अपनी ख़ाला (मौसी) आइशा और अपनी माँ अस्मा से ज़्यादा सख़ी (दानशील) किसी दूसरी औरत को नहीं देखा। हाँ, उन दोनों का दान करने का ढंग अलग-अलग था। आइशा (रज़ि०) का हाल यह था कि वे रोज़ाना कुछ न कुछ जमा करती रहतीं और जब एक अच्छी तादाद में वह जमा हो जाता तो उसे ग़रीबों में बाँट देतीं। अलबत्ता मेरी माँ अस्मा का तरीक़ा यह था कि जो कुछ उनके हाथ आता, रोज़ाना उसे ग़रीबों तक पहुँचा देतीं, रोककर रखती नहीं थीं।

(इमाम बुख़ारी—अल-अदबुल मुफ़रद)

(466) मदीने के एक अंसारी मुसलमान अपने एक बाग़ में नमाज़ पढ़

रहे थे। यह बाग़ मदीने की मशहूर घाटी कुफ़्फ़ में स्थित था। बहुत ही छायादार और फलों से लदा हुआ! नमाज़ पढ़ते में उनकी नज़र फलों पर पड़ी और वे उन्हें देखकर ख़ुश हो गए। फिर उन्हें अपनी नमाज़ का ख़याल आया मगर यह याद नहीं रहा कि कुल कितनी रक्अतें पढ़ीं। उन्होंने मन में सोचा कि यह जायदाद तो मेरे लिए आज़माइश बन गई है अत: उसे अपने पास रखना ठीक नहीं है। वे उस समय के ख़लीफ़ा हज़रत उस्मान (रज़ि०) के पास गए, उन्हें सारा क़िस्सा कह सुनाया और बोले : मैंने यह बाग़ (अल्लाह के लिए) वक़्फ़ कर दिया (और मेरा इससे कोई संबंध नही है), आप इसे भलाइयों के कामों में ख़र्च कीजिए। अत: ख़लीफ़ा उस्मान (रज़ि०) ने उसे पचास हज़ार दिरहम में बेच दिया और उसका नाम 'अल-ख़म्सून' (यानी पचास वाला) रखा। (हदीस : मुवत्ता इमाम मालिक)

(467) हज़रत अनस (रज़ि०) कहते हैं कि मदीने में खजूरों के सबसे ज़्यादा बाग़ अबू तलहा के पास थे। उनमें उनको सबसे प्यारा और उम्दा बाग़ "बैरहा" था जो मस्जिद-नबवी के ठीक सामने पड़ता था। नबी (सल्ल०) प्राय: इस बाग़ में जाते, बैठते और उसके कुएँ का उम्दा मीठा पानी पीते। हज़रत अनस (रज़ि०) कहते हैं कि जब (क़ुरआन की) यह आयत : "लन् तनालुल् बिर्र हत्ता तुन्फ़िक़ू मिम्मा तुहिब्बून" उतरी तो अबू तलहा (रज़ि०) नबी (सल्ल०) की ख़िदमत में गए और अर्ज़ किया कि अल्लाह ने फ़रमाया है : तुम नेकी के मर्तबे को कभी पहुँच नहीं सकते जब तक कि अपना सबसे प्यारा माल अल्लाह के मार्ग में न दे दो। (आले-इमरान, सूरा 3 : 92) इस पहलू से 'बैरहा' मेरा सबसे अच्छा और प्यारा बाग़ है। मैंने उसे अल्लाह के मार्ग में दे दिया ताकि यह अल्लाह के यहाँ (आख़िरत में) मेरे काम आए। अब आप इसे अपने रब के हुक्म के मुताबिक़ ख़र्च कीजिए। नबी (सल्ल०) ने फ़रमाया : शाबाश! यह तुमने अच्छा काम किया। यह नफ़े वाला कारोबार है, यह बड़े फ़ायदे का सौदा है।

(हदीस : बुख़ारी-मुस्लिम)

(468) हज़रत क़ैस (रज़ि०) कहते हैं कि मेरे भाइयों ने जाकर अल्लाह के रसूल (सल्ल०) से (ख़ूब बढ़ा-चढ़ाकर) मेरी शिकायत की कि क़ैस अपना माल बेहिचक ख़र्च करता है और इसमें मगन रहता है (फिर

खाएगा क्या? ग़रीब हो जाएगा)। मैंने कहा : ऐ अल्लाह के रसूल! अपने हिस्से के खजूर लेकर अल्लाह की राह में देता हूँ और अपने साथियों पर ख़र्च करता हूँ। नबी (सल्ल०) ने बतौर शाबाशी अपना हाथ मेरे सीने पर फेरा और कहा : तुम ख़र्च करो, अल्लाह तुम्हें देगा। अब हालत यह है कि मैं अपनी निजी ऊँटनी पर जिहाद के लिए जाता हूँ और आज अपने ख़ानदान में सबसे ज़्यादा मालदार और खुशहाल हूँ। (अल्लाह के मार्ग में देने से न सिर्फ़ यह कि तंगदस्त नहीं हुआ बल्कि अल्लाह की राह में ख़र्च करने की बरकत और नबी (सल्ल०) की दुआ की बदौलत आज ख़ुशहाल ज़िन्दगी बसर कर रहा हूँ।

(अल मुंज़िरी, तबरानी से उद्धृत)

(469) हज़रत अनस (रज़ि०) कहते हैं कि (मक्का से हिजरत करके मदीना आए मुसलमान) मुहाजिरों ने नबी (सल्ल०) से कहा : हमारे अंसारी भाई (मदीने के मूल निवासी मुसलमान) सारा अज्र व सवाब समेट ले गए; हमने इन जैसे लोग कहीं और नहीं देखे। इनके पास धन ज़्यादा होता है तो अल्लाह के मार्ग में ख़ूब देते हैं और कमी आ जाती है तो उस हालत में भी ग़रीबों से माली हमदर्दी करने से नहीं चूकते; उन्हें भी अपने थोड़े में साझेदार बना लेते हैं। (अब हाल यह है कि) उन्होंने हमारा ख़र्चा अपने ज़िम्मे ले लिया है। नबी (सल्ल०) ने फ़रमाया : क्या तुम लोग इस एहसान पर अंसार का शुक्रिया अदा नहीं करते और क्या तुम उनके लिए दुआ नहीं करते हो? लोगों ने कहा : हाँ, हम उनके शुक्रगुज़ार हैं, उनके लिए दुआ करते हैं। आप (सल्ल०) ने फ़रमाया : तुम भी अज्र व सवाब के हक़दार और वे भी; उन्होंने तुमपर एहसान किया और तुमने उनके लिए दुआ की।

(हदीस : अबू दाऊद, नसई)

रहन-सहन और आपसी मामले

(470) अब्दुल्लाह बिन दीनार, हज़रत इब्ने-उमर (रज़ि०) के बारे में बताते हैं कि मक्का के रास्ते में, जबकि वे हज करने जा रहे थे, एक देहाती अरब उनसे मिला तो अब्दुल्लाह इब्ने-उमर (रज़ि०) ने उसे सलाम किया और एक खच्चर, जिसपर वे सवारी करते थे, उसे दिया तथा अपने सिर से पगड़ी उतारकर उसे पहना दी। मैंने कहा : अल्लाह

आपका भला करे, ये तो बद्दू लोग हैं, थोड़ी-सी चीज़ पर भी ख़ुश हो जाते हैं (इतनी भारी बख़्शिश देने की क्या ज़रूरत थी !) उन्होंने कहा : इसका बाप, मेरे बाप उमर (रज़ि०) का दोस्त था। मैंने नबी (सल्ल०) को यह कहते सुना है कि यह बहुत बड़ी नेकी है कि बेटा अपने बाप के दोस्तों के घरवालों से अच्छा सुलूक करे। (हदीस : मुस्लिम)

यतीमों का ख़याल

(471) हसन बसरी (रह०) कहते हैं कि मैंने मुसलमानों (यानी नबी सल्ल० के सहाबियों को) इस दशा में देखा है कि वे अपने घरवालों और घरवालियों से कहते : ऐ मेरे घरवालो ! अपने यतीम को सबसे पहले खिलाओ, यतीम का सबसे ज़्यादा खयाल रखो।

(सहीफ़तुल-हक़)

ग़ुलामों के साथ अच्छा बर्ताव

(472) हज़रत अबू मसऊद बदरी (रज़ि०) कहते हैं कि मैं अपने एक ग़ुलाम को कोड़े से मार रहा था, अचानक मेरे पीछे दूर से किसी ने आवाज़ दी : ऐ अबू मसऊद ! तुम्हें पता होना चाहिए। मैं ग़ुस्से की वजह से समझ न पाया कि यह किसकी आवाज़ है। जब कहनेवाला क़रीब आया तो देखा कि वे नबी (सल्ल०) हैं और कह रहे हैं : अबू मसऊद ! तुम्हें पता होना चाहिए कि जितनी क़ुदरत तुम्हें इस ग़ुलाम पर हासिल है, उससे कहीं ज़्यादा क़ुदरत अल्लाह को तुमपर हासिल है। (फिर इस बेचारे को क्यों इतनी बेदर्दी से पीट रहे हो ? क्यों तुम्हें ख़ुदा का डर नहीं ?) मैंने कहा : ऐ अल्लाह के रसूल ! अब मैं किसी ग़ुलाम को कभी न मारूँगा।

एक दूसरी रिवायत में है : अबू मसऊद ने कहा : यह ग़ुलाम आज़ाद है, अल्लाह की ख़ुशी के लिए।

(हदीस : मुस्लिम, अबू दाऊद, तिरमिज़ी)

व्याख्या : ग़ुलाम को आज़ाद करने का मतलब यह है कि उसे इनसानियत के स्तर पर लाया जाए, उसे समाज में अपने बराबर समानता का दर्जा दिया जाए। इस्लाम से पहले ग़ुलामों को इंसान कहाँ समझा जाता था !

दूसरों को ख़ुद पर तरजीह देना

(473) हज़रत अब्दुल्लाह इब्ने-उमर (रज़ि०) कहते हैं कि नबी (सल्ल०) के साथियों में से एक साहब को बकरी की सिरी तोहफ़े में भेजी गई। उन्होंने कहा : मेरा फ़लाँ साथी मुझसे ज़्यादा ज़रूरतमंद है, अतः उन्होंने उनके पास भेज दी। उन साहब ने एक दूसरे साथी के बारे में बताया कि यह तोहफ़ा उन्हें दे आओ; वे ज़्यादा ज़रूरतमंद हैं। इस प्रकार बकरी की वह सिरी सात आदमियों तक पहुँचने के बाद आख़िरकार पहले आदमी के पास लौटकर आ गई। (सहीफ़तुल-हक़)

हलाल रोज़ी

(474) हज़रत आइशा (रज़ि०) कहती हैं कि मेरे वालिद अबू बक्र सिद्दीक़ (रज़ि०) का एक ग़ुलाम था जो कमाकर एक तयशुदा रक़म उन्हें देता था और वे उसे अपने काम में लाते थे। एक दिन उसने उन्हें कोई खाने की चीज़ लाकर दी और उन्होंने उसे खा लिया। खाने के बाद ग़ुलाम ने पूछा : कुछ पता भी है, क्या चीज़ आपने खाई है? उन्होंने कहा : बताओ, यह क्या है? तुम्हें कहाँ से मिली है? उसने कहा: इस्लाम क़बूल करने से पहले मैंने ज्योतिषी बनकर एक व्यक्ति की क़िस्मत का हाल बताया था। जबकि मैं ज्योतिष विद्या से बिल्कुल नावाक़िफ़ था। मैंने उसे धोखा दिया था। (इतने अरसे के बाद) अब वह मुझसे मिला और उसकी क़ीमत दी जिसे आपने अभी खाया। यह सुनकर अबू बक्र (रज़ि०) ने हलक़ में उंगली डालकर, पेट में जो कुछ था, बाहर निकाल दिया। (हदीस : बुख़ारी)

लेन-देन में खरापन

(475) हज़रत अब्दुल्लाह इब्ने ज़ुबैर (रज़ि०) कहते हैं कि मेरे बाप हज़रत ज़ुबैर ने मुझे 'जंगे-जमल' के दौरान बुलाया। मैं उनके क़रीब गया तो बोले : बेटे ! आज (हालत कुछ ऐसी ख़तरनाक है कि) या तो आदमी ज़ालिम के रूप में क़त्ल किया जाएगा या फिर मज़लूम (निर्दोष) के रूप में मारा जाएगा। ख़ुद अपने बारे में मैं समझता हूँ कि मज़लूम (बेक़ुसूर) की हैसियत से मारा जाऊँगा। आज मुझे लोगों का क़र्ज़ उतारने की फ़िक्र बहुत ज़्यादा है। तुम्हारा क्या ख़याल है कि

क्या क़र्ज़ चुकाने के बाद कुछ माल बचा रहेगा? फिर बोले : प्यारे बेटे! हमारी जायदाद बेचकर क़र्ज़ अदा कर देना...

अब्दुल्लाह कहते हैं कि वालिद के ज़िम्मे जो भी क़र्ज़ था वह इस प्रकार का नहीं था कि अपने और घरवालों पर ख़र्च करने के लिए लिया हो, बल्कि होता यह था कि लोग उनपर भरोसा करके अपनी रक़में अमानत के बतौर रखने आते, तो वालिद उनसे कहते कि मेरे पास यह रक़म अमानत के बतौर न रखो, बल्कि मेरे पास यह रक़म क़र्ज़ रहेगी ताकि तुम्हारी रक़म मारी न जाए। तुमने मेरे पास अगर इसे अमानत कहकर रखा और वह महफ़ूज़ न रह सकी तो तुम क़ानूनन इसे न ले सकोगे, अतः इसे क़र्ज़ समझो ताकि यदि नष्ट हो जाए तो तुम्हारा नुक़सान न हो। (हदीस : बुख़ारी)

तंगदस्त क़र्ज़दार के साथ नरमी

(476) हज़रत अबू क़तादा (रज़ि०) ने अपने एक क़र्ज़दार को बुलाया तो वह कहीं छुप गया। फिर उन्होंने उसे पा लिया और क़र्ज़ वापस करने की माँग की, तो उसने कहा कि हाथ एकदम ख़ाली है, क़र्ज़ अदा करने की हालत में नहीं हूँ। उन्होंने पूछा : क्या ख़ुदा की क़सम! तुम दे नहीं सकते? उसने कहा, ख़ुदा की, क़सम मैं नहीं दे सकता। तब हज़रत अबू क़तादा (रज़ि०) बोले : मैंने अल्लाह के रसूल (सल्ल०) को यह फ़रमाते सुना है कि जो क़ियामत के दुखों से नजात पाना चाहे उसे चाहिए कि तंगदस्त क़र्ज़दार को मोहलत दे या क़र्ज़ माफ़ कर दे।

(हदीस : मुस्लिम)

व्याख्या : इस हदीस में यह बात स्पष्ट नहीं है कि हज़रत अबू क़तादा (रज़ि०) ने अपने क़र्ज़दार को कुछ और समय क़र्ज़ चुकाने के लिए दिया था या माफ़ कर दिया था। लेकिन हदीस जिस अन्दाज़ से बयान हुई है उससे ऐसा लगता है कि उन्होंने अपना क़र्ज़ माफ़ कर दिया था।

दीन की राह में क़ुरबानी

(477) अब्दुल्लाह इब्ने शक़ीक़ (रह०) कहते हैं कि मैं मदीने में एक साल तक अबू हुरैरा (रज़ि०) की ख़िदमत में रहा। एक दिन जब हम हज़रत आइशा (रज़ि०) के कमरे के क़रीब बैठे थे तो उन्होंने बयान

किया कि हमने वे दिन भी देखे हैं जब हमारे जिस्म पर मोटी खुरदुरी चादरों के सिवा नरम कपड़े न थे। ऐसा भी कई बार हुआ कि कई-कई दिन बीत जाते, इतना खाना भी मौजूद न होता कि आदमी कमर सीधी कर सके। हम लोगों की हालत यह थी कि पत्थर उठाते, अपने पेट पर रखते, उसे कपड़े से बाँध देते ताकि जिस्म सीधा रहे।

(हदीस : मुस्नद अहमद)

व्याख्या : हदीस की किताब 'सहीह मुस्लिम' में जाबिर (रज़ि०) की रिवायत की हुई हदीस में कहा गया है कि हज़रत अबू उबैदा की कमान्डरी में हम जिहाद करने निकले तो वे हमें रोज़ एक खजूर देते, हम देर तक वह खजूर बच्चों की तरह चूसते, फिर पानी पी लेते और पेड़ो के पत्ते झाड़ गिराते, उन्हें पानी में भिगोते और खाते।

इसके अलावा बुख़ारी और मुस्लिम की एक रिवायत में, जिसपर दोनों किताबें सहमत हैं, सईद इब्ने अबिल आस (रज़ि०) कहते हैं कि जिहाद के सफ़र में हमारे पास काँटेदार झाड़ियों और बबूल के पत्तों के अलावा खाने के लिए कुछ और न होता था। अतएव इन्हीं चीज़ों पर हमारा गुज़ारा होता था।

इस्लाम की राह में चलते हुए ऐसा वक़्त भी आता है!!!

(478) हज़रत उमर (रज़ि०) कहते हैं कि अल्लाह के रसूल (सल्ल०) ने मुसअब इब्ने-उमैर (रज़ि०) को अपनी ओर आते देखा। वे तहमद की जगह मेंढे की खाल लपेटे हुए थे। यह देखकर नबी (सल्ल०) का दिल भर आया। फ़रमाया : तनिक इस व्यक्ति को देखो जिसके मन को अल्लाह ने इस्लाम की रोशनी से भर दिया। मैंने इन्हें मक्का में इस्लाम क़बूल करने से पहले इस हाल में देखा है कि इनके माँ-बाप इन्हें बहुत उम्दा खाने खिलाते थे। मैंने इन्हें दो सौ दिरहम का क़ीमती सूट पहने देखा है, लेकिन आज अल्लाह और उसके रसूल के प्रेम में तुम इन्हें इस हाल में देख रहे हो। (अल-मुंज़िरी तबरानी से उद्धृत)

व्याख्या : हज़रत मुसअब (रज़ि०) इस्लाम की दौलत पाकर ख़ुश हैं, उन्हें भूले से भी ऐशो-आराम की पुरानी ज़िन्दगी याद नहीं आती, यह अलग बात है कि नबी (सल्ल०) और उनके साथी उन्हें इस हाल में देखकर रो पड़ते हैं।

दीन की राह में क़ुरबानियों का पहला इनाम

(479) हज़रत अब्दुल्लाह इब्ने अम्र बिन आस (रज़ि०) कहते हैं कि नबी (सल्ल०) बद्र की लड़ाई के मौक़े पर 315 सहाबा (रज़ि०) को

साथ लेकर निकले। इस मौक़े पर आप (सल्ल०) ने यह दुआ की : ऐ अल्लाह ! ये लोग (मैदाने-जंग) की ओर पैदल जा रहे हैं, इन्हे सवारी दे। ऐ अल्लाह ! इनके तन पर कपड़े नहीं हैं, इन्हें कपड़े पहना। ऐ अल्लाह ! ये लोग भूखे हैं, इन्हें पेट भरकर खाना खिला। तो नबी (सल्ल०) की दुआ का असर यह हुआ कि अल्लाह ने मुसलमानों को फ़त्ह दी और वे मदीना इस हालत में लौटे कि उनमें से हरेक सिपाही के पास एक-दो ऊँट थे और हरेक को कपड़ा और खाने-पीने की चीज़ें मिलीं। (हदीस : अबू दाऊद)

व्याख्या : इनाम की यह पहली क़िस्त थी जो बद्र के मैदान में मिली और उसके बाद भी मिलती रही; आख़िरत में इसका जो इनाम मिलनेवाला है, उसका अन्दाज़ा इस संसार में रहते हुए नहीं किया जा सकता। तबूक की लड़ाई में पास होने के बाद उनके रब ने कहा :

"बेशक अल्लाह ने मोमिनों से उनकी जान और माल जन्नत के बदले ख़रीद लिया (क्योंकि ये लोग अपनी ख़रीद-फ़रोख़्त में खरे साबित हुए, हर इम्तिहान में सफल हुए। जान से प्यारी कोई चीज़ नहीं होती, और ये लोग वर्षों से अपनी जान हथेली पर लिए इस्लाम के दुश्मनों से लड़ते रहे हैं। मारते भी रहे और मरते भी रहे (पर पीछे नहीं हटे)। उनसे जन्नत का वादा पक्का है जिसे पूरा करना अल्लाह ने अपने ज़िम्मे ले लिया है। इस वादे का उल्लेख तौरेत में भी है, इंजील में भी है और क़ुरआन में भी है; और अल्लाह से बढ़कर अपने वादे को पूरा करनेवाला कौन हो सकता है ? अतः ऐ ईमान लानेवालो ! ख़ुश हो जाओ अपनी जान और माल की फ़रोख़्त पर, (कि ख़रीदार ने जन्नत के बदले उसे ख़रीद लिया। अब सौदा मुकम्मल हुआ।)"

(क़ुरआन सूरा तौबा, आयत : 111 का भावात्मक अनुवाद)

सहाबा के सामने केवल अल्लाह को ख़ुश करना था

(480) हज़रत अम्र इब्ने आस (रज़ि०) कहते हैं कि नबी (सल्ल०) ने मेरे पास संदेश भेजा कि अपने हथियार और ढाल पहनकर मेरे पास आ जाओ। अतः मैं हथियारबंद आप (सल्ल०) के पास हाज़िर हुआ। आप उस समय वुज़ू कर रहे थे। बोले : मैं तुम्हें एक फ़ौजी मुहिम पर भेजना चाहता हूँ। इस मुहिम से अल्लाह तुम्हें ख़ैरियत के साथ वापस लाएगा और तुम माले-ग़नीमत के साथ वापस आओगे तथा मैं इनाम

के बतौर कुछ धन भी तुम्हें दूँगा। "मैंने कहा : ऐ अल्लाह के रसूल ! मैंने माल हासिल करने के लिए हिजरत थोड़े ही की है। मैंने तो सिर्फ़ अल्लाह और रसूल के लिए हिजरत की है। आप (सल्ल०) ने कहा : अच्छा माल नेक आदमी के लिए बेहतरीन माल है।

(हदीस : मिश्कात)

व्याख्या : मतलब यह है कि यह माल लेने से तुम्हें आख़िरत में मिलनेवाला इनाम बर्बाद नहीं होगा; यह बिल्कुल हलाल और पाकीज़ा (शुद्ध) माल है। इसे लेने में तुम्हें किसी प्रकार की हिचक नहीं होनी चाहिए।

यह बात केवल अम्र इब्ने आस (रज़ि०) तक ही महदूद न थी बल्कि सहाबा के इस पाकीज़ा गिरोह के हर व्यक्ति की यही कथनी और करनी थी, उन्होंने जो काम भी किया, अल्लाह को ख़ुश करने के लिए किया, तथा जो भी क़ुरबानी दी, अल्लाह ही के लिए दी, कोई और मक़सद उनके सामने रहा ही नहीं। हर काम का मक़सद आख़िरत में मिलनेवाला बदला और इनाम ही रहा। यदि ऐसा न होता तो अल्लाह की मदद उन्हें कभी न मिलती। यही चीज़ थी जिसने हुकूमत हासिल होने के बाद उन्हें बहकने न दिया और ख़ुशहाल होते हुए भी आम ग़रीबी की ज़िन्दगी उन्होंने गुज़ारी।

इमाम मालिक (रह०) ने अपनी किताब 'मुवत्ता' में हज़रत अनस (रज़ि०) का बयान नक़ल किया है। वे कहते हैं : मैंने हज़रत उमर (रज़ि०) को उनके दौरे-हुकूमत में इस हालत में देखा है कि उनके कुर्ते में दोनों मोंढ़ों पर तीन पैबंद लगे हुए थे—एक पर एक सिले हुए (यानी एक पैबंद फटा तो दूसरा पैबंद, और दूसरा फटा तो तीसरा लगाया।)

मुसलमानों की सरबुलन्दी का राज़ और उमर (रज़ि०) का नमूना

(481) तारिक़ कहते हैं कि हज़रत उमर (रज़ि०) ख़लीफ़ा के रूप में ऊंटनी पर सवार सीरिया देश के सरकारी दौरे पर निकले। रास्ते में किसी स्थान पर नदी पार करनी थी। (पानी कम था) हज़रत उमर (रज़ि०) ऊँटनी से उतरे, अपनी जुराबें उतारकर कंधे पर रख लीं, ऊँटनी की नकेल पकड़े पानी में घुसे। अबू उबैदा (रज़ि०) ने कहा : आप अमीरुल-मोमिनीन और ख़लीफ़ा होते हुए ऐसा करते हैं? मुझे अच्छा नहीं लगता कि शहर के ईसाई बाशिंदे आपको इस हालत में देखें

(मतलब यह कि ऊँटनी छोड़कर किसी शानदार तेज-तर्रार घोड़े पर सवार हों ताकि फ़िलस्तीन के ईसाई बाशिंदे आपको तुच्छ न समझें।

उमर (रज़ि०) ने कहा : ओह, अबू उबैदा ! तुम ऐसी बात कह रहे हो ? तुम इस तरह सोचते हो ? कोई दूसरा ऐसी बात कहता तो मैं उसे बड़ी सख़्त सज़ा देता (लेकिन समाज में तुम्हारा ऊँचा स्थान है, मैं इससे वाक़िफ़ हूँ, ऐसी बात तुम्हारे मुँह से शायद बे सोचे-समझे निकल गई हो !) देखो अबू उबैदा ! हम बहुत तुच्छ और गिरे हुए लोग थे लेकिन अल्लाह ने हमें इस्लाम की बदौलत इज़्ज़त और ताक़त दी। अत: हम जब भी इस्लाम के अलावा किसी अन्य चीज़ के ज़रिए इज़्ज़त और सरबुलन्दी चाहेंगे, अल्लाह हमें रुसवा कर देगा (यानी हमारी इज़्ज़त और सरबुलन्दी को ख़त्म कर देगा, कुफ़्र व शिर्क की ग़ुलामी हमारी क़िस्मत बन जाएगी।)

(अल-मुंज़िरी मुस्तदरक हाकिम से उद्धृत)

आख़िरत की फ़िक्र और रब से मुलाक़ात का शौक़

सहाबा (रज़ि०) की मिसाली ज़िन्दगी के बारे में ऐसी अनेक हदीसें आपने पिछले पन्नों में पढ़ी होंगी जिनसे आपने यह अन्दाज़ा लगाया होगा कि उन्हें कितने सख़्त हालात से गुज़रना पड़ा है। सवाल यह है कि वह क्या चीज़ थी जिसकी वजह से मुसीबतों के तूफ़ान उन्हें अपनी जगह से हिला नहीं सके ? वह कौन सी चीज़ थी जिसने उन्हें इतने सख़्त हालात में अपने स्थान पर जमाए रखा ? आप जानते हैं कि इंसान के लिए सबसे बड़ी मार माली तंगी की होती है, मगर इस मैदान में भी उनके क़दम नहीं लड़खड़ाए। इसी के साथ दूसरा सवाल यह है कि हुकूमत हासिल हो जाने के बाद संसार की ओर लपकने से उन्हें किस चीज़ न रोके रखा ? यह, तथा इसी प्रकार के अन्य सवालों के जवाब उन हदीसों में मिलेंगे जो अब आपके सामने आ रही हैं :

(482) हज़रत अस्मा (रज़ि०) कहती हैं कि एक दिन अल्लाह के रसूल (सल्ल०) ने ख़ुतबा दिया, जिसमें क़ब्र के बारे में बातें बताईं तो मुसलमान फूट-फूटकर रोए। (हदीस : बुख़ारी)

व्याख्या : वे इसलिए रोए क्योंकि आख़िरत की पहली मंज़िल क़ब्र है, और यह नहीं पता कि क़ब्र में आदमी से जो तीन सवाल पूछे जाएँगे उनका वे ठीक-ठीक जवाब दे पाएँगे या नहीं !

(483) हज़रत आइशा (रज़ि०) को जहन्नम की याद आई तो वे रो पड़ीं। नबी (सल्ल०) ने पूछा : तुम क्यों रोईं? बोलीं : जहन्नम की याद आई तो रुलाई आ गई। ऐ अल्लाह के रसूल! क्या क़ियामत के दिन आप अपनी बीवियों को याद करेंगे? आप (सल्ल०) ने कहा : तीन मौक़े ऐसे हैं जहाँ कोई किसी को याद न करेगा : एक वह मौक़ा जब आमाल को तोला जा रहा होगा। उस वक़्त हर आदमी को अपनी पड़ी होगी कि उसके कामों का पल्ला भारी है या हल्का। दूसरा वह मौक़ा होगा जब कामों के नतीजे हाथ में दे दिए जाएँगे, या तो दाएँ हाथ में थमाया जाएगा या पीठ के पीछे से बाएँ हाथ में। तीसरा समय वह होगा जब जहन्नम पर पुलसिरात रखा जाएगा और आदमी उस पर से गुज़रेगा। (हदीस : अबू दाऊद)

(484) हज़रत अदी (रज़ि०) कहते हैं कि नबी (सल्ल०) के साथियों का यह हाल था कि जब उनके सामने उनकी तारीफ़ की जाती तो वे कहते:

"ऐ ख़ुदा! ये लोग मुझमें जो ख़ूबियाँ बताते हैं (वे मुझमें हैं ही नहीं) उनकी बुनियाद पर मेरी पकड़ न कीजिए और मेरे जिन ऐबों को ये लोग नहीं जानते, उन्हें माफ़ कर दीजिए।

(इमाम बुख़ारी : अल-अदबुल मुफ़रद)

(485) हज़रत अब्दुल्लाह इब्ने मसऊद (रज़ि०) कहते हैं कि जब (क़ुरआन की) आयत : "अल्लज़ी-न आमनू व लम्यल्बिसू ईमानुहुम बिज़ुल्मिन, उलाइ-क लहुमुल अम्नु वहुम मुहतदून" (6 : 83) उतरी तो सहाबा बेहद परेशान हुए और कहा : हममें से कौन ऐसा है जिसने अपने ऊपर ज़ुल्म नहीं किया (यानी कौन है जिससे गुनाह न हुआ हो। ऐसी हालत में हम कैसे नजात पा सकते हैं) तो नबी (सल्ल०) ने फ़रमाया कि इस आयत में ज़ुल्म से मुराद गुनाह नहीं बल्कि शिर्क (बहुदेववाद) है जैसा कि क़ुरआन की सूरा लुक़मान की आयत 13 में लुक़मान नबी (अलैहि०) ने अपने बेटे को नसीहत देते हुए कहा था : "इन्नश्शिर्क लज़ुल्मुन अज़ीम" यानी शिर्क बहुत बड़ा ज़ुल्म है।

(हदीस : मुस्नद अहमद)

व्याख्या : आयत का तर्जुमा है : वे लोग जो ईमान लाए और अपने ईमान को, ज़ुल्म (शिर्क) से घालमेल नहीं किया तो ऐसे ही लोग अल्लाह के अज़ाब से

महफ़ूज़ रहेंगे और ऐसे ही लोग सही रास्ते पर हैं और कामयाब हैं।

यह हदीस बताती है कि आख़िरत के बारे में सहाबा कितने फ़िक्रमंद रहा करते थे।

(486) हज़रत उम्मे-दरदा (रज़ि०) कहती हैं कि मैंने अपने शौहर अबू दरदा से कहा : जिस प्रकार फ़लाँ और फ़लाँ साहब माल हासिल करने के लिए कोशिश करते हैं वैसे आप क्यों नहीं करते? उन्होंने कहा : मैंने अल्लाह के रसूल (सल्ल०) को यह कहते हुए सुना है : ऐ आख़िरत की राह के साथियो! तुम्हारे आगे एक बहुत कठिन चढ़ाईवाली ऊँची पहाड़ी है जिस पर बोझ से लदे मुसाफ़िर नहीं चढ़ सकते। तो मैं चाहता हूँ कि इस संसार से हल्का-फुलका जाऊँ ताकि आसानी से उस ऊँची पहाड़ी को पार कर सकूँ।

(अल मुंज़िरी, तबरानी से उद्धृत)

(487) हज़रत रबीआ इब्ने कअब (रज़ि०) कहते हैं कि मैं दिन भर नबी (सल्ल०) की ख़िदमत में लगा रहता और रात को भी आप (सल्ल०) के पास आ जाता और यहीं सोया रहता। मैं बराबर आप (सल्ल०) की ज़बान से 'सुबहानल्लाह, सुबहानल्लाह, सुबहा-न रब्बी' के अल्फ़ाज़ सुनता, यहाँ तक कि उकता जाता या आँख लग जाती और सो जाता। एक दिन आप (सल्ल०) ने फ़रमाया : ऐ रबीआ! मुझसे कुछ माँगो, मैं तुम्हें दूँगा। मैंने अर्ज़ किया : "मुझे समय दीजिए ताकि मैं सोच सकूँ कि मुझे क्या माँगना चाहिए। अत: मैंने सोचा कि यह दुनिया तो ख़त्म हो जानेवाली है, यह माँगने की चीज़ है नहीं, इसे क्या माँगूँ? इसलिए मैंने कहा : ऐ अल्लाह के रसूल! मेरी दरख़ास्त आपसे है कि आप मेरे लिए दुआ करें कि अल्लाह मुझे जहन्नम से बचाए और जन्नत में बसाए। नबी (सल्ल०) यह सुनकर थोड़ी देर चुप रहे, फिर पूछा : यह बात तुम्हें किसने सुझाई। मैंने कहा : "यह बात मुझे किसी ने नहीं सुझाई बल्कि मुझे ख़ुद ही यह बात याद आई कि यह संसार तो ख़त्म हो जानेवाला है, अत: इसे क्या माँगूँ? मुझे पता था कि आप अल्लाह के सबसे क़रीबी और चहेते बन्दे हैं, इसलिए मैंने पसन्द किया कि आख़िरत में नजात पाने का मसला आपके सामने रखूँ और आप इसके लिए दुआ करें। नबी (सल्ल०) ने कहा : मैं ज़रूर तुम्हारे लिए दुआ करूँगा, बस तुम ज़्यादा सजदों (यानी नफ़्ल नमाज़ों) के ज़रिए (इस

मक़सद को पा लेने में) मेरी मदद करो। (हदीस :अल-मुंज़िरी)

(488) हज़रत अनस (रज़ि०) कहते हैं कि अल्लाह के रसूल (सल्ल०) और आपके साथी मदीने से निकले और मक्का के मुशरिकों से पहले ही 'बद्र' (के मैदाने-जंग में) पहुँच गए। फिर आप (सल्ल०) ने अपने मुजाहिद साथियों से फ़रमाया : खबरदार ! तुममें कोई आगे न बढ़े, मैं सबसे आगे रहूँगा और तुम मेरे पीछे रहो। मक्का के मुशरिकों की फ़ौज जब नज़दीक आई तो आप (सल्ल०) ने कहा : उस जन्नत को हासिल करने के लिए आगे बढ़ो जिसकी लम्बाई-चौड़ाई ज़मीन और आसमानों के बराबर है। उमैर (रज़ि०) बोले : क्या जन्नत की लम्बाई-चौड़ाई ज़मीन और आसमानों के बराबर है ? आप (सल्ल०) ने कहा : हाँ, ऐसा ही है। उमैर बोले : वाह-वाह ! आप (सल्ल०) ने पूछा: तुमने यह वाह-वाह क्यों कहा ? उमैर (रज़ि०) बोले : मैंने सिर्फ़ इस वजह से वाह-वाह कहा कि मुझे जन्नत में पहुँचने की आरज़ू है। आप (सल्ल०) ने कहा : तब तो तुम जन्नत में पहुँच के रहोगे। फिर उमैर ने अपने तर्कश से खजूरें निकालकर खाना शुरू कीं मगर फिर सोचा कि खाने में तो देर लगेगी। इतनी देर खाने में क्यों लगाएँ जबकि लड़ाई शुरू हो चुकी है ? यह कहकर सारी खजूरें ज़मीन पर फेंक दीं और मुश्रिकों से लड़ना शुरू कर दिया। कइयों को मौत के घाट उतारकर आख़िरकार ख़ुद शहीद हो गए। अल्लाह उनसे ख़ुश हो !

(हदीस : मुस्लिम)

व्याख्या : इस हदीस से वाज़ेह हुआ कि नबी (सल्ल०) बद्र की लड़ाई में अपनी फ़ौज की कमान ख़ुद संभाले हुए थे। ऐसा नहीं था कि आप (सल्ल०) आराम से छप्पर के साए में कामयाबी और मदद की दुआ अल्लाह से माँग रहे थे और सहाबा बिना कमांडर के ही लड़ रहे थे, बल्कि आप (सल्ल०) ख़ुद अपने फ़ौजियों की कमान संभाल रहे थे।

(489) हज़रत अनस (रज़ि०) कहते हैं कि मेरे चचा अनस बिन नज़्र, मदीने में समय पर न रहने के सबब बद्र की लड़ाई में शरीक न हो सके थे (जिसका उन्हें बड़ा मलाल था।) उन्होंने कहा : ऐ अल्लाह के रसूल ! मैं कुफ़्र और इस्लाम की पहली जंग में भाग न ले सका था। यदि फिर मुशरिकों से जंग हुई और अल्लाह ने उसमें भाग लेने का मौक़ा दिया तो अल्लाह देख लेगा कि मैं क्या करता हूँ। अत: जब

उहुद की लड़ाई बरपा हुई और मुसलमान भयभीत होकर मैदान से भागे तो अनस बिन नज़्र ने कहा : ऐ अल्लाह ! मैं मुसलमानों की इस ग़लत हरकत से तुझसे माफ़ी चाहता हूँ और मुशरिकों ने (जो ग़ैर इंसानी) हरकतें की हैं, उनसे भी अपना पल्ला झाड़ता हूँ। फिर अनस (रज़ि०) आगे बढ़े और साद इब्ने मुआज़ से मुलाक़ात हुई तो बोले : ऐ साद ! क़सम है मदद करनेवाले रब की, मैं जन्नत की ओर जा रहा हूँ; मैं उहुद (पहाड़) के उस पार से जन्नत की ख़ुशबू पा रहा हूँ।

हदीस के रावी अनस इब्ने मालिक (रज़ि०) कहते हैं कि हमने (जंग ख़त्म होने पर) अनस चचा के जिस्म पर तलवारों, भालों और तीरों के अस्सी से ज़्यादा घाव देखे। वे मुशरिकों के हाथों मारे गए थे और इस बेदर्दी से मारे गए थे कि पहचाने नहीं जा सकते थे। उनकी बहन ने हाथ की उंगलियाँ देखकर उन्हें पहचाना था। हदीस के रावी अनस (रज़ि०) कहते हैं : हमारा ख़याल है कि "मिनल् मूमिनीन. . ." वाली क़ुरआन की आयत, (सूरा अहज़ाब : 23) इनके और इन्हीं जैसे अन्य शहीदों पर फिट बैठती है। (हदीस : बुख़ारी, मुस्लिम, नसई)

व्याख्या : क़ुरआन की उपर्युक्त आयत का मतलब यह है : ये ऐसे सच्चे मुसलमान हैं जिन्होंने अल्लाह से बन्दगी का सच्चा क़ौल व क़रार किया था। तो इनमें से कुछ वे हैं जो अपनी मन्नत पूरी कर चुके (अल्लाह की राह में जान दे दी) और कुछ वे हैं जो अपनी जान देने का बड़ी बेसब्री से इंतिज़ार कर रहे हैं। इन लोगों ने अपना क़ौल व क़रार पूरा करने में ज़रा भी तब्दीली नहीं की।

(490) शद्दाद इब्ने हाद (रज़ि०) कहते हैं कि एक देहाती अरब नबी (सल्ल०) की ख़िदमत में आया, आप (सल्ल०) पर ईमान लाया और आप (सल्ल०) के साथ रहने की दरख़ास्त की। कहा : मैं हिजरत करके आपके साथ यहीं रहना चाहता हूँ। नबी (सल्ल०) ने कुछेक सहाबा (रज़ि०) को उसके बारे में हिदायत दी (कि उसका ख़्याल रखा जाए, उसके साथ अच्छा बर्ताव किया जाए।) फिर उस अरब-देहाती ने जिहाद में भाग लिया तो माले-ग़नीमत (मैदाने-जंग में हासिल माल) में उसका भी हिस्सा लगा और नबी (सल्ल०) ने उसका हिस्सा लोगों के हवाले कर दिया कि उसे दे देना। (जब माल बाँटा जा रहा था तो उस समय वहाँ वह मौजूद न था) वह ऊँट चराने चला गया था। जब वह वापस आया तो लोगों ने माले-ग़नीमत में से उसका हिस्सा उसके

हवाले किया। उसने पूछा : यह क्या है? लोगों ने कहा : यह तुम्हारा हिस्सा है, जो नबी (सल्ल०) ने दिया है। अतः वह उसे लिए हुए आपकी ख़िदमत में हाज़िर हुआ और पूछा : ऐ अल्लाह के रसूल! यह क्या है? आप (सल्ल०) ने कहा : यह तुम्हारा हिस्सा है, जो मैंने दिया है। उसने कहा : मैंने इसके लिए आपका साथ थोड़े ही दिया है। मैंने तो जिहाद में आपका साथ इसलिए दिया है कि मेरे हलक़ में दुश्मन का तीर लगे और मर जाऊँ ताकि जन्नत में दाख़िल हो सकूँ। आप (सल्ल०) ने कहा : यदि तेरी नीयत सच्ची है तो अल्लाह तेरी आरज़ू पूरी करेगा। इसके थोड़े ही दिनों बाद जिहाद छिड़ा। लोगों ने इसमें भाग लिया और वह भी उसमें भाग लेने के लिए गया। उसका शव उठाकर लोग नबी (सल्ल०) के पास लाए। उसके गले में दुश्मन का तीर लगा हुआ था। आप (सल्ल०) ने पूछा : क्या यह वही है जिसने इस तरह शहादत पाने की तमन्ना की थी? लोगों ने बताया : हाँ, यह वही व्यक्ति है। आप (सल्ल०) ने कहा : उसने अल्लाह से सच्ची आरज़ू की थी तो अल्लाह ने उसे पूरा कर दिया। फिर आप (सल्ल०) ने अपने जुब्बे (कपड़े) में उसे कफ़न दिया, उसकी नमाज़े-जनाज़ा पढ़ी और इन अल्फ़ाज़ में उसके लिए दुआ की :

"ऐ अल्लाह! यह तेरा बन्दा है। इसने तेरे लिए अपना घर-बार छोड़ा और तेरे मार्ग में शहीद हो गया। मैं इसपर गवाह हूँ।"

(हदीस : नसई)

नमाज़ तक़रीर और ख़ुतबे में संतुलन

(491) जाबिर बिन समुरा (रज़ि०) कहते है कि मैं नबी (सल्ल०) के साथ नमाज़ पढ़ता था; आप (सल्ल०) की नमाज़ भी संतुलित होती थी और तक़रीर भी जंची-तुली होती थी। (न बहुत लम्बी और न एकदम मुख़्तसर। यही हाल ख़ुतबे और तक़रीर का भी था। लम्बा-चौड़ा ख़ुतबा नहीं देते थे।) (हदीस : मुस्लिम)

अपने पीछे नमाज़ पढ़नेवालों का लिहाज़

(492) अल्लाह के रसूल (सल्ल०) ने फ़रमाया : मैं नमाज़ पढ़ाने के लिए खड़ा होता हूँ और मन करता है कि लम्बी नमाज़ पढ़ाऊँ मगर इसी बीच किसी बच्चे के रोने की आवाज़ कान में पड़ जाती है तो नमाज़ को मुख़्तसर कर देता हूँ क्योंकि मुझे यह अच्छा नहीं लगता कि नमाज़ लम्बी करके बच्चे की माँ को तकलीफ़ और परेशानी में डालूँ। (हदीस : बुख़ारी)

व्याख्या : नबी (सल्ल०) के मुबारक दौर में औरतें भी मस्जिद में आती और जमाअत से नमाज़ पढ़ती थीं। उनमें बच्चेवाली औरतें भी होती थीं। वे बच्चे को मजबूरी की हालत में साथ लाती थीं, आख़िर घर में उन्हें अकेले कैसे छोड़ सकती थीं।

इस हदीस में उन इमामों के लिए तालीम है जो नमाज़ियों की हालत से बेपरवाह होकर लम्बी नमाज़ पढ़ाते हैं।

फ़र्ज़ नमाज़ का एहतिमाम

(493) नबी (सल्ल०) सफ़र में कहीं पड़ाव डालते और रात ज़्यादा हो चुकी होती तो दाएँ हाथ पर सिर रखकर लेट जाते और यदि पौ फटने से थोड़ी ही देर पहले पड़ाव डालते तो हाथ खड़ा करके हथेली पर सिर टिका लेटते। (हदीस : मुस्लिम)

व्याख्या : हाथ खड़ा करके सिर उस पर रख लेते, ऐसा इसलिए करते कि रात भर के जागे हैं और सुबह होने में कुछ ज़्यादा देर नहीं हैं, यदि किसी करवट

लेटते हैं तो फ़ज्र की नमाज़ छूट जाने का अन्देशा है। इसलिए इस ढंग से लेटते, जिसमें आँख लगने का कोई डर नहीं है ।

नमाज़ में क़ुरआन की तिलावत

(494) नबी (सल्ल०) की बीवी उम्मे-सलमा (रज़ि०) कहती हैं कि अल्लाह के रसूल (सल्ल०) क़ुरआन ठहर-ठहर कर पढ़ते थे। 'अल्हम्दुलिल्लाहि रब्बिल-आलमीन' कहते और रुक जाते, फिर अर्रहमानिर्रहीम कहते। (हदीस : तिर्मिज़ी)

(495) 'याला' कहते है कि मैंने उम्मे-सलमा (रज़ि०) से पूछा : नबी (सल्ल०) किस तरह क़ुरआन पढ़ते थे? उन्होंने बताया कि आप (सल्ल०) बहुत साफ़ और वाज़ेह पढ़ते और हर हर्फ़ अलग सुनाई देता था। (हदीस : तिर्मिज़ी)

नबी (सल्ल०) की नमाज़

(496) नबी (सल्ल०) ने फ़रमाया : मुझे दुनिया की दो चीज़ें बेहद प्रिय हैं : अपनी पत्नियाँ और ख़ुशबू; और नमाज़ तो मेरी आँखों की ठंडक और मन का आनंद है। (हदीस : नसाई)

व्याख्या : मतलब यह है कि नमाज़ मेरी रूहानी ख़ुराक है क्योंकि नमाज़ तो असल में नाम है अल्लाह की याद का, उससे मुनाजात और हमकलामी का! यही हक़ीक़त एक हदीस में इस तरह बयान हुई है कि नबी (सल्ल०) ने हज़रत बिलाल (रज़ि०) से फ़रमाया, "अरिह्ना या बिलाल"! (ऐ बिलाल! अज़ान दो और हमें आराम पहुचाओ।)

अल्लाह का डर और पिघल जानेवाला दिल

(497) मुतर्रिफ़ (रज़ि०) कहते हैं कि मै नबी (सल्ल०) के पास पहुँचा तो देखा कि आप (सल्ल०) नमाज़ पढ़ रहे हैं और आप (सल्ल०) के सीने से इस तरह की आवाज़ निकल रही है जैसी पकती हांड़ी से आवाज़ निकलती है। (हदीस : मिशकात)

तहज्जुद और अन्य नफ़्ल नमाज़ें लम्बी पढ़ते

(498) हज़रत ज़ियाद (रज़ि०) कहते हैं कि हज़रत मुग़ीरा बयान करते थे कि नबी (सल्ल०) रात के आख़िरी पहर में (तहज्जुद) की नमाज़ इतनी देर तक पढ़ते थे कि आप (सल्ल०) के पैरों में सूजन आ जाती

थी। इस पर लोग आप (सल्ल०) से कहते कि आप क्यों इतनी तकलीफ़ उठाते हैं? तो आप (सल्ल०) उन्हें जवाब देते : क्या मैं अल्लाह का शुक्रगुज़ार बंदा न बनूँ? (हदीस : बुख़ारी)

व्याख्या : यानी जब अल्लाह ने मुझे इंसानियत का सबसे ऊँचा मर्तबा दिया है तो मुझे उसका ज़्यादा से ज़्यादा शुक्र करना ही चाहिए।

तहज्जुद की पाबन्दी

(499) हज़रत आइशा (रज़ि०) ने अब्द बिन् अबी क़ैस को नसीहत की कि देखो, तहज्जुद की नमाज़ न छोड़ना क्योंकि नबी (सल्ल०) तहज्जुद की नमाज़ नहीं छोड़ते थे। यदि आप बीमार पड़ जाते या सुस्ती महसूस करते तो बैठकर नमाज़ पढ़ लेते। (हदीस : अबू दाऊद)

नबी (सल्ल०) क़ुरआनी तालीमात का चलता-फिरता नमूना थे

(500) हज़रत आइशा (रज़ि०) कहती हैं कि अल्लाह के नबी (सल्ल०) का अख़्लाक़ क़ुरआन था। (हदीस : मुस्लिम)

व्याख्या : यानी क़ुरआन मजीद में जिन अख़्लाक़ी बातों की तालीम दी गई है वे सब आप (सल्ल०) के अन्दर पाई जाती थीं। आप (सल्ल०) उनका बेहतरीन नमूना थे।

(501) अब्दुल्लाह इब्ने अम्र इब्ने आस (रज़ि०) कहते हैं कि अल्लाह के रसूल (सल्ल०) के मिज़ाज और तरबियत में न तो बेशर्मी थी, न आप (सल्ल०) अपनी ज़बान से कभी बेशर्मी की बातें करते थे।

(हदीस : बुख़ारी, मुस्लिम)

नौकरों के साथ नबी (सल्ल०) का सुलूक

(502) हज़रत अनस (रज़ि०) का बयान है कि मैंने दस साल तक नबी (सल्ल०) की ख़िदमत की, लेकिन इस मुद्दत में कभी आप (सल्ल०) ने 'उफ़' न कहा (जो नफ़रत और बेज़ारी का कलिमा है) और यदि कभी मुझसे कोई ग़लती हो गई तो कभी आप (सल्ल०) ने यह नहीं कहा कि तुमने यह ग़लती क्यों की; और जो काम मुझे करना चाहिए था, यदि (इत्तिफ़ाक़ से) मैंने नहीं किया तो कभी यह नहीं कहा कि तुमने यह काम क्यों नहीं किया? (हदीस : बुख़ारी, मुस्लिम)

नबी (सल्ल०) हँसी-मज़ाक़ भी करते

(503) हज़रत अनस (रज़ि०) कहते हैं कि एक देहाती अरब थे, नाम उनका ज़ाहिर बिन हराम (रज़ि०) था। वे देहात की चीज़ें नबी (सल्ल०) को लाकर भेंट करते और जब वे अपने गाँव वापस होने लगते तो नबी (सल्ल०) भी मदीने की कुछ चीज़ें तोहफ़े के तौर पर उनके साथ कर देते। नबी (सल्ल०) कहते : ज़ाहिर हमारे देहाती दोस्त हैं और हम उनके शहरी दोस्त हैं। आप (सल्ल०) उनसे बड़ी मुहब्बत करते।

वे शक्लोसूरत के अच्छे न थे। एक दिन जब वे मदीना के बाज़ार में अपना देहाती सामान बेच रहे थे, नबी (सल्ल०) पीछे से आए और उन्हें अपनी गोद में ले लिया। वे नबी (सल्ल०) को देख नहीं पा रहे थे। उन्होंने कहा : कौन है? मुझे छोड़ दो। जब मुड़कर देखा कि पीछे नबी (सल्ल०) हैं तो पूरी कोशिश करने लगे कि अपनी पीठ को नबी (सल्ल०) के सीने से चिमटाए रहें। इस मौक़े पर नबी (सल्ल०) ने फ़रमाया : कौन ख़रीदता है इस ग़ुलाम को! (वे ग़ुलाम तो न थे मगर रंग काला था, हबशी ग़ुलामों की तरह) ज़ाहिर ने कहा : ऐ अल्लाह के रसूल! आप बहुत घाटे में रहेंगे। भला मुझे कौन ख़रीदेगा, और जो ख़रीदेगा वह बहुत थोड़ी क़ीमत देगा। आप (सल्ल०) ने कहा : दुनिया की नज़र में अगर कम क़ीमत वाले हो तो क्या हुआ? अल्लाह के यहाँ तुम्हारी बड़ी क़ीमत है। (हदीस : मिशकात)

अरब देहाती के साथ अच्छा सुलूक

(504) हज़रत अनस (रज़ि०) कहते हैं कि मैं अल्लाह के रसूल (सल्ल०) के साथ पैदल जा रहा था। आप (सल्ल०) मोटी किनारी की नजरान (यमन) की बुनी हुई चादर ओढ़े हुए थे। रास्ते में एक देहाती अरब मिला; उसने आप (सल्ल०) की चादर पकड़कर इतने ज़ोर से खींचा कि आप (सल्ल०) की गर्दन पर निशान पड़ गया। उसने कहा : ऐ मुहम्मद! मुझे बैतुल-माल (राज्य कोष) से कुछ दिलवाइए। आप (सल्ल०) ने उसकी ओर मुड़कर देखा तो (नाराज़ होने के बजाए) मुस्कराए और उसे बैतुल-माल से (कुछ) दिए जाने का हुक्म दिया।

(हदीस : बुख़ारी, मुस्लिम)

बच्चों से प्यार

(505) हज़रत आइशा (रज़ि०) फ़रमाती हैं कि एक देहाती अरब अल्लाह के रसूल (सल्ल०) के पास आया। (आप सल्ल० किसी बच्चे--शायद हसन रज़ि० को प्यार कर रहे थे।) उसने कहा : आप लोग बच्चों को प्यार करते हैं। हम लोग तो ऐसा नहीं करते? आप (सल्ल०) ने कहा : यदि अल्लाह ने बच्चों के साथ प्यार व मुहब्बत के जज़बे से तुम्हारे दिल को महरूम कर दिया है तो मैं इसके लिए क्या कर सकता हूँ? (हदीस : बुख़ारी-मुस्लिम)

बच्चों से मन बहलाव की बातें करना

(506) हज़रत अनस (रज़ि०) कहते हैं कि नबी (सल्ल०) हम लोगों के साथ घुल-मिलकर रहते थे (एकदम लिए-दिए नहीं रहते थे)। आप (सल्ल० इस हद तक हम लोगों से बेतकल्लुफ़ थे कि) मेरे छोटे भाई उमैर से मन बहलाव की बातें करते और कहते : उमैर, तुम्हारी चिड़िया का क्या हाल है? उसके पास एक छोटी चिड़िया थी जिससे वह खेलता था, वह मर गई थी। (हदीस : बुख़ारी-मुस्लिम)

बच्चों को चूमना

(507) नबी (सल्ल०) के पास एक बच्चा लाया गया। आप (सल्ल०) ने उसे चूमा-चाटा और फिर कहा : ये बच्चे आदमी की बुज़दिली और कंजूसी का सबब बनते हैं और ये बच्चे अल्लाह की देन हैं।

(हदीस : मिशकात)

व्याख्या : मतलब यह है कि औलाद से प्रेम होना एक फ़ितरी चीज़ है। यदि मुसलमान के ज़ेहन पर इस्लामी शिक्षाओं की छाप न पड़ी हो तो औलाद की मुहब्बत अल्लाह की राह में जान-माल की कुर्बानी देने में रुकावट बनती है।

हदीस के आख़री टुकड़े का मतलब यह है कि औलाद अल्लाह की देन और उसका इनाम है, इस पर मोमिन को अल्लाह का शुक्र अदा करना चाहिए, उसका शुक्रगुज़ार होना चाहिए। उसका शुक्रिया इस तरह अदा किया जा सकता है कि बच्चों को इस्लाम की बुनियादी तालीम का इल्म दिया जाए और उनके अनुसार किरदार बनाने के लिए उभारा जाए।

हँसी-दिल्लगी

(508) अबू हुरैरा (रज़ि०) कहते हैं कि लोगों ने ताज्जुब और हैरत से कहा : ऐ अल्लाह के रसूल ! आप हमसे हँसी-दिल्लगी की बातें करते हैं ? आप (सल्ल०) ने कहा : हाँ, लेकिन कोई ग़लत और झूठी बात नहीं कहता। (हदीस : तिरमिज़ी)

व्याख्या : आमतौर पर ऐसा देखने में आता है कि दीनी, पेशवा अपने पैरवों, मुरीदों और अक़ीदतमंदों की मजलिसो में हँसी-दिल्लगी की बातें नहीं करते। यह हदीस बताती है कि हँसी-दिल्लगी की बातें करना बुज़ुर्गी और पेशवाई के ख़िलाफ़ नहीं है।

नबी (सल्ल०) के हँसी-मज़ाक़ के दो नमूने बहुत मशहूर हैं :

(1) एक बुढ़िया से नबी (सल्ल०) ने कहा : कोई बूढ़ी औरत जन्नत में न जाएगी। यह सुनकर वह बेहद परेशान हुई तो आप (सल्ल०) ने (उसे ढाढस देते हुए) कहा : जन्नत में जानेवाले सभी लोग जवान होंगे।

(2) किसी ने नबी (सल्ल०) से ऊँट माँगा तो आप (सल्ल०) ने कहा : मैं तुम्हें ऊँटनी का बच्चा दूँगा। उसने कहा : मैं बच्चा लेकर क्या करूँगा ? आप (सल्ल०) ने कहा : हर ऊँट, ऊँटनी का ही बच्चा होता है।

नबी (सल्ल०) अपने घर में

(509) इब्ने अब्बास (रज़ि०) कहते हैं कि अल्लाह के रसूल (सल्ल०) ने फ़रमाया : तुम्हारे समाज में सबसे अच्छा व्यक्ति वह है जो अपने घरवालों के साथ अच्छा सुलूक करता हो, और मैं तुम सबके मुक़ाबले अपने घरवालों के साथ सबसे अच्छा सुलूक करनेवाला हूँ।

(हदीस : इब्ने माजा)

(510) अस्वद इब्ने यज़ीद (रज़ि०) कहते हैं कि मैंने हज़रत आइशा (रज़ि०) से सवाल किया : जब नबी (सल्ल०) घर में होते थे तो क्या करते थे ? उन्होंने कहा : आप (सल्ल०) अपने घरवालों के काम में हाथ बटाते और जब नमाज़ का समय आता तो नमाज़ के लिए निकल जाते। (हदीस :बुख़ारी)

(511) आइशा (रज़ि०) कहती हैं कि अल्लाह के रसूल (सल्ल०) अपने जूते ख़ुद टाँक लेते, अपने (फटे हुए) कपड़े सी लेते और अपने घर में वे सभी काम करते जो तुम लोग अपने घरों में करते हो। आगे उन्होंने

यह भी बताया कि नबी (सल्ल०) इंसानों में से एक इंसान थे, अपने कपड़ों से जूँ निकालते, अपनी बकरी का दूध ख़ुद दुह लेते तथा अपने दूसरे काम भी ख़ुद कर लेते। (हदीस : तिरमिज़ी)

व्याख्या : अरब की ख़ास आबोहवा और मौसम के असर से वहाँ जूँएँ बहुत पैदा होती हैं। वैसे सफ़ाई और पाकी में लोग नबी (सल्ल०) की मिसाल दिया करते थे।

नबी (सल्ल०) अपनी बीवी के जज़बात का ख़्याल रखते थे

(512) हज़रत आइशा (रज़ि०) कहती हैं कि मैंने नबी (सल्ल०) को इस हाल में देखा है कि आप अपनी चादर से आड़ कर लिया करते थे और मैं हब्शी लोगों को मस्जिद में "(जंगी) करतब" करते हुए देखती थी। आप (सल्ल०) उस वक़्त तक अपनी चादर की आड़ किए रहते जब तक मैं ख़ुद ऊब न जाती। तो ऐ लोगो! यदि तुम कमसिन लड़की से शादी करो तो उसके जज़बात और ख़्वाहिशों का ख़्याल रखो, कमसिन औरत खेल और तफ़रीह की शौक़ीन होती है।

(हदीस : बुख़ारी, मुस्लिम)

नबी (सल्ल०) अपनी वफ़ादार बीवी की याद में

(513) हज़रत आइशा (रज़ि०) कहती हैं कि नबी (सल्ल०) की बीवियों में से ख़दीज़ा को छोड़कर कोई ऐसी न थी जिस पर मुझे रश्क आता। (उनकी बात ही कुछ और थी) हालाँकि मैंने उन्हें कभी नहीं देखा, लेकिन नबी (सल्ल०) अक्सर उन्हें याद करते। और जब कभी आप बकरी ज़बह करते और उसकी बोटियाँ बनाते तो ख़दीजा (रज़ि०) की सहेलियों के यहाँ उसे भेजते। कभी-कभी मैं कह देती कि लगता है मानो ख़दीजा की तरह दुनिया में कोई औरत है ही नहीं! इसपर आप (सल्ल०) कहते : बेशक वे बहुत अच्छी औरत थीं और उनकी तो बात ही कुछ और थी, और हाँ, उनसे मुझे औलाद भी मिली थी।

(हदीस : बुख़ारी, मुस्लिम)

व्याख्या : हज़रत ख़दीजा नबी (सल्ल०) की पहली बीवी हैं। आप (सल्ल०) ने जबसे लोगों को अल्लाह की ओर बुलाना शुरू किया और अपने रसूल होने का एलान किया, हज़रत ख़दीजा ने हर मौक़े और हर मोड़ पर आप (सल्ल०) का साथ दिया। दावते-दीन की राह में आनेवाली हर तरह की कठिनाइयों और

तकलीफ़ों को हँसी-खुशी बर्दाश्त किया। कुछेक इतिहासकारों का बयान है कि नबी (सल्ल०) ने जब अपने रसूल बनाए जाने का एलान किया था, उसके आरंभिक दिनों में हज़रत ख़दीजा (रज़ि०) के पास पच्चीस हज़ार दिरहम थे। उस ज़माने के पच्चीस हज़ार दिरहम का अन्दाज़ा कीजिए। लेकिन हक़ीक़त यह है कि आठ-नौ साल में यह सारी पूँजी दावते-दीन की राह में लुटा दी। वे नौजवान जो इस्लाम क़बूल करने के जुर्म में अपने घरों से निकाल दिए जाते, वे उन सबका ख़र्चा उठातीं। ऐसी हालत में यदि नबी (सल्ल०) ऐसी वफ़ादार बीवी को ज़िन्दगी भर भुला न सके तो इसमें ताज्जुब की क्या बात है।

बीवियों का हक़ अदा करने में पूरी बराबरी

(514) आइशा (रज़ि०) कहती हैं कि अल्लाह के रसूल (सल्ल०) अपनी बीवियों के दरमियान पूरी बराबरी रखते थे और सभी प्रकार के हक़ अदा करने में न्याय और इंसाफ़ से काम लेते और अल्लाह से यह दुआ भी करते :

"ऐ अल्लाह ! न्याय और इंसाफ़ की बुनियाद पर यह बँटवारा तो मेरे बस में है जिसे मैं कर रहा हूँ, लेकिन दिल की मुहब्बत और किसी की ओर झुकाव मेरे बस से बाहर की चीज़ें हैं। अत: यदि किसी बीवी से दिल का लगाव ज़्यादा है तो उसपर मेरी पकड़ न करना।"

(हदीस : अबू दाऊद, तिरमिज़ी, नसई)

व्याख्या : इस हदीस से मालूम हुआ कि यदि किसी व्यक्ति के पास एक से अधिक बीवियाँ हों तो रोटी, कपड़ा तथा अन्य मामलों में पूरे तौर से इंसाफ़ से काम लेना चाहिए। हाँ, यदि किसी बीवी की ओर दिली झुकाव ज़्यादा हो और उसका कोई असर इंसाफ़ के साथ हक़्क़ों की अदायगी पर न पड़ता हो तो क़ियामत के दिन उससे कोई जवाबदेही इस बाबत न की जाएगी।

बीवी की ग़लती पर पूछगछ

(515) हज़रत आइशा (रज़ि०) कहती हैं कि हज़रत सफ़ीया (रज़ि०) का ऊँट बीमार हो गया, जबकि ज़ैनब (रज़ि०) के पास एक फ़ालतू सवारी मौजूद थी। नबी (सल्ल०) ने ज़ैनब (रज़ि०) से कहा : सफ़ीया को फ़ालतू सवारी दे दो। इसपर उन्होंने कहा : भला मैं उस यहूदी औरत को अपना ऊँट दूँगी ? इसपर नबी (सल्ल०) को गुस्सा आ गया और ज़ैनब (रज़ि०) से ज़ुलहिज्जा, मुहर्रम और सफ़र का कुछ हिस्सा

(लगभग तीन महीने) तक किनारा किए रहे। (हदीस : अबू दाऊद)

व्याख्या : इससे पता चला कि तीन दिन से ज़्यादा मुद्दत के लिए भी ताल्लुक़ तोड़ा जा सकता है बशर्ते कि इसमें दीनी पहलू से कोई फ़ायदा हो, जैसा कि इस हदीस में दिखाई पड़ रहा है। नबी (सल्ल०) का यह ग़ुस्सा कुछ अपने लिए न था बल्कि इस बात को लेकर था कि एक मुसलमान ने दूसरे मुसलमान को यहूदी होने का ताना क्यों दिया? नबी की एक बीवी ने दूसरी बीवी के लिए इतना गंदा शब्द मुँह से कैसे निकाला?

नबी (सल्ल०) की दरियादिली

(516) जाबिर (रज़ि०) कहते हैं कि नबी (सल्ल०) ने किसी माँगनेवाले को "न" कहकर क़भी वापस नहीं किया। (हदीस : बुख़ारी, मुस्लिम)

व्याख्या : यदि समय पर देने के लिए पास में कुछ नहीं हुआ तो आइंदा के लिए वादा कर लिया; किसी की माँग को ठुकराया नहीं।

ज़रूरतमंद की मदद की सिफ़ारिश

(517) अबू मूसा अशअरी (रज़ि०) नबी (सल्ल०) के बारे में बताते हैं कि जब आप (सल्ल०) के पास कोई ज़रूरतमंद अपनी ज़रूरत लेकर आता तो आप (सल्ल०) लोगों से कहते कि इसकी मदद के लिए सिफ़ारिश करो, इस पर तुम्हें बदला (सवाब) मिलेगा, और अल्लाह जो चाहता अपने नबी की ज़बान से फ़ैसला करता।

(हदीस : बुख़ारी, मुस्लिम)

व्याख्या : मतलब यह है कि जब नबी (सल्ल०) के पास कोई ज़रूरतमंद आता तो आप (सल्ल०) लोगों को हिदायत देते कि फ़लाँ व्यक्ति के बारे में कोई भली बात कहो, एक दूसरे को उसकी मदद के लिए उभारो; यह नेक काम है, आख़िरत में इसका बदला मिलेगा। और फिर आप उसे जो कुछ देने का फ़ैसला फ़रमाते, देते।

नबी (सल्ल०) का हँसना, मुस्कुराना

(518) हज़रत आइशा (रज़ि०) कहती हैं कि मैंने नबी (सल्ल०) को कभी इस तरह हँसते नहीं देखा कि आप (सल्ल०) के तालू दिखाई पड़ें; आप (सल्ल०) तो केवल मुस्कुराते थे (ठट्ठा मारकर नहीं हँसते थे।) (हदीस : बुख़ारी, मुस्लिम)

नबी (सल्ल०) का तरबियत का अन्दाज़

(519) अनस (रज़ि०) कहते हैं कि नबी (सल्ल०) अपनी नर्म मिज़ाजी की वजह से सीधे रूप में किसी नापसंदीदा बात पर कम ही किसी को टोकते थे। एक दिन एक व्यक्ति आप (सल्ल०) के पास आया। उसके जिस्म के किसी भाग पर पीलेपन के कुछ निशान थे (शायद : पीले रंग की कोई चीज़ इस्तेमाल की होगी जिसके निशान आप सल्ल० को दिखे)। जब वह व्यक्ति चला गया तो मजलिस में मौजूद लोगों से नबी (सल्ल०) ने कहा : यदि ये साहब इस पीलेपन को दूर कर लेते तो कितना अच्छा होता।

(इमाम बुख़ारी—अल-अदबुल-मुफ़रद)

व्याख्या : नबी (सल्ल०) ने मजलिस में मौजूद लोगों से इस उम्मीद पर यह बात कही कि इनमें से कोई भी साहब उसे बता देंगे और वह सुधार कर लेगा। यह अलग बात है कि हदीस में इसका ज़िक्र नहीं है कि आगे क्या हुआ फिर भी यह तय है कि लोगों ने उसे नबी (सल्ल०) की बात ज़रूर बताई होगी।

(520) हज़रत अब्दुल्लाह बिन उमर (रज़ि०) से रिवायत है कि एक दिन अल्लाह के रसूल (सल्ल०) अपनी बेटी फ़ातिमा (रज़ि०) के घर गए, लेकिन उनसे मुलाक़ात नहीं की और दरवाज़े से ही लौट गए। क्योंकि आप (सल्ल०) ने दरवाज़े पर रंगीन (नक़्क़ाशीदार) परदा पड़ा हुआ देखा। हालाँकि आप (सल्ल०) जब कभी सफ़र से वापस आते, सबसे पहले फ़ातिमा (रज़ि०) से मिलते। इस हदीस के रावी हज़रत अब्दुल्लाह बिन उमर (रज़ि०) कहते हैं कि जब अली (रज़ि०) घर आए और फ़ातिमा (रज़ि०) को दुखी और परेशान देखा तो परेशानी का सबब पूछा। फ़ातिमा (रज़ि०) ने बताया कि अल्लाह के रसूल (सल्ल०) हमारे यहाँ आए और दरवाज़े से ही लौट गए, मुझसे नहीं मिले। यह सुनकर हज़रत अली (रज़ि०) नबी (सल्ल०) के पास पहुँचे और कहा : ऐ अल्लाह के रसूल! फ़ातिमा बहुत दुखी हैं कि आप हमारे घर गए और दरवाज़े से ही लौट आए, फ़ातिमा से नहीं मिले। आप (सल्ल०) ने कहा : मुझे संसार के बनाव-सिंगार से क्या दिलचस्पी? मुझे रंगीन और नक़्क़ाशीदार परदों से क्या लेना-देना? यह सुनकर हज़रत अली हज़रत फ़ातिमा (रज़ि०) के पास पहुँचे और

नबी (सल्ल०) ने जो कुछ फ़रमाया था उन्हें बताया।

फ़ातिमा (रज़ि०) ने अली (रज़ि०) से कहा : जाइए, अल्लाह के रसूल (सल्ल०) से पूछिए कि इस परदे का क्या करूँ? अतएव अली (रज़ि०) आप (सल्ल०) के पास पहुँचे तो आप (सल्ल०) ने कहा : जाओ, फ़ातिमा से कहो, वह परदा फ़लाँ के घर भेज दे (ताकि औरतें उससे कुर्ता बना डालें। शायद: उस घर के लोग ज़रूरतमंद थे।)

(हदीस : मुस्नद अहमद इब्ने-हंबल)

व्याख्या : दरवाज़े पर नक़्क़ाशीदार और बेलबूटे वाले परदे लगाना शरीअत की नज़र से गुनाह नहीं है। हाँ, दुनियावी बनाव-सिंगार की ज़ेहनियत की ओर बढ़ने की अलामत ज़रूर है। नबी (सल्ल०) अपने समय के मुसलमान मर्दों और औरतों को क़ियामत तक आनेवाले मुसलमान मर्दों और औरतों के लिए नमूना बनाना चाहते थे। इसलिए आप (सल्ल०) ने इस मौक़े पर यह बता दिया कि उन्हें ये सब चीज़ें अच्छी नहीं लगतीं।

खाने-पीने के सिलसिले में नबी (सल्ल०) का नमूना

(521) हज़रत अबू हुरैरा (रज़ि०) कहते हैं कि नबी (सल्ल०) ने कभी किसी खाने में नुक़्स नहीं निकाला; अच्छा लगा तो खा लिया, नहीं तो छोड़ दिया। (हदीस : बुख़ारी-मुस्लिम)

(522) हज़रत अबू उमामा (रज़ि०) कहते हैं कि नबी (सल्ल०) जब खाना खा चुकते और दस्तरख़्वान उठा लिया जाता तो यह कहते : अलहम्दु लिल्लाहि कसीरन तय्यबन मुबारकन फ़ीही ग़ैरि मग़फ़िय्यिन वला मुवद्दइन वला मुसतग़नन अन्हु रब्बना।

तर्जुमा : अल्लाह का बड़ा शुक्र है, उसका जितना भी शुक्र अदा करें, कम है; बेहतरीन और बरकत से भरपूर शुक्र (जो हमारे दिल में रच-बस जाए), ऐसा शुक्र जो कभी हमसे अलग न हो और जिससे कभी बेपरवाह न हों। हमारे रब (यही हमारी दुआ है।)

(हदीस : बुख़ारी)

नबी (सल्ल०) की सादगी

(523) हज़रत अब्दुल्लाह इब्ने अम्र (रज़ि०) क़हते हैं कि नबी (सल्ल०) को किसी ने टेक लगाकर खाना खाते नहीं देखा (जैसा कि बादशाह

और अमीर लोग करते है, बल्कि आप (सल्ल०) उकड़ूँ बैठकर खाते थे) और कभी किसी ने यह भी नहीं देखा कि दो व्यक्ति भी आप (सल्ल०) के पीछे-पीछे चले हों (जैसा कि बादशाहों का तरीक़ा है कि वे बाड़ीगार्ड रखते हैं जो 'हटो-बचो' की आवाज़ लगाते हैं।)

(हदीस : अबू दाऊद)

(524) हज़रत क़ुदामा इब्ने-अब्दुल्लाह (रज़ि०) कहते हैं कि मैंने नबी (सल्ल०) को क़ुरबानी के दिन, भूरे रंग की ऊँटनी पर सवार 'जमरा' को कंकरी मारते देखा। न वहाँ सिपाहियों की मारपीट थी, न किसी को भगाया जा रहा था, न हटो-बचो की आवाज़ें बुलंद हो रही थीं।

(हदीस : अल-मुंजिरी, सहीह इब्ने-ख़ज़ैमा से उद्धृत)

व्याख्या : यह नबी (सल्ल०) के आख़िरी हज जो सन् 10 हिजरी में आप (सल्ल०) ने किया, का हाल बयान हो रहा है जबकि पूरा अरब देश आप (सल्ल०) के अधीन हो चुका था लेकिन शाहाना ठाट-बाट और शानो-शौकत से आप (सल्ल०) कोसों दूर थे।

बीमार की मिज़ाजपुरसी

(525) हज़रत अब्दुल्लाह इब्ने-उमर (रज़ि०) कहते हैं कि हम लोग अल्लाह के रसूल (सल्ल०) के पास बैठे थे कि इतने में अंसार का एक आदमी आया। उसने नबी (सल्ल०) को सलाम किया, फिर जाने के लिए मुड़ा तो आप (सल्ल०) ने अंसारी से पूछा : साद बिन उबादा का क्या हाल है? (वे बीमार थे।) अंसारी ने कहा : वे कुछ ठीक हैं। फिर आप (सल्ल०) ने वहाँ मौजूद लोगों से पूछा : आप लोगों में से कौन-कौन लोग उनकी बीमारपुरसी के लिए चलेंगे? अतएव आप (सल्ल०) के साथ हम भी उठ खड़े हुए, हम दस से कुछ ज़्यादा ही लोग थे। हालत यह थी कि न हमारे पैरों में जूते थे, न मोज़े, न सिर पर टोपी और न जिस्म पर क़मीज़। इसी हालत में बंजर ज़मीन में चलकर साद के घर पहुँचे। उनके पास से बीमारपुरसी करनेवाले हट गए तथा अल्लाह के रसूल (सल्ल०) और आप (सल्ल०) के साथी साद के क़रीब गए और हाल-चाल पूछा। (हदीस : मुस्लिम)

किसी की मौत पर नबी (सल्ल०) का एक ख़त

(526) हज़रत मुआज़ (रज़ि०) का एक लड़का चल बसा तो नबी

(सल्ल०) ने उन्हें लिखा (शायद वे उस समय यमन में गवर्नर थे।) ख़त का तर्जुमा यह है :

अल्लाह के नाम से जो बड़ा रहमवाला और मेहरबान है।

यह ख़त अल्लाह के रसूल, मुहम्मद (सल्ल०) की ओर से मुआज़ इब्ने जबल (रज़ि०) के नाम है। तुमपर ख़ुदा की सलामती हो ! मैं तुम्हारे साथ मिलकर अल्लाह का शुक्र और उसकी तारीफ़ करता हूँ जिसके सिवा कोई दूसरा माबूद नहीं है। इसके बाद—अल्लाह तुम्हें सब्र दे और (जो मुसीबत तुमपर आ पड़ी है, उसका) तुम्हें बदला दे, साथ ही हमें और तुम्हें अपना शुक्रगार बनने की तौफ़ीक़ दे। हमारी अपनी जान-माल और बीवी-बच्चे-ये सब अल्लाह की उम्दा नेमतें हैं और ये हमारे पास अल्लाह की रखी हुई अमानतें हैं। अल्लाह ने वफ़ात पाने वाले लड़के से तुम्हें ख़ुशी के साथ फ़ायदा उठाने का मौक़ा दिया फिर उसने उसे अपने पास बुला लिया जिस पर सब्र करके तुम बड़ा बदला पाने के हक़दार बन सकते हो। तुम्हें ख़ुदा की क़ुरबत हासिल होगी और तुमपर उसकी रहमत होगी और हिदायत मिलेगी यदि आख़िरत में बदला पाने की नीयत से इस हादसे पर तुमने सब्र किया। अतः तुम सब्र से काम लो। और देखो, ऐसा न हो कि तुम बेचैन होकर सब्र छोड़ बैठो और उस इनाम से महरूम हो जाओ और बाद में अफ़सोस करो। यक़ीन करो कि बेक़रारी और बेसब्री से कोई मरनेवाला लौट कर नहीं आता और न ही इससे ग़म दूर होता है। जो हादसा होनेवाला है, वह तो होकर ही रहेगा उसे कौन टाल सकता है ? वस्सलाम। (मआरिफ़ुल-हदीस तबरानी से उद्धृत)

किसी की मौत पर दुख ज़ाहिर करने का एक और नमूना

(527) हज़रत क़ुर्रा (रज़ि०) कहते हैं कि नबी (सल्ल०) जब मस्जिद-नबवी में बैठते तो कुछ सहाबी आप (सल्ल०) के पास आकर बैठ जाते। इन बैठनेवालों में एक साहब थे, जिनका एक छोटा बच्चा था। वे नबी (सल्ल०) के पीछे से आता, आप (सल्ल०) उसे अपने आगे बिठा लेते। फिर ऐसा हुआ कि वह बच्चा मर गया तो बच्चे के

बाप उसके ग़म में कुछ दिन तक नबी (सल्ल०) की मजलिस में नहीं आए। नबी (सल्ल०) ने पूछा : फ़लाँ व्यक्ति अब मजलिस में नहीं आता, क्या बात है? लोगों ने बताया कि उनका छोटा बच्चा जिसे आप (सल्ल०) ने देखा था, उसकी मौत हो गई (शायद: इसी वजह से वे नहीं आ रहे हैं)। नबी (सल्ल०) उनसे जाकर मिले तो बच्चे के बारे में जानकारी चाही। उन्होंने उसके मरने की ख़बर दी तो आप (सल्ल०) ने उन्हें तसल्ली दी और कहा : बताओ, तुम्हें क्या पसंद है? क्या यह चाहते हो कि वह तुम्हारी ज़िन्दगी भर जीता रहता या यह पसंद है कि वह पहले जाए और जब तुम जन्नत के दरवाज़े पर पहुँचो तो वह तुम्हारा इस्तिक़बाल करे और जन्नत का दरवाज़ा खोले? उस व्यक्ति ने कहा : ऐ अल्लाह के नबी! मुझे यह ज़्यादा अच्छा लगता है कि वह पहले जाए और जन्नत का दरवाज़ा खोले। आप (सल्ल०) ने कहा: तो तुम्हारे लिए ऐसा ही होगा। (हदीस : नसई)

नबी (सल्ल०) अपने हमसफ़रों के बीच

(528) हज़रत जाबिर (रज़ि०) कहते हैं कि अल्लाह के रसूल (सल्ल०) सफ़र में अपने क़ाफ़िले के पीछे चलते, कमज़ोरों को अपनी सवारी पर बिठा लेते और उनके लिए दुआ करते। (हदीस : अबू दाऊद)

नबी (सल्ल०) अपने फ़ौजियों के बीच

(529) हज़रत इब्ने मसऊद (रज़ि०) कहते हैं कि बद्र की लड़ाई के मौक़े पर (सवारियों की बेहद कमी थी जिसकी वजह से) एक ऊँट पर तीन आदमी होते जो (अपनी-अपनी) बारी से सवार होते। अबू लुबाबा और अली बिन अबी तालिब अल्लाह के रसूल (सल्ल०) के ऊँट में शरीक थे। जब नबी (सल्ल०) की बारी पैदल चलने की आती तो ये दोनों लोग कहते : आप सवार होकर चलें, हम दोनों पैदल चलेंगे। आप (सल्ल०) फ़रमाते : तुम दोनों मुझसे ज़्यादा ताक़तवर नहीं हो और अल्लाह के मार्ग में पैदल चलने का इनाम पाने की तुमसे ज़्यादा तलब मुझ में है। (हदीस : मिशकात)

सब्र और बर्दाश्त

(530) हज़रत अब्दुल्लाह इब्ने मसऊद (रज़ि०) कहते हैं कि अंसारियों

में से एक व्यक्ति ने एक ऐसी बात कह दी जिससे नबी (सल्ल०) गुस्सा और नाराज़ हो सकते थे। मुझसे यह सहन न हो सका और आप (सल्ल०) को वह बात जाकर बता दी। यह सुनकर आप (सल्ल०) बहुत दुखी हुए। मुझे ख़याल हुआ कि काश! यह बात मैंने आप (सल्ल०) को न बताई होती! काश, मैं आप (सल्ल०) का दिल दुखी करने का सबब न बना होता! नबी (सल्ल०) ने सुनकर कहा : मूसा (अलैहि०) को इससे कहीं ज़्यादा सताया गया पर उन्होंने सब्र किया। (मैं भी नबी हूँ, मुझे भी सब्र करना चाहिए।) इसके बाद आप (सल्ल०) ने बताया कि एक नबी को उनकी क़ौम ने झुठलाया और मार-मारकर ज़ख़्मी कर दिया तो वे अपने चेहरे से ख़ून पोंछते हुए बोले : ऐ अल्लाह! मेरी क़ौम की ग़लती माफ़ कर दे (उनपर अज़ाब न भेज; उन्हें कुछ और समय दे दे, शायद कल ईमान ले आएँ, शायद ये बिगड़े हुए ये लोग संभल जाएँ।) क्योंकि अभी, मैं क्या हूँ, इसे ये समझ नहीं पाए हैं। (हदीस : मुस्नद अहमद)

ख़तरनाक हालात में नबी (सल्ल०) हमेशा आगे रहते

(531) हज़रत बराअ् (रज़ि०) कहते हैं कि ख़ुदा की क़सम, जब लड़ाई के मैदान में घमासान का रन पड़ता था तो हम लोग नबी (सल्ल०) के ज़रिए अपना बचाव करते थे (यानी आप (सल्ल०) आगे होते, हम आप (सल्ल०) की ओट में होते) तथा हमारे दल में सबसे बहादुर, निडर और हिम्मतवाला वह व्यक्ति समझा जाता था, जो आप (सल्ल०) के साथ दुश्मन के सामने होता। (हदीस : बुख़ारी)

तरबियत के लिए ऐब को ज़ाहिर करना

(532) हज़रत आइशा (रज़ि०) कहती हैं कि अल्लाह के रसूल (सल्ल०) ने फ़रमाया : मेरा ख़्याल है कि फ़लाँ और फ़लाँ व्यक्ति हमारे दीन में से कुछ भी नहीं जानते। (हदीस : बुख़ारी)

व्याख्या : मतलब यह कि ये दोनों न तो दीन सीखते हैं और न यह जानते हैं कि दीन की माँगें क्या हैं। हज़रत आइशा (रज़ि०) ने इनके नाम ज़ाहिर नहीं किए। इस हदीस से बस इतनी बात का पता चलता है कि ये लोग दीन से बेपरवाह हैं। इस हदीस से यह भी पता चला कि भलाई और हमदर्दी के जज़्बे के साथ इज्तिमाई मामलों के ज़िम्मेदार लोग किसी ऐसे व्यक्ति के ख़िलाफ़ जो

उनकी दावत या जमाअत से वाबस्ता हो, यदि आलोचन करें तो यह ग़ीबत (पीठ पीछे बुराई) न समझी जाएगी।

साथियों के साथ सही ताल्लुक़

(533) हज़रत अब्दुल्लाह इब्ने मसऊद (रज़ि०) कहते हैं कि अल्लाह के रसूल (सल्ल०) ने फ़रमाया : मेरे साथियों में से कोई अपने किसी साथी के बारे में मुझे कुछ न बताए; मैं चाहता हूँ कि (तरबियत के लिए) मैं तुम्हारे पास इस हाल में आऊँ कि मेरा मन ग़लत जज़बात से पाक-साफ़ हो। (हदीस : अबू दाऊद)

व्याख्या : इसका मतलब यह है कि बिना छानबीन कोई किसी के बारे में मुझसे कुछ न कहे क्योंकि सभी मेरे साथी हैं। किसी के बारे में यदि मुझे कुछ बताया जाएगा तो मैं उससे असर लिए बिना न रह सकूँगा; और हो सकता है, उसके ख़िलाफ़ मेरे मन में कोई बात घर कर जाए। अतः बिना छानबीन कोई बात फ़ैलायी न जाए और न मुझ तक पहुँचाई जाए। सामूहिक व्यवस्था में सही तरीक़ा यह है कि मामले की छानबीन करो और उसके नतीजे में किसी व्यक्ति में कोई कमज़ोरी नज़र आए तो तंहाई में हमदर्दी के साथ उस कमी या कोताही को दूर करने की ओर ध्यान दिलाओ। बार-बार याद दिलाने और टोका-टाकी करने पर भी सुधार की ओर वे ध्यान न दें तब मामले को आगे बढ़ाओ, जिम्मेदारों की जानकारी में वह बात लाओ।

नबी (सल्ल०) का नर्मी का बर्ताव

(534) हज़रत आइशा (रज़ि०) कहती हैं कि अल्लाह के रसूल (सल्ल०) ने कभी किसी को अपने हाथ से नहीं मारा, न किसी बीवी को, न किसी नौकर को, न किसी और को। हाँ, जिहाद करते हुए दीन के दुश्मनों को ज़रूर मारा है। आप (सल्ल०) को व्यक्तिगत रूप में कोई तकलीफ़ पहुँचाई गई हो और आप (सल्ल०) ने उसका बदला लिया हो, ऐसा कभी नहीं हुआ। हाँ, जब कोई व्यक्ति अल्लाह के हुक्म की खुल्लम-खुल्ला नाफ़रमानी करता तो उससे आप (सल्ल०) अल्लाह वास्ते ज़रूर बदला लेते (यानी सज़ा देते)। (हदीस : मुस्लिम)

मामलात में सफ़ाई

(535) हज़रत अद्दा इब्ने ख़ालिद (रज़ि०) कहते हैं कि अल्लाह के रसूल (सल्ल०) ने मेरे लिए एक दस्तावेज़ लिखी (जिसका तर्जुमा है :)

अद्दा बिन ख़ालिद ने अल्लाह के रसूल मुहम्मद से एक ग़ुलाम ख़रीदा, जिसमें न कोई जिस्मानी ख़राबी है, न अख़्लाक़ी ख़राबी और बुराई है और न ही इस मामले में कोई धोखाधड़ी की गई है। यह एक मुस्लिम की दूसरे मुस्लिम के हाथ की गई बिक्री है। (हदीस : तिरमिज़ी)

पैग़म्बरी से पहले मामले की सफ़ाई

(536) हज़रत सायब (रज़ि०) ने नबी (सल्ल०) से कहा : (इस्लाम से पहले) जाहिलियत के दौर में हमारा और आपका साझे में कारोबार था। हमने पाया कि आप बेहतरीन भागीदार (पार्टनर) हैं। न तो कभी आपने धोखाधड़ी से काम लिया, न आपने कभी मुझसे झगड़ा किया (जैसा कि कारोबारी साझेदार आपस में किया करते हैं।)

(हदीस : अबू दाऊद)

व्याख्या : पैग़म्बरी से पहले के दौर में नबी (सल्ल०) के बेहतरीन किरदार की बाबत यह एक ग़ैर मुस्लिम की गवाही है जिसे वह इस्लाम क़बूल करने के बाद पेश कर रहा है।

क़ियामत के दिन बदला लेने का अंदेशा

(537) हज़रत उम्मे-सलमा (रज़ि०) कहती हैं कि नबी (सल्ल०) उनके यहाँ बैठे हुए थे। आप (सल्ल०) ने नौकरानी को बुलाया। उसने आने में देर लगाई तो आप (सल्ल०) के चेहरे से ग़ुस्सा दिखने लगा। उम्मे-सलमा (रज़ि०) ने परदे से बाहर झाँककर देखा तो वह खेल रही थी। उन्होंने उसे बुलाया तो आप (सल्ल०) ने फ़रमाया : अगर क़ियामत के दिन तेरे बदला लेने का मुझे अंदेशा न होता तो मैं तुझे इस मिसवाक से मारता। उस समय आप (सल्ल०) के हाथ में मिसवाक थी। (इमाम बुख़ारी—अल-अदबुल-मुफ़रद)

व्याख्या : नबी (सल्ल०) को यह ग़ुस्सा अपने लिए आया था, कि नौकरानी आख़िर बुलाने पर क्यों नहीं आई। इस हालत में उसे सज़ा देने में इसका अंदेशा था कि आख़िरत में इस सिलसिले में कहीं जवाबदेही न करनी पड़ जाए। अतः आप (सल्ल०) ने उसे सज़ा नहीं दी। इससे पहले वह हदीस आ चुकी है कि जो व्यक्ति अपने ग़ुलाम को नाहक़ एक कोड़ा भी मारेगा क़ियामत के दिन उससे बदला लिया जाएगा। इससे पहले वह हदीस आ चुकी है जिसमें बताया गया है कि नबी (सल्ल०) ने निजी कारणों से किसी से बदला नहीं लिया।

बन्दों के हक़ अदा करने की अहमियत

(538) हज़रत अबू हुरैरा (रज़ि०) कहते हैं कि अल्लाह के रसूल (सल्ल०) ने अपने रब से यह कहा : ऐ अल्लाह ! मैंने तुझसे एक वादा ले लिया है (कि मेरी दुआ तू क़बूल करेगा) जिससे पीछे तू हरगिज़ न हटेगा। मैं आख़िरकार इंसान ही हूँ, तो जिस किसी मुसलमान को मैंने नाहक़ तक़लीफ़देह बात कही हो, या बुरा-भला कहा हो, उसे फटकार लगाई हो, उसे कोड़े मारे हों, तो मेरे इस अमल को उस मज़लूम के लिए क़ियामत के दिन अपनी रहमत, मग़फ़िरत और क़ुरबत का ज़रिया बना दे। (हदीस : बुख़ारी, मुस्लिम)

व्याख्या : बन्दों के हक़ की अहमियत का इस हदीस से अनुमान लगाया जा सकता है। हर प्रकार की ग़लतियों और गुनाहों से पाक नबी भी अपने पालनहार से यह दुआ करता है कि अगर उसने किसी को तकलीफ़ दी हो, मारा-पीटा हो और निश्चित रूप से उस मज़लूम का पता नहीं कि उससे माफ़ी माँग ली जाए, तो उसके हक़ में मासूम नबी यह दुआ कर रहे हैं कि ऐ अल्लाह ! इस ज़ुल्म को उस मज़लूम व्यक्ति के लिए रहमत और मग़फ़िरत का ज़रिआ बना दे। यहाँ पर यह क़िस्सा भी सुनने लायक़ है जो नबी (सल्ल०) की ज़िन्दगी के आख़िरी समय का है जब नबी (सल्ल०) को तेज़ बुख़ार चढ़ा हुआ है। सिर में बहुत दर्द है जिससे बचाव के लिए सिर में पट्टी बांध रखी है ऐसी हालत में आप (सल्ल०) अपने चचेरे भाई फ़ज़्ल इब्ने-अब्बास से कहते हैं कि मुझे ले चल कर मस्जिद के मेंम्बर (स्टेज) पर बिठाओ और एलान कर दो कि मैं कुछ कहना चाहता हूँ। एक तो यूँ ही लोग आप (सल्ल०) की बीमारी का हाल सुनकर परेशान हैं। इस एलान के बाद मदीने का कौन ऐसा व्यक्ति है जो आने से रह गया होगा। जब सारे लोग इकट्ठा हो गए तो अल्लाह की हम्दो-सना (तारीफ़ व शुक्र) के बाद आप (सल्ल०) ने फ़रमाया : मैं तुम्हारे बीच से जल्द चला जानेवाला हूँ तो जिस किसी की पीठ पर मैंने कोड़ा मारा है वह अपना बदला ले ले; मुहम्मद की यह पीठ हाज़िर है। और जिस किसी को मैंने नाहक़ बुरा-भला कहा हो तो मैं यहाँ मौजूद हूँ; वह आए और अपना बदला ले ले। जिस किसी का मेरे ज़िम्मे कोई माल बक़ाया हो तो वह मुझसे वुसूल कर ले ओर मेरी ओर से दुश्मनी का अन्देशा न करे (कि आगे चलकर मैं उसकी कसर निकालूँगा) क्योंकि यह मिज़ाज मेरे नबूवत के मंसब के ख़िलाफ़ है। तुम्हारे बीच मेरा सब से प्रिय व्यक्ति वह है जो मुझसे यहीं दुनिया में अपना हक़ वुसूल कर ले या दिल से उसे माफ़ कर दे ताकि मैं अपने रब के पास ख़ुश-ख़ुश जाऊँ। इसके बाद आप (सल्ल०)

ने फ़रमाया : ऐ लोगो ! जिसने किसी का हक़ दबा लिया हो वह उसे लौटा दे और वह संसार में बदनाम हो जाने से झिझक न करे। यदि वह ऐसा नहीं करता है तो वह आख़िरत में बदनाम और रुसवा होने के लिए तैयार रहे। जहाँ की बदनामी संसार की बदनामी से कही ज़्यादा सख़्त और ज़्यादा होगी।

दीन का काम करनेवालों की माली हालत

(539) हज़रत सह्ल (रज़ि०) कहते हैं कि अल्लाह के रसूल (सल्ल०) ने पैग़म्बर बनाए जाने के बाद से ज़िन्दगी के आख़िर तक मैदा-आटा नहीं देखा। वे आगे यह भी कहते हैं कि नबी बनाए जाने से लेकर मरते दम तक आप (सल्ल०) ने छना हुआ आटा नहीं देखा। जब उनसे पूछा गया कि बिना छने हुए जौ का आटा आप लोग कैसे खाते थे, तो सह्ल (रज़ि०) ने जवाब दिया : हम जौ पीसते थे और मुँह से आटे पर फूँक मारते थे। थोड़ी बहुत भूसी उड़ जाती थी। फिर उसे गूँधकर रोटी पका लेते थे। (हदीस : बुख़ारी)

व्याख्या : सवाल यह है कि (नबूवत के एलान के बाद) नबी (सल्ल०) ने मैदे का आटा क्यों नहीं देखा? छने हुए आटे की रोटी क्यों नहीं खाई? क्या आप (सल्ल०) को गेंहू मयस्सर नहीं था? इन सारे सवालों का जवाब यह है कि मिलने को तो आप (सल्ल०) को सब कुछ मिलता था लेकिन आप (सल्ल०) ने ख़ुद अपने लिए इसे पसंद नहीं किया, इसलिए कि उम्मत (मुसलमानों) को आप सादगी की तालीम देना चाहते थे और ऐशो-इशरत से उन्हें दूर रखना चाहते थे। यहाँ यह बात भी समझ लेने की है कि जो लोग दीन-इस्लाम का मुबारक काम करने उठते हैं उन्हें मुहताजी और मुफ़्लिसी से भी दोचार होना पड़ सकता है, पिछली ज़िन्दगी के मेयार को नीचा करना पड़ सकता है तथा भूख-प्यास और अनेकों आज़माइशों का सामना करना पड़ सकता है। ग़ौरतलब है कि जब नबी (सल्ल०) और उनके साथियों के लिए अल्लाह का दस्तूर नहीं बदला तो फिर इस्लाम की दावत देने वाले किसी तबक़े के लिए अल्लाह का दस्तूर कैसे बदल सकता है?

(540) हज़रत नोमान (रज़ि०) कहते हैं कि हज़रत उमर (रज़ि०) ने लोगों की माली ख़ुशहाली की चर्चा करते हुए कहा : आज माल—दौलत की कितनी ज़्यादती है और कल हाल यह था कि मैंने अल्लाह के रसूल (सल्ल०) को देखा कि पूरा दिन बीत जाता, भूख से बेचैन हो जाते, लेकिन रद्दी खजूर भी इतनी न मिलती थी कि जिससे पेट भर सकते। (हदीस : मुस्लिम)

व्याख्या : यह हालत हर ज़माने में हक़ की ओर बुलाने का काम करनेवालों

को पेश आ सकती हैं।

(541) हज़रत अबू हुरैरा (रज़ि०) कहते हैं कि नबी (सल्ल०) के घरवालों की हालत कुछ ऐसी थी कि महीनों बीत जाते, घर में न चिराग़ जलता और न चूल्हा जलाने की नौबत आती। यदि थोड़ा-सा तेल कहीं से मिल भी जाता तो उसे सिर में लगा लेते।

(अल-मुंज़िरी, भाग 4)

व्याख्या : यह उस समय की बात है जब कुफ़्र और इस्लाम की कशमकश का दौर चल रहा था। और खजूर और पानी पर गुज़ारा करना पड़ता था। यह तो खाने-पीने की बात थी; पहनावे की हालत क्या थी—इसका हाल आगेवाली हदीस में पढ़िए।

(542) हज़रत शिफ़ा बिन्त अब्दुल्लाह (रज़ि०) कहती हैं कि मैं अल्लाह के रसूल (सल्ल०) के पास आई ताकि कुछ (रुपया-पैसा) मिल जाए परन्तु आप (सल्ल०) ने कुछ भी दे सकने में लाचारी ज़ाहिर की, तो मैं इस पर नाराज़ हो गई। इतने में नमाज़ का वक़्त हो गया। आप (सल्ल०) मस्जिद गए और मैं अपनी लड़की के यहाँ चली आई, जिसका शुरहबील (नामी व्यक्ति) के साथ विवाह हुआ था। देखा, शुरहबील घर में मौजूद हैं। मैंने उनसे कहा : तुम घर में पड़े हो और उधर जमाअत से नमाज़ पढ़ने का वक़्त हो गया है? उन्होंने कहा : ऐ ख़ाला (सास)! मुझे मलामत न कीजिए। (बात असल में यह है कि) मेरे पास एक ही कपड़ा था, जिसे नबी (सल्ल०) मंगनी माँगकर ले गए। (आप सल्ल० के पास कपड़े न थे, नमाज़ के लिए मस्जिद कैसे जाते? इसलिए मैंने दे दिया)।

शिफ़ा कहती हैं कि मैंने मन ही मन में कहा : मेरे माँ-बाप नबी (सल्ल०) पर निछावर हों, मैं आज (बिला वजह) ही उन पर बिगड़ रही थी। उनकी इस हालत का मुझे पता न था। शुरहबील कहते हैं कि हमारे पास (वह) एक ही कपड़ा था जिसमें हमने पैवंद लगा रखा था।

(अल-मुंजिरी तबरानी व बैहक़ी से उद्धृत)

सादगी का नमूना

(543) हज़रत अब्दुल्लाह इब्ने मसऊद (रज़ि०) कहते हैं कि अल्लाह के रसूल (सल्ल०) एक चटाई पर सोए। जब आप उठे तो चटाई के निशान आप (सल्ल०) के पहलू में पड़े हुए थे। हमने अर्ज़ किया कि हम आपके लिए एक गद्दा बना दें तो अच्छा रहेगा। आप (सल्ल०) ने कहा : मुझे संसार से क्या लेना-देना ? मैं तो इस दुनिया में उस मुसाफ़िर जैसा हूँ जो किसी पेड़ के नीचे थोड़ी देर आराम करता है फिर पेड़ और उसकी छाँव को छोड़कर अपनी मंज़िल की ओर चल पड़ता है। (हदीस : तिरमिज़ी)

व्याख्या : यह उस समय की बात है जब कुफ़्र और इस्लाम की कशमकश का दौर ख़त्म हो चुका था। जाहिलियत और जाहिली निज़ाम दम तोड़ चुका था और इस्लाम और मुसलमानों के हाथ में पूरे तौर से हुकूमत आ चुकी थी। माली ख़ुशहाली अपनी चरम सीमा को पहुँच चुकी थी।

(544) हज़रत अनस (रज़ि०) कहते हैं कि नबी (सल्ल०) ने एक पुराने हौदज पर फटी-पुरानी चादर में हज किया जो चार दिरहम या उससे भी कम क़ीमत की रही होगी। (हदीस : तिरमिज़ी)

व्याख्या : यह नबी (सल्ल०) के आख़िरी हज (हज्जतुल-विदा 10 हि०/632 ई०) के मौक़े पर आप (सल्ल०) की सादगी का हाल बयान किया जा रहा है जबकि पूरा देश इस्लाम के अधीन हो गया था और नबी (सल्ल०) उसके हुक्मराँ थे।

(545) हज़रत उमर इब्ने हारिस (रज़ि०) कहते हैं कि अल्लाह के रसूल (सल्ल०) ने संसार से विदा लेते समय न दिरहम छोड़ा न दीनार, न ग़ुलाम छोड़ा न लौंडी, न और कोई चीज़ ! सिवाय सफ़ेद रंग की मादा खच्चर के जिसपर आप (सल्ल०) सवारी करते थे। इसके अलावा अपना निजी हथियार तथा कुछ ज़मीन, और उसे भी आप (सल्ल०) ने अल्लाह के मार्ग में सदक़ा कर दिया था। (हदीस : बुख़ारी)

इस्लाम की दावत देनेवालों की आज़माइश

(546) हज़रत अनस (रज़ि०) कहते हैं कि अल्लाह के रसूल (सल्ल०) ने फ़रमाया : अल्लाह के मार्ग पर चलने की दावत देने की वजह से मुझे जितना डराया और सताया गया, किसी अन्य को नहीं सताया गया, और) इस राह में मुझे जितनी तकलीफ़ें दी गईं, किसी और को नहीं दी गईं। तीस दिन और तीस रातें तो मुझपर ऐसी गुज़रीं कि मेरे तथा मेरे हमसफ़र बिलाल के पास खाने-पीने की कोई भी चीज़ न थी सिवाय उस थोड़ी सी चीज़ के जिसे बिलाल अपनी बग़ल में दबाए हुए थे। (हदीस : तिरमिज़ी)

व्याख्या : शायद यह क़िस्सा तायफ़ के दावती-सफ़र का है जब वहाँ के लोगों को अल्लाह के दीन का पैग़ाम पहुँचाने के नतीजे में नबी (सल्ल०) को तरह-तरह की परेशानियाँ झेलनी पड़ी थीं। इस सफ़र में थोड़ी सी खजूरें छोड़कर कोई अन्य खाने की चीज़ आप (सल्ल०) के पास न थी।

(547) हज़रत काब इब्ने उजरा (रज़ि०) कहते हैं कि मैं नबी (सल्ल०) की ख़िदमत में हाज़िर हुआ। देखा कि आप (सल्ल०) का चेहरा उतरा हुआ है। मैंने पूछा : मेरा बाप आप पर क़ुर्बान, आपके चेहरे का रंग फीका क्यों पड़ गया है? बोले : तीन दिन हो गए, पेट में एक दाना भी नहीं गया है। (यह सुनकर काब परेशान हो गए। अपने पास तो कुछ था नहीं जो आप (सल्ल०) की सेवा में लाकर हाज़िर कर देते) काब कहते हैं कि मैं फ़ौरन आप (सल्ल०) के पास से निकला कि कुछ इन्तिज़ाम करूँ। देखा, एक यहूदी अपने ऊँटों को पिलाने के लिए पानी भर रहा है। अत: उससे हर डोल के बदले एक खजूर पर मामला तय करके मैं डोल भरने लगा। इस प्रकार मुझे बहुत-सी खजूरें मिलीं। मैं उन्हें लिए हुए नबी (सल्ल०) के पास आया और हाज़िर कर दिया। आप (सल्ल०) ने पूछा : काब! ये खजूरें कहाँ से मिल गईं? मैंने तफ़्सील से पूरी कहानी सुनाई। आप (सल्ल०) ने पूछा : ऐ काब! क्या तुम्हें मुझसे प्रेम है? मैंने अर्ज़ किया : मेरे माँ-बाप आप पर क़ुर्बान हों। हाँ, मुझे आपसे प्रेम है। आप (सल्ल०) ने कहा : जो लोग मुझसे मुहब्बत करते हैं, उनकी ओर ग़रीबी और कंगाली इस तेज़ी से लपकती है जैसे बाढ़ का पानी ढालू ज़मीन की ओर बढ़ता है। ऐ काब! तुम्हें भी सख़्त आज़माइशों से गुज़रना पड़ेगा। इसलिए

तंगदस्ती और फटेहाली का सामना करने तथा आज़माइश की घड़ी में सत्य पर डटे रहने के लिए अभी से तैयार रहो।

(अल-मुंज़िरी तबरानी से उद्धृत)

व्याख्या : जिस तैयारी का मशविरा यहाँ नबी (सल्ल०) ने दिया है वह है अल्लाह से प्रेम, आख़िरत की फ़िक्र, पूछताछ का डर, जहन्नम का भय, जन्नत का शौक़ और मेहरबान पालनहार से मिलने की ख़ाहिश, जो हर वक़्त बेचैन किए रहे।

नव-मुस्लिमों की दुआ

(548) अबू मालिक अशजई अपने बाप से रिवायत करते हैं, उन्होंने कहा कि नबी (सल्ल०) नव-मुस्लिमों को नमाज़ का तरीक़ा सिखाते और फिर यह दुआ बताते :

ऐ अल्लाह ! मेरे सारे गुनाह माफ़ कर दे, मुझ पर रहम कर, मुझे हक़ पर चला, मुझे दीनी, अख़्लाक़ी और जिसमानी तौर पर सेहतमंद बना तथा मुझे रोज़ी दे। (हदीस : मुस्लिम)

सोते समय की दुआ

(549) हज़रत अबू हुरैरा (रज़ि०) कहते हैं कि जब नबी (सल्ल०) रात को सोने के लिए बिस्तर पर जाते तो दायाँ हाथ अपने गाल के नीचे रखते, फिर यह दुआ माँगते :

ऐ मेरे रब ! तेरे नाम से मैंने बिस्तर पर अपना पहलू रखा, और तेरे ही नाम के साथ अपना पहलू बिस्तर से उठाऊँगा। यदि तू नींद की हालत में मेरी रूह क़ब्ज़ कर ले तो मुझपर रहम करना और यदि ज़िन्दा रहने का कुछ और मौक़ा दे तो मेरी देखभाल और हिफ़ाज़त करना—उसी प्रकार जैसे तू अपने नेक बन्दों की हिफ़ाज़त करता है।

(हदीस : बुख़ारी)

व्याख्या : यानी अगर मैं सुबह ज़िन्दा उठूँ तो मुझे अपनी हिफ़ाज़त से महरूम न करना। मुझसे कोई ऐसा काम न हो जिसके सबब इंसान तेरी हिफ़ाज़त और मेहरबानी से महरूम हो जाता है। साथ ही मुझे ऐसे नेक कामों के करने की ताक़त दे जो तेरे नेक बंदों को हासिल होती है।

नबी (सल्ल०) जिन चीज़ों से पनाह माँगते थे

(550) अनस (रज़ि०) कहते हैं कि नबी (सल्ल०) यह दुआ किया करते थे :

तर्जुमा : ऐ अल्लाह ! मैं तेरी पनाह माँगता हूँ परेशानी से, दुखों से, बेबसी से, सुस्ती और काहिली से, क़र्ज़ के बोझ से और बुरे लोगों के चंगुल में फँसने (और उनके दबाव में आने से)।

(हदीस : बुख़ारी, मुस्लिम)

व्याख्या : अल्लाह की पनाह चाहने का मतलब यह है कि बंदा अपनी कमज़ोरी और बेबसी का एहसास करता है। वह समझता है कि मैं कमज़ोर हूँ इसलिए अपने ताक़तवर मालिक और सब पर अपना ग़लबा रखनेवाले रब से ही दुआ करता है कि आनेवाली परेशानियों से बचाए तथा पेरशानी और मुसीबत आने पर जो रंज और दुख होता है उससे भी बचाए। इसी प्रकार आजिज़ी और बेबसी से तथा काहिली और सुस्ती से भी बचाइए, क़र्ज़ के बोझ से नजात दीजिए और बुरे लोगों के रोब-दाब और उनकी धौंस में आने से बचाइए।

(551) हज़रत इब्ने उमर (रज़ि०) कहते हैं कि हबशा (इथोपिया) से एक व्यक्ति नबी (सल्ल०) की ख़िदमत में हाज़िर हुआ और अर्ज़ किया : ऐ अल्लाह के रसूल ! आपको दो वजहों से हम लोगों पर फ़ज़ीलत हासिल है—(1) रंग (2) नुबूवत। तो आप यह बताइए कि यदि मैं ठीक उन चीज़ों पर ईमान ले आऊँ जिनपर आपका ईमान है और मैं वही काम करूँ जो आप करते हैं तो क्या मैं जन्नत में आपके साथ रहूँगा ?

नबी (सल्ल०) का जवाब था : जिसने भी ला इला—ह इल्लल्लाह कह दिया उसके लिए अल्लाह के यहाँ जन्नत का वादा है।

हबशी ने फिर पूछा : ऐ अल्लाह के रसूल ! क्या मेरी आँखें जन्नत में वही सब कुछ देख सकेंगीं जो आपकी आँखें देखेंगी ?

आप (सल्ल०) ने कहा : हाँ।

इतना सुनना था कि हबशी रो पड़ा और देखते ही देखते उसकी रूह परवाज़ कर गई।

इब्ने-उमर रज़ि० (हदीस के रावी) कहते हैं कि मैंने अल्लाह के रसूल (सल्ल०) को उसे क़ब्र में उतारते हुए देखा। (अल-मुंज़िरी)